

UNIVERSAL  
LIBRARY

**OU\_178858**

UNIVERSAL  
LIBRARY





-11-1-68—5,000.

## OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

53/K 146

Accession No. H 2 : 2 2

25/10/68 (25/2) 9/18

25/10/68

Book should be returned on or before the date last marked below.





कान्त-साहित्य-सदन

भडुवरिथा, भिर्जापुर



# ଗାତେଲା

ସଂଘ କୁଶବାହୀ କାନ୍ତ

प्रकाशक  
त्रिलोक कुशवाहा  
क्रान्त साहित्य सदन  
महुवरिया, मिर्जापुर

●  
आठवाँ संस्करण  
तीन रुपया पचास नया पैसा

●  
मुद्रक  
चिनगारी प्रेस, वाराणसी ।

**‘तुरज’ के**



धौंय !....धौंय !....

“पकड़ो !....उधर गया, उधर....।”

धौंय !....

चीखकर एक सिपाही लुढ़क गया ।

“फायर !....” स्वर किसी अफसर का था ।

दुम्भ !....धौंय !....दुम्भ....!

रात्रि के अन्धकार में सैकड़ों रायफलों गरज उठीं, मन्द समीरण का कलेजा बारूद के धुयें से भर गया । घोंसले में सोये हुए पंखी बाहर निकल कर भयभीत हो उड़ चले । जमीन पर गिरे हुए सूखे पत्ते सिगाहियों की भगदड़ से परीशान हो उठे ।

×

×

×

“सार्जेंट !....”

“यस सर !....”

“किधर गया ?” यह थे सुपरिण्टेंडेंट-पुलिस मिस्टर शर्मा ।

“इधर ही तो आया था सर !....” यह था पुलिस सार्जेंट

“देखो, भागने न पावे....चाहे जिन्दा, चाहे मुर्दा, हमें उसको पकड़ना ही है आज....बड़ा परीशान कर रक्खा है बेइमान ने....”

“हम लोग पूरी कोशिश कर रहे हैं सर !”—रामलाल ने कहा—“हवा की मजाल नहीं बिना टकराये निकल जाय....”

“शाबाश !”—मिस्टर शर्मा बोले—“इनाम लेना हो तो हथेली पर जान लेकर खोजो....दस हजार कैश, पुलिस का ऊँचा ओहदा समझे ?”

“समझ गया सर !....

धौंय !....धौंय !....

“वह उधर गया....मैं देखता हूँ, तुम यहीं ठहरो सार्जेंट !”

मिस्टर शर्मा हाथ में भरी रिवाल्वर लिए दौड़े ।

सार्जेंट रामलाल खोजती आँखों से अन्धकार में इधर-उधर देखता रहा । पीछे की भाड़ी ज़रा-सी खड़की और जबतक रामलाल की रायफल उस ओर घूमे, तबतक उसकी गर्दन में किसी के रिवाल्वर की नली आ लगी और धीमी किन्तु मजबूत आवाज़ आई—  
“सार्जेंट रामलाल ! चुपचाप हाथ ऊपर कर दो....सीधे खड़े रहो... मुँह से ज़रा भी आवाज़ निकली कि मेरे रिवाल्वर की गोली और तुम्हारी जान साथ ही निकलेगी....”

रामलाल परीशान ! आक्रमणकारी की सूरत भी वह नहीं देख सकता था । जान लेने को तैयार रिवाल्वर उसकी गर्दन पर था । अन्धकार तो इतना था कि रामलाल की जान चुपचाप निकल जाय, और कोई देख भी न सके ।

दस हजार का इनाम और ऊँचा ओहदा !

एस० पी० मिस्टर शर्मा के ये वाक्य रामलाल के कानों में कीड़े बन कर रेंग रहे थे । वह क्रान्तिकारी, जिसके पीछे सारे देश की पुलिस परीशान थी, उसके पीछे खड़ा था और उसका रिवाल्वर

रामलाल की गर्दन छू कर कह रहा था जैसे—‘इन्सान की जान रुपयों और ओहदे से ज्यादा कीमती है।’

क्या करे रामलाल ! अपनी जान सभी को प्यारी होती है। जान रहे तो रुपये और ओहदे काम आ सकते हैं, नहीं तो सारी चीजें बेकाम, व्यर्थ !

“तुम कौन हो युवक ?”—रामलाल ने पूछा।

“यही तो सरकार भी जानना चाहती है”—पीछे से युवक ने कहा, जिसका सारा शरीर ग्रेट कोट से ढका था—“तभी तो दस हजार कैश और पुलिस का ऊँचा ओहदा !.... बड़ी आसानी से पूछ रहे हो तुम मेरा परिचय, जैसे इतना बड़ा इनाम स्वाती की बूँद बन कर तुम्हारे चातक मुख में आ ही पड़ेगा....”

“यह बात नहीं है युवक !.... मैं तुम्हारी बहादुरी का लोहा मानता हूँ....”

“तुम्हीं क्यों, सारी गोरी सरकार मानती है....”

“तुम्हारे जैसा आदमी अगर पुलिस में हो तो बड़ी जल्दी आस्मान छूले.... तुम क्यों नहीं....”

“चुप रहो तुम सार्जेंट रामलाल !”—युवक का स्वर कुछ तीखा था—“बहादुरों को भौंकने की आदत नहीं होती, वे हाथी की तरह चुपचाप चलते हैं.... भौंकना तुम जैसे कुत्तों को ही मुबारक हो....”

“युवक ! तुम्हारी जबान बड़ी खतरनाक है....”

“मगर अपने गले पर रखे हुए इस रिवाल्वर का खतरा भी मत भूलो और जरा धीरे-धीरे बोलो.... जानते नहीं, एक कुत्ते का भौंकना सुनकर दूसरे कुत्ते भी.... ठीक से खड़े हो जाओ, शायद मिस्टर शर्मा आ रहे हैं। याद रखो, जरा भी जुम्बिश खाई तो खोपड़ी आकाश पर उड़ जायगी....”

युवक सजग हों गया। उसका रिवाल्वर रामलाल की गर्दन में

चुभ-सा गया। युवक ने रामलाल के पीछे अन्धकार में अपने को छिपा लिया।

तभी—

“रामलाल !....”

“यस सर !...”

“कुछ पता लगा ?”

युवक का रिवाल्वर धीरे से रामलाल की गर्दन पर रेंगा।

“जी...जी नहीं !....”

“उधर भी नहीं....आखिर गया कहाँ ?...” मिस्टर शर्मा का स्वर हैरान था—“बाग का कोना-कोना हमने घेर रखा है....”

“भाग गया होगा सर !”—रामलाल के मुँह से उसकी गर्दन पर रखा हुआ युवक का रिवाल्वर बोल रहा था।

“भाग नहीं सकता वह रामलाल ! हमें उसे पकड़ना है। याद रहे यह परिश्रम अगर व्यर्थ गया तो तुम्हारा बहुत बड़ा नुकसान होगा। आज के आक्रमण का सारा श्रेय तुम्ही का है....”

“मैंने बहुत कोशिश की सर ! मगर शैतान हवा बनकर बह चला....मैं खुद बहुत परिशान हूँ....उक् !....” रामलाल धीरे से चीखा।

“क्या हुआ रामलाल ?”—मिस्टर शर्मा रामलाल के पास आ गये।

“कुछ नहीं सर ! शायद गर्दन में कोई कीड़ा घुस गया था....”

तभी अचानक मिस्टर शर्मा की दृष्टि रामलाल के पीछे खड़ी एक अस्पष्ट आकृति पर जा पड़ी। उनके रिवाल्वर को सजग होते देर न लगी, परन्तु उनका प्रतिद्वन्दी उनसे भी अधिक तेज था।

“हाथ ऊपर करो मिस्टर शर्मा !” युवक के दूसरे हाथ का रिवाल्वर मिस्टर शर्मा की पसली पर था—“हाँ ! अब ठीक !...अपना रिवाल्वर नीचे गिरा दो....तुम भी अपनी रायफल रख दो सार्जेंट रामलाल....दोनों में से कोई भी कुछ बोला, तो खैर नहीं....”

मिस्टर शर्मा और रामलाल दोनों विवश थे। क्रांतिकारी युवक के दोनों हाथ इतने सजग थे कि जरा-सा हिलते ही मौत के दून बने तैयार !

“आप लोग इसी तरह चुपचाप बाग के फाटक की ओर बढ़ें—” युवक ने कहा—“मुझे बाहर जाना है...”

रिवाल्वर की ठेस खाकर दोनों आगे बढ़े। पीछे-पीछे वह निर्भय युवक चला, जिसने अपनी जान का अपना मातृभूमि के सम्मान के हवाले कर दिया था।

बाग का फाटक आ गया। बागों में सख्त सिपाही पहरे पर खड़े थे।

“सिपाहियों का दूर चले जाने की आज्ञा दीजिये”—युवक ने कहा और मिस्टर शर्मा की पसली से लगा हुआ रिवाल्वर जरा-सा और आगे सरका।

“तुम लोग उस तरफ चले जाओ और उसे खोजो !”—मिस्टर शर्मा ने सिपाहियों को आज्ञा दी।

और वे आज्ञाकारी नौकर अफसर का हुक्म पाकर वहाँ से तुरन्त हट गये।

“अच्छा, विदा सज्जनों ! हो सका तो फिर मिलेंगे”—कह कर युवक बिजली-सा चमक कर कहीं लुप्त हो गया।

मिस्टर शर्मा और रामलाल के रिवाल्वर गरजे, मगर उसके पहले ही युवक की छाया जाड़े के ठिठुरते अन्धकार में लुप्त हो चुकी थी।

फायर का स्वर सुनकर सिपाही भी दौड़ आये।

मिस्टर शर्मा हाँफते हुए खड़े थे। गरज कर बोले—“उधर दौड़ो, पूरी ताकत से ! हाथ में आकर निकल न जाय....”

फिर भगदड़ मच गई। मिस्टर शर्मा और रामलाल भी पूरी ताकत से उस ओर भागे जिधर वह युवक दौड़कर लुप्त हुआ था।

×

×

×

जाड़े की रात केवल चार घंटे बीती हैं, मगर लगता है जैसे

आधी बीत चली हो। हवा में ठंडक इतनी ज्यादा है कि लिहाफ के तार-तार बर्फ बन गये हैं। आसमानी आँखों से ओस-आँसू की बूँदें गिर रही हैं। चाँद के निकलने में अभी देर है और छोटे-छोटे तारों को देखकर चन्द्रदर्शन के प्यासे नयनों को तसल्ली भी नहीं हो सकती।

लोगों ने चाँद का हँसना देखा है, बादल का बरसना भी देखा है, तो जाड़े की काँपती अँधेरी रात में, घास के पत्तों पर चुपचाप ठिठुर कर बैठी हुई ओस की कुछ निरीह बूँदों का दर्द कौन समझे?

शहर का बाहरी हिस्सा है। इधर मकान कुछ दूर-दूर पर हैं। पुलिस सुपिरिटेण्डेंट मिस्टर शर्मा की कोठी आसमान छूती हुई खड़ी है। उसी से सटा हुआ बगल में एक छोटा-सा घर भी है, कुछ इस तरह पर, जैसे कोई ममतामयी माँ अपने छोटे बच्चे को बगल में दाब कर खड़ी हो।

मिस्टर शर्मा के मकान की दूसरी मंजिल के छज्जे पर एक धुँधली-सी छाया उतरी और बगलवाले छोटे से मकान की छत पर कूद पड़ी।

कोई आवाज नहीं हुई। किसी ने देखा भी नहीं।

उस छाया ने धीरे से छत का दरवाजा खोला और सतर्क-गति से दबे पाँव सीढ़ी से नीचे उतरने लगी।

मकान में अँधेरा था। सुनसान तो इतना था जैसे वहाँ कोई रहता ही न हो।

वह छाया नीचे पहुँच गई। एक कमरे का दरवाजा उसने खोला। अन्दर आकर स्विच दबाया उसने, तो कमरे का छोटा-सा बल्ब हँस पड़ा, प्रकाश बिखेरता हुआ।

वह धुँधली-सी छाया अब स्पष्ट आकृति बन गई। सलोना-सा भरा चेहरा, बड़ी बड़ी कजरारी आँखें, सोलह साज का शरीर सोलह रुपये की साड़ी से लिपटा—ऐसा लगा, जैसे उस सौन्दर्य के आगे बल्ब की हँसी शाम की धुँधलका बन गई हो।

युवती ने एक नज़र कमरे में घुमाई । कोई विशेष सामान न था वहाँ । एक मेज और उस पर कुछ किताबें, दो-तीन कुर्सियाँ, एक आलमारी और सामने दीवार पर कुछ टेढ़ा टँगा हुआ एक बड़ा-सा आइना—बस !

युवती मेज के पास की एक कुर्सी पर बैठ गई और एक पुस्तक उठाकर देखने लगी । पुस्तक का नाम था 'शहीद भगतसिंह' ।

उसने दो चार लाइनें पढ़ीं, फिर पुस्तक रख दी । उठ खड़ी हुई और कमरे का निरीक्षण करने लगी । आलमारी खोलकर देखा, उसमें पहनने के कपड़े थे ।

शीशे के सामने आ खड़ी हुई । देखने लगी अपने को, जैसे अपने यौवन को उसने पहले कभी देखा ही न हो । उसकी आँखें अपने ही सौन्दर्य पर रीझ गईं ।

फिर उसका ध्यान शीशे के तिरछे टँगने पर गया । इतनी लापरवाही की शीशा भी ठीक से नहीं टाँग सकते—सोचने लगी वह—इतना बड़ा शीशा तिरछा होकर कितना बीभत्स हो गया है ।

उसने हाथ बढ़ाकर उसे ठीक से टाँगना चाहा तो शीशा दीवाल से अलग होकर उसके हाथ में आ गया और उसके पीछे—शीशे के पीछे....

चौक पड़ी युवती । उस बड़े से शीशे के पीछे एक छोटी-सी आलमारी छिपी थी और उसमें रखे हुए थे रिवाल्वर, तीन-चार-पाँच....गिनकर युवती का शरीर कुछ काँप-सा गया ।

यह शीशा जो उसके सौन्दर्य को इतना आकर्षक प्रदर्शित करता है, अपने पीछे मौत का इन्तजाम छिपाये बैठा है, इसका उसे गुमान भी नहीं था ।

उसने हाथ का शीशा धीरे से नीचे रख दिया और उस छिपी आलमारी में गौर से देखने लगी । पाँच रिवाल्वर, चमकता काला

रङ्ग, भयावना आकार । काफ़ी कारतूम । कुछ कागज़ात एक फाइल में रखे हुए और एक डायरी ।

युवती ने धीरे से डायरी बाहर निकाली । ऊपर ही सुस्पष्ट अक्षरों में नाम लिखा था—‘लालचन्द, बी० ए० ।’

डायरी खोला । नज़र दौड़ाई तो एक पृष्ठ पर लिखा पाया—

“शहर पढ़ने आया हूँ, मगर गाँव का सुन्दर वातावरण यहाँ नहीं । आज माँ की चिट्ठी आई थी ! लिखा था—‘लाल ! तेरे बिना अकेला बुढ़ापा चलाना फर नहीं पाता । तू था, तो तेरे बहाने मैं भी खा लेती थी पका कर... तू नहीं है, तो रा-रा कर ही पेट भर लेती हूँ ।’ माँ भी कितनी पगली है । कैसे समझाऊँ उसे कि माँ की ममता से बढ़कर इस समय मेरे हृदय में देशभक्ति लहरें ले रही है ।”

कुछ पृष्ठ उलटने पर यों लिखा था—

“कालेज जाता हूँ, मगर पढ़ने में मन नहीं लगता । देश की राजनीतिक दशा भी आजकल बड़ी दुःखद हो उठी है । गोरी सरकार पर विचार करना हूँ तो हृदय घृणा से भर जाता है । हृदय में क्रांति उठ खड़ी होती है । हाथ खून से ढाला खेलना चाहते हैं, गोरी के लाल खून से !...आजकल कालेज में भी गुलामी की मनावृत्ति बढ़ाने वाली शिक्षा दी जाती है ! कुछ समझ नहीं पाता कि क्या करूँ ?”

फिर कुछ पृष्ठ बाद—

“पुलिस सुपरिटेण्डेंट की पुत्री रेखा मेरी सहपाठिनी है । बड़ी अच्छी लड़की है । उससे बातें करता हूँ तो बड़ा आराम मिलता है । उसमें अन्य लड़कियों की-सी उच्छ्वलता नहीं है, वह सौम्य-शान्त-सौन्दर्यमयी है । कोई भी उसकी ओर आकर्षित हो सकता है । मैंने उसके अन्दर एक अद्भुत शक्ति देखी है काश, वह गोरी सरकार के अनुचर मिस्टर शर्मा की पुत्री न होती....”

उसके बाद—

“रेखा मुझे प्यार करती है। उसके प्यार में मादकता नहीं, स्निग्धता है। मुझे वह बड़ी प्रिय है। मेरे कष्टों का उसे बड़ा ध्यान है। आज कहती थी—‘मेरे बगल में एक छोटा-सा भकान खाली है। उसी में तुम चलेकर रहो, मुझे बड़ा सहारा रहेगा।’....नारी तो पुरुष का सहारा चाहती ही है। मगर मुझ जैसा पुरुष रेखा को क्या सहारा दे सकता है? मैं रेखा से इनकार नहीं कर सकता, अतः अपनी स्वकृति दे दी है....”

युवती ने डायरी के बहुत से पृष्ठ एक साथ उलट दिये। पढ़ने लगी—

“रेखा और मैंने साथ ही बी० ए० पास किया है, घर जाने की सोचता हूँ तो रेखा जाने नहीं देती। यों भी, मैं घर नहीं जा सकता। आजकल एक क्रान्तिकारी दल से मेरा सम्पर्क हो गया है। सरदार मुझे बहुत मानते हैं। उन्होंने भी मुझे यहीं रहने की सलाह दी है। इस दल के साथ रहने से मेरे हृदय की क्रान्ति का बड़ा सहारा मिला है। जी-जान से मातृभूमि की सेवा में रत हूँ.... मगर रेखा बड़ी शरारती लड़की है। कभी-कभी तो मैं उससे परी-शान हो जाता हूँ। यदि वह जान जाय कि मैं हूँ वह क्रान्तिकारी हूँ, जिसके पीछे उसके पिता तथा कितने ही जासूस परीशान हैं, तो जाने वह क्या सोचे। शायद वह अपने पिता से कहकर मुझे पकड़वा दे....सरदार कौन हैं, यह अब तक नहीं जान सका। वे बहुत बार बहुत भेष में मुझसे मिल चुके हैं, परन्तु मुझे उनका परिचय नहीं मिल सका....पिछले हफ्ते दो दिन के लिये घर गया था। देखकर माँ रोने लगीं। धीरज बँधाया तो बूढ़ी आँखें बादल बन चलीं। माँ का स्नेह बड़ा विचित्र होता है, परन्तु मैं तो जननी-जन्म भूमि की भक्ति में पागल हूँ आजकल।”

युवती पढ़ते-पढ़ते हॉफने लगी थी। उसने डायरी उस गुप्त

आलमारी में फेंक दी और दोनों हाथों से अपने सर का पिछला हिस्सा दबाने लगी ।

इस सीधे-सादे युवक को वह जानती है, मगर यह नहीं जानती थी कि उसके अन्तरमें इतना भीषण ज्वाला मुखी आग दबाये बैठा है ।

उसने शीशा उठाकर उस आलमारी के सामने लगा दिया । फिर कुर्सी पर आ बैठी ।

तभी बाहर की कुंडी खटकी, ताला खुला और दरवाजा खोलकर एक युवक दौड़ता-हाँफता कमरे में घुस आया और बिना इधर-उधर देखे उसने दरवाजा भीतर से बन्द कर लिया ।

उसकी लम्बी ओवरकोट पर गर्द पड़ी थी । हाथ में अब तक रिवाल्वर था ।

युवक ने सन्तोष एवं छुटकारे की लम्बी साँस ली, फिर अपने-आप ही कहा—“चलो बला टली ! मगर कौन जाने यहाँ घुसते किसी ने देखा....”

तभी उसकी दृष्टि कुर्सी पर बैठी हुई उस युवती पर पड़ी, जो एकटक उसकी ओर देखती हुई उसकी परीशानियों पर गम्भीर हो रही थी ।

युवक चौंक पड़ा । उसने जल्दी से अपने हाथ का रिवाल्वर कोट की जेब में छिपाया, फिर बोला—“रेखा तुम ?... अच्छा ठहरो, मैं अभी आया ।”

तेजी से युवक बगल के कमरे में चला गया और दो ही मिनट बाद कमीज और पायजामा पहने, बदन पर रैपर ढाले आ पहुँचा ।

युवती के सामने वाली कुर्सी पर बैठता हुआ हँस कर बोला—“रेखा ! इतनी रात को यहाँ कैसे ?”

“कितनी रात को ?”—रेखा बोली—“लाल भैया ! हजार बार कह दिया कि तुम अपनी घड़ी ठीक रखा करो । अभी दस ही तो बजे हैं...”

“सिर्फ दस !”—युवक की दृष्टि एक क्षण को अपनी कलाई की घड़ी पर पड़ी—“ओह, हाँ ! दस ही तो हैं, लगता है जैसे रात ढल चली हो....मगर तुम यहाँ आई कैसे रेखा ! बाहर तो ताला बन्द था....”

“ताला तो दूसरों के लिये है लाल भैया !....मैं तो अपनी छत से कूद कर तुम्हारे घर में घुसी हूँ...”

“आखिर क्यों ?”

“क्या करती !...पिताजी वहाँ से लैस होकर दौरे पर दौड़ गये शाम को ही, माताजी ने मुझे पैदा तो किया, मगर पाल नहीं सकी कि ईश्वर का बुलावा आ गया....अकेली थी, सो तबीयत न लगी । सोचा चलकर तुम्हीं से कुछ बातें करूँ... मैं जानती थी कि तुम भीतर होगे भी, तो परेशान होने के डर से दरवाजा नहीं खोलोगे, इसीलिये जासूसी ढंग का ही सहारा लेना पड़ा....”

“क्यों नहीं, पुलिस सुपरिण्टेण्डेंट की बेटा क्या थोड़ी-सी जासूसी भी नहीं करेगी ?”

तभी बाहर सड़क पर कुछ लोगों के दौड़ते आने की आवाज आई और लाल का दरवाजा ज़ोरों से खटका ।

लाल के चेहरे पर केवल एक क्षण के लिये भय का पीलापन झलका, वह दरवाजा खोलने को उठ खड़ा हुआ ।

“तुम बैठो, मैं दरवाजा खोलती हूँ लाल भैया !....” रेखा ने कहा ।

उसने झटपट एक किताब खोलकर हाथ में उठा ली और आकर दरवाजा खोल दिया । बाहर बीसों पुलिसमैन, सार्जेंट रामलाल तथा सुपरिण्डेण्ट मिस्टर शर्मा खड़े थे ।

“रेखा, तुम यहाँ हो ?” मिस्टर शर्मा ने पूछा ।

“हाँ पिता जी !”—रेखा ने कहा ।

“कब से ?”

“बहुत देर से हूँ पिताजी !....दो घंटों से....लाल भैया से टैगोर साहित्य पर बहस चल रही थी...बात क्या है ?”

“कुछ नहीं” कह कर मिस्टा शर्मा अन्दर आ गये। सतर्क दृष्टि से उन्होंने कमरे को देखा—“रेखा ! यहाँ कोई और तो नहीं आया था ?....”

“नहीं पिताजी !” रेखा ने कहा—“केवल मैं और लाल भैया हैं।”

लाल भी कुर्सी से उठकर आ गया था। बोला—“क्या बात है बाबूजी ?”

“कुछ नहीं बेटा ! एक ढाकू के पीछे पड़े हैं हमलोग”—मिस्टर शर्मा ने कहा—“वह इधर ही कहीं भागकर आया है। क्यों रामलाल ?”

“यस सर !....”

“खैर ! आज तो निराशा ही हाथ लगी। कहाँ जायगा बच कर ?....चलो तुम लोग....रेखा ! मैं दो घंटे बाद ही घर आ सकूँगा। तुम थोड़ी देर में चली जाना। वहाँ कोई न होगा।”

“अच्छा पिताजी !...”

सब लोग चले गये। लाल कुर्सी पर आ बैठा। रेखा भी दरवाजा बन्द करके आ बैठी।

“लाल भैया !”

“हूँ....”

“तुम कुछ परेशान से हो....”

“नहीं तो ?”

“नहीं तो कैसे ?”—रेखा बोली—“जरूर तुम परेशान हो। जाने भी दो, पुलिसवालों का काम बड़ा खराब होता है। अच्छा हुआ मैंने भूठ बोलकर उन्हें टाल दिया। अगर वे जान जाते कि तुम अभी ही कहीं से चले आ रहे हो, तो व्यर्थ के सवाल पूछ कर तुम्हें परेशान करते...हैं न लाल भैया ?”

“तुम बहुत चालाक होती जा रही हो आजकल”—लाल ने कहा।

“चालाक तो नहीं, हाँ सतर्क कह सकते हो”—रेखा ने मुस्कुरा कर लाल की ओर देखते हुए कहा ।

“रेखा ! अपनी मुस्कुराहट बन्द करो....”

“क्यों ?”

“मुझे अच्छी नहीं लगती....”

“तुम्हें तो अच्छा लगता है केवल एक बड़ा-सा मनहूस शीशा, जिसे सीधा टाँगने का भी तरीका तुम्हें नहीं मालूम ! एकदम टेढ़ा टाँग रखा था । देखो तो, मैंने सीधा टाँग दिया है ।”

लाल चौंक पड़ा ।

बोला—“तुमने उस शीशे को छुआ था ?”

“बिना छुए वह सीधा कैसे होता ?”

“रेखा ! तुम बड़ी शैतान हो । मेरी कोई चीज बिना मुझसे पूछे मत छुआ करो और मेरे घर में चोरी-चोरी घुसा भी मत करो....”

“शैतान तुम हो”—रेखा ने कहा—“चोर भी तो तुम्हीं हो । चोरी करके आ रहे थे, बचा दिया मैंने तो लगे मुझी को डाँटने ।”

रेखा रूठकर बैठ गई । मुँह दूसरी ओर कर लिया उसने ।

“रूठ गई रेखा ?”

“मैं नहीं बोलती तुमसे....”

“बोल तो रही हो...”

“अब नहीं बोलूँगी....”

“रूठो मत रेखा !”—लाल ने रेखा की ठुड़ी पकड़ कर कहा—“तुम मेरे जीवन की ज्वलन्त रेखा हो । तुम्हारे बिना मेरे अन्तर का सारा स्नेह सूखकर मेरा हृदय मरुस्थल बन जायगा....बोलो रेखा ! रूठी नहीं हो न ?”

“तुम बड़े पाजी हो लाल भैया ! तुम मुझे डाँट क्यों देते हो ?

मैं तुम्हारे घर में आऊँगी, सब कुछ उलट-पुलट करूँगी, देखूँ मुझे कौन रोकता है ?”

“कोई नहीं रोकेगा तुम्हें....अब मैं कुछ नहीं कहूँगा...”

“हाँ !....” रेखा बोली—“तो टैगोर के साहित्य के विषय में तुम्हारा क्या विचार है लाल भैया ?”

“छोड़ो उस बात को”—लाल ने कहा—“साहित्य की बात मैं क्या जानूँ ? अच्छा बहाना किया तुमने बाबूजी से....किसी दूसरी चीज के विषय में बातें करो...”

“एक चीज के विषय में पूछूँ ?”

“पूछो ।”

“वह तुम्हारे हाथ में क्या था ?”

“कब की बात कहती हो ?”

“जब तुम घबड़ाये हुए ताला खोलकर अन्दर आये थे”—रेखा ने कहा ।

लाल का चेहरा सफेद पड़ गया ।

बोला—“हमारे हाथ में तो कोई चीज नहीं थी रेखा !”

“थी कैसे नहीं लाल भैया ! तुम मुझसे उड़ले हो ?....एस० पी० की बेटी भला रिवाजवर भी नहीं पहचानेगी क्या....”

“रेखा, वह तो खिलवाड़ था....”

“तुम्हारे लिये वह खिलवाड़ हो सकता है लाल भैया ! मगर कानून उसे खतरनाक समझता है । पिताजी की दृष्टि अगर उसपर पड़ जाय तो वे मेरा खयाल न करके तुम्हें उस्टी चक्की पिसा दें जेल में डालकर....समझे !”

“समझ गया—मैं उसे फेंक दूँगा”—लाल ने कहा ।

रेखा मुस्कराई, यह समझकर कि यह भयानक युवक अब तक उसे भोली बालिका ही समझता आ रहा है ।

“लाल भैया !”—रेखा ने कहा—“मुझे भी रिवाज़र चलाना सिखाओगे ?”

“क्या बकती है ?”

“बकती क्या हूँ....पिताजी से कहती हूँ तो वे हँसकर टाल देते हैं। तुमसे कहती हूँ, तो तुम्हारा पारा ही चढ़ जाता है। क्या मैं रिवाज़र भी नहीं चला सकती ?”

“ज़रूरत ही क्या है ?”

“जो तुम्हें ज़रूरत है” रेखा ने कहा—“नारी को तुम इतनी कमज़ोर क्यों समझते हो ? मुझे सिखा दो, तो अवसर आने पर रेखा का भी निशाना देख लेना कभी....”

“रेखा ! इस बात को बन्द करो....”

“क्यों ?”

“मैं जो कहता हूँ !”

“तुम क्यों कहते हो ?”—रेखा ने कहा—“मुझे तुम निरी बच्ची ही मत समझो लाल भैया ! रेखा का दिल भी लाल के दिल की तरह फौलाद का बना है। लाल और रेखा दो नहीं, एक हैं। दोनों के दिलों में एक भावना, एक विचार, एक धारा है। समझो चाहे न समझो। कभी समझ में आये तो आश्चर्य मत करना....”

“कैसी बातें कर रही है तू आज ?” रेखा की बातें सुनकर लाल हैरान-सा हो गया था।

“कैसी भी तो नहीं लाल भैया !”—रेखा ने कहा—“नारी को अशक्त और अबला समझनेवाले पुरुष से एक नारी अपनी दृढ़ता का इजहार कर रही है केवल !....मैं चलती हूँ अब फिर कभी बातें होगी...”

“घर जाओगी ?”

“हाँ ! उस घर में, जहाँ गोरी सरकार की सम्पदा हर महीने वेतन-रूप में आती है। सच कहती हूँ लाल भैया ! उस घर का

खाना मुझे जहर-सा लगता है, ऐसा जहर, जो जान लेने के बदले जीवन देता है। मजबूरी है। आज की हर नारी मजबूर है पुरुष के हाथों। पिताजी का मोह है, नहीं तो सभी मोह-माया छोड़कर तुम्हारा साथ देती। कभी-कभी अन्तर की क्रान्ति इतना विकराल रूप धारण कर लेती है कि पिताजी भी मेरी दृष्टि में निशाचर जैसे दिखलाई पड़ने लगते हैं....”

“तू आज पागल हो गई है ?....”

“जरूर !” फीकी हँसी हँसकर कहा रेखा ने—“जो रिवाजवर लेकर बाहर घूमने जाता है, जिसके पीछे पुलिस दौड़ती है हाथ में बन्दूक लेकर, और जो इतना बड़ा शीशा भी सीधा टाँग नहीं सकता उसके लिये एक नारी पागल से बढ़कर और हाँ ही क्या सकती है ?....”

“रेखा !” लाल का आश्चर्य उत्तरोत्तर बढ़ता ही जा रहा था।

“चलती हूँ लाल भैया !” रेखा उठकर खड़ी हो गई।

“रेखा !....” लाल रेखा के सामने आ खड़ा हुआ।

“कहो !” रेखा के नेत्र दृढ़ थे लाल की आँखों में।

“तुम पहेली हो रही हो आज ?”

“तुम सशक्त हो, पुरुष हो”...रेखा ने कहा—“और सशक्त पुरुष छोटी-मोटी बातों को पहेली समझ कर उपेक्षित कर देता है....तुमने अपने जीवन में दो ही नारियों की छाया देखी। अपनी माँ की गोद में तुम पले, परन्तु उसके अन्तर को समझने की चेष्टा नहीं की तुमने। मेरे साथ तुम पढ़े और मुझे पहेली समझ कर दूर-दूर होना चाहते हो....तो तुम नारी का विशाल हृदय, नारी की प्रेरक शक्ति देख ही कैसे सकते हो ?”

“मैंने सब कुछ देखा है रेखा ! मगर तुम्हारे जैसी लड़की नहीं देखी कभी...”

“देखी होगी, मगर समझ नहीं सके होंगे। कभी हँसना कभी रोना कभी गेह कभी रुटना कभी मरना कभी गाड़ी के आगे

काठ, कभी ईंट का जवाब पत्थर....नारी की हर हरकत तुम्हारे लिये पहेली ही तो है....क्या करोगे समझ कर !....जो इन्सान आँखें बन्द करके चलता है, वह कुछ समझ भी तो नहीं पाता....”

“रेखा ! तुम चली जाओ—अभी, इस वक्त....”

“ऊब गये अपनी जीवन-रेखा से ?”—बोली रेखा—“तभी एकान्त चाहते हो । मगर एकान्त तुम्हें कुछ भी सहारा नहीं देगा । मेरी अनुपस्थिति में तुम कुछ भी नहीं समझ सकोगे । नारी को पुरुष की आवश्यकता हाती है, तो पुरुष के लिये भी नारी का साहचर्य अनिवार्य है । अकेला पुरुष अधूरा है । वह कुछ भी नहीं कर सकता पुरुष शक्ति है, तो नारी प्रेरणा—बिना प्रेरणा के शक्ति का मार्ग अन्धकारपूर्ण है ।....लाल अग्नि है तो रेखा है उसकी ज्वाला, इसे न भूलो लाल भैया !...मैं जाती हूँ । तुम ज़रा अपने उस बड़े से शीशे का ख्याल रखना । कोई दूसरा उसे साधा न करने पाये, नहीं तो...”

रेखा दरवाजे की आंर बढ़ी ।

लाल ने उसका रास्ता रोक लिया ।

“रेखा ! रुको अभी....”

“मैं भाग नहीं रही हूँ । कहो !....”

“तुमने उस शीशे को देख लिया...मेरा मतलब उसके पीछे...यानां तुमने सब कुछ देख लिया रेखा ?”

“मैंने केवल लाल को देखा है” रेखा ने स्थिर वाणी में कहा—“और लाल को देख चुकने पर उसकी कोई चीज मेरे लिये अनदेखी नहीं रही....”

“उफ् रेखा ! तुम मुझे क्या समझती होगी ?”

“वही, जो पहले समझती आ रही थी....”

“अपने पिताजी से कह दोगी ?”

“लाल भैया !”—रेखा तेज स्वर में बोली—“रेखा के लिए पिता और भाई का दर्जा बराबर है । वह दो में से किसी को भी

खोना नहीं चाहती, यही तो नारी के मोह की विवशता है। कभी समझोगे भी इसे, या नहीं....”

रेखा दरवाजा खोलकर एकदम बाहर आ गई।

उस समय चन्द्रमा की रोशनी से बाहर का अन्धकार कुछ-कुछ उजाला हो चला था। आदमी सां रहे थे, कुत्ते जागते थे। सड़क की छाती पर पेड़ों की परछाईं भूत बनकर लोट रही थी। हवा बर्फ का तीर बनकर शरीर में चुभती जा रही थी।

रेखा ने देखा, बाहर के धुंधले अन्धकार में कोई भद्दी-सी मांटी शक्त्त लाल के दरवाजे पर खड़ी है। वह डरी नहीं, पीछे भी नहीं लौटी।

वहीं से कुछ तेज स्वर में पूछा—“कौन है ?....वहाँ कौन खड़ा है....”

“कुछ मिल जाय बेटी !....” आवाज करुण थी।

“क्या मिल जाय ?” रेखा बिगड़ी—“पत्थर !....ऐसी रात में तो पत्थर भी नहीं दिखेंगे। चले जाओ....”

“भिखारी को भीख चाहिये बेटी !....पत्थर से पेट थोड़े ही भरेगा...”

रेखा आगे बढ़ आई। बोली—“तुम भिखारी हो ? रात में भला कौन भीख देगा तुम्हें ? पूरे अवसरवादी हो, आये थे चोरी करने, कुछ हाथ नहीं लगा तो भीख ही सही।”

“क्या है रेखा ?”—लाल भी बाहर निकल आया।

“देखो न लाल भैया ! यह भीख माँगता है।”—रेखा बोली—“इतना जाड़ा पड़ रहा है कि जवान भी बूढ़े बन जाँय, और यह बूढ़ा होकर भी भीख माँगने निकला है....जाओ भाई, अपना रास्ता देखो। दिखाई न देता हो तो चलो मैं ही कुछ दूर तक पहुँचा दूँ....”

लाल ध्यान पूर्वक भिखारी को देख रहा था।

तभी भिखारी ने दाहिने हाथ की उँगली मस्तक पर रखकर एक बार खुजलाया। लाल चौंक पड़ा ! एक कदम पीछे हट गया।

रेखा से बोला—“रेखा ! तुम घर जाओ । मैं इसे कुछ देकर अभी विदा करता हूँ ।”

“अच्छी बात है, मैं चली, तुम इस भिखारी की पूजा करो.... मैं बाहर न निकली होती तो अभी यह तुम्हारी दीवार में सेंध लगा चुका होता ।”

रेखा चली गई ।

लाल ने सनक दृष्टि से चारों ओर देखा, फिर भिखारी से बोला—“अन्दर आइये....”

भिखारी और लाल चुपचाप अन्दर आये । लाल ने दरवाजा भीतर से बन्द कर लिया, फिर दोनों कुर्सी पर आ बैठे ।

“आप....और इस वेश में ?” लाल ने चकित बाणी में कहा ।

“हाँ ! काम बहुत आवश्यक था”—भिखारी बोला—“समय बहुत कम है । मुझे अभी लौट जाना है....यह लड़की कौन थी ? जवान की बड़ी तेज है.. ”

‘हाँ ! रेखा थी, मिस्टर शर्मा की बेटी !’—लाल ने कहा ।

“लाल !”—भिखारी की आवाज कुछ कड़ी थी—“तुम्हारे पास यह लड़की क्यों आई थी ?”

“सरदार !” लाल ने नम्र स्वर में कहा—“आप कुछ दूसरा ख्याल न करें । रेखा मेरी प्रेरणा है । रेखा से अलग मेरा कोई अस्तित्व नहीं...”

“मानता हूँ”—भिखारी बोला—“मगर क्रान्तिकारियों के लिये नारी को प्रेरणा गतिरोध उत्पन्न करने वाली हांती है, फिर यह तो दुश्मन की बेटी है, इसका क्या भरोसा ?”

“जिस दिन रेखा पर से मेरा विश्वास उठ जायगा, तो सारा दुनिया ही मेरे लिये विश्वासहीन हो जायगी सरदार !....मैं अपने चरित्र पर विश्वास करता हूँ । सात्विक प्रेम चरित्र को और भी उन्नत करता है....”

“बस करो लाल !”—भिखारी बोला—“यहाँ मैं प्रेम की व्याख्या सुनने नहीं आया । तुम मेरी सूरत नहीं पहचानते, मगर मेरा रस स्वभाव जानते हो । अगर किसी भी दिन मुझे मालूम हुआ कि तुम्हारा हृदय क्रान्ति का चिन्तन छोड़कर प्रेम का चिन्तन करने लगा है, तो मेरा रिवाल्वर तुम्हारी जान लेने में जरा भी नहीं हिचकेगा । मैं तुम्हें सावधान करता हूँ, क्योंकि तुम मण्डल के एक सहकारी कार्य-कर्त्ता हो । मैं तुमसे हाथ धोना नहीं चाहता....”

“आप विश्वास रखें, सरदार !”

“मुझे विश्वास है....हाँ ! आज तो तुम पकड़े जाने से बच गये । पुलिस का कैद पता लग गया, मालूम नहीं । मगर भविष्य में सावधान रहना । ऐसा न हो कि जरा-सी असावधानी से तुम कुत्तों के पंजे में आ जाओ....”

“मैं सावधान रहूँगा सरदार ! आज भी मैं कम सावधान नहीं था....आप विश्वास रखें, कुत्ते अगर पायेंगे भी, तो केवल मेरी लाश । जिन्दा लाल उनके पंजे से हमेशा बाहर रहेगा ।”

“कल चन्द्रनाथ के मुकदमे का फैसला है” भिखारी ने कहा—  
“चन्द्रनाथ भी बड़ा ही सावधान युवक था, मगर पुलिस के हाथों पड़ ही गया । देखो कल क्या होता है ?...”

“उसके विरुद्ध सबूत बहुत तगड़ा है सरदार ! उसे फाँसी तो अवश्य ही हाँगी...” लाल बोला ।

“लाल ! अगर उसे फाँसी की सजा हुई, तो जज के लिए भी तुम अपना रिवाल्वर तैयार रखो । भारत का ऐसे न्यायकर्त्ताओं की जरूरत नहीं, जो गोरी सरकार की हँसी के पीछे अपने आँसू भूल जाँय । तुम मेरा मतलब समझ गये न ? कल कचहरी में तुम उपस्थित रहोगे....

“बहुत अच्छा !”

“चन्द्रनाथ का कल फाँसी की सजा अगर हुई, तो रात को तज

साहब भी तुम्हारे हाथों आसमान पर पहुँच जाँय, इसका खयाल रखना—ठीक है न लाल ?....’

“जी हाँ ! मैं तैयार रहूँगा....”

“शाबाश !”—भिखारी ने कहा—“तो मैं चलता हूँ ।”

दोनों उठ खड़े हुए ।

“एक बात है लाल !” भिखारी बोला ।

“कहिये....”

“क्या तुमको चंद्रनाथ पर विश्वास है ?”

“जिस पर आपका विश्वास है, उस पर मुझे अविश्वास करने का कोई भी कारण नहीं दीखता सरदार !”

“ठीक है”—भिखारी ने कहा—“अभी तक तो उसने अपनी जबान बन्द ही रखी है...मगर अपनी जान सभी को प्यारी होती है लाल ! कहीं फाँसी की सजा सुनकर दृढ़ता नष्ट न हो जाय ?”

“इसे तो आप ही समझ सकते हैं सरदार ! मैं क्या बताऊँ ?”

“खैर, देखा जायगा....तुम मेरे दाहिने हाथ हो लाल, इसे कभी न भूलो....”

“मैं इसे हमेशा रटता हूँ सरदार और मैं इस प्रयत्न में हूँ कि मैं केवल आपका दाहिना हाथ हो न होकर, आपका दिल—आपका दिमाग—आपका सब कुछ हो जाऊँ”—लाल ने कहा ।

भिखारी धीरे से हँसा । बोला—“तुम बड़े शैतान हो !....”

लाल ने भिखारी के पैर छुए ।

भिखारी बाहर आकर तेजी से एक ओर का चला । लाल दरवाजा बन्दकर चारपाई पर पड़ रहा । मंडल के सरदार को उसने भिखारी-वेश में कभी नहीं देखा था । वह सोचता रहा—कौन हैं सरदार, क्या करते हैं, कहाँ रहते हैं—तभी जागृति का फाटक बन्द कर उसकी पलकों में नींद आ बैठी ।

लाल के मकान से निकल कर रेखा अपने दरवाजे पर आ खड़ी हुई। बगल में ही उसका भव्य भवन था। दरवाजा बन्द था। रेखा ने पुकारा—“दाई, ओ दाई।”

दाई उस बूढ़ी का नाम था, जो रेखा के घर में अपनी जवानी से ही नौकरी कर रही थी। रेखा की माँ के मर जाने पर उसी ने अपने दूध से उसे जीवन दिया था।

“दाई !....मर गई क्या ?” रेखा चिल्लाई।

तभी दरवाजा खुला। बुढ़िया बड़बड़ाती हुई दिखाई पड़ी—  
“तुम्हे पाल-पोस कर बड़ा कर दिया, अब केवल मरना ही तो रह गया है मुझे....जिस दिन मरी नहीं कि तेरी आँखों में नदी न आ जाय, तो कहना।”

“पिताजी आये ?”—रेखा ने अन्दर आकर पूछा।

“उनकी भी पिस्तौल कहीं गरज रही हांगी—अभी क्यों लौटने लगे” बुढ़िया ने कहा—“यह पुलिस की नौकरी मुझे ज़रा भी पसन्द नहीं। न तन को आराम, न मन को चैन। इन्सान क्या हुआ, गली का कुत्ता बन गया, ज़रा से पेट के लिये दरवाजे-दरवाजे सूँघना....राम-राम ! यह नौकरी क्या है मेरी मौत !....बाप-बेटी के चलते दिन भर हाय-हाय करूँ और रात भर जागू....”

बूढ़ी दाई ने रेखा और उसके पिता के साथ बहुत उपकार किये थे। इसी कारण आज वह नौकरानी नहीं, घर की बड़ी-बूढ़ी थी।

“दाई ! मुझे खाना दे दो—नींद आरही है....” रेखा ने कहा।

“कहाँ थी इतनी देर तक ?....उसी लाल के घर न ?....कल आवे वह लाल का बच्चा, तो उसे पोला करके न छोड़ूँ तो कहना.... हाँ, नहीं तो....”

“मैं आ गया हूँ दाई, क्या बात है ?”

“अरे तुम ?....लाल । आओ-आओ....ओह, आप ?”

दरवाजे पर मिस्टर शर्मा थे, लाल नहीं ।

“यह दाई रोज रात में मर जाती है पिताजी ! दरवाजा जल्दी नहीं खोलती....” रेखा बोली ।

“और तू जीती रहती है तो उस लाल पीले के घर क्यों जाती है ?” दाई ने कहा—“देखिये न ! अभी को परेड करके आ रही है । फूल-सी देह, न समय पर खाना, न सोना....देख लेना एक दिन बीमार बन कर पड़ रहेगी तो दाई याद आवेगी इसे...”

“अच्छा, जाने भी दो....चलो खाना लाओ...” मिस्टर शर्मा ने कहा ।

दाई ने खाना सजाया । बाप-बेटी दोनों खाने लगे ।

“पिताजी !....”

“बालो...”

“आप यह नौकरी छोड़ दीजिये पिताजी !” रेखा ने कहा ।

“क्यों ?....बात क्या है ?”

“लोग पुलिस वालों को बुरा आदमी समझते हैं....”

“समझा करें” मिस्टर शर्मा बोले—“पुलिस ही तो जनता की रक्षक है, नहीं तो उसका साँस लेना भी मुश्किल हो जाय....इन्सान पर अगर कानून की बन्दिश न हो, तो हर आदमी मुजरिम बन जाय रेखा !”

“सरकार के कानून आपको पसन्द आते हैं पिता जी ?”

“क्यों नहीं ! और तुम्हें ?....”

“मैं तो कानून को शासक का जुलम समझती हूँ....”

“रेखा ! मैं सरकारी आदमी हूँ, और हर सरकारी नौकर को नमकदलाल होना चाहिये । मेरे कानों में फिर ऐसी बातें न जायँ....”

“आप सरकारी आदमी हैं और मेरे पिता भी....और हर बेटी अपने पिता के सामने अपने विचार प्रकट करने के लिये स्वतन्त्र

है....स्वतन्त्रता किसे प्यारी नहीं लगती पिताजी ! अपना देश स्वतन्त्र होता तो कितना अच्छा था....”

“क्या अच्छा था ?”

“तब हर आदमी अपने देश और शासन के प्रति अपनी जिम्मेदारी समझता, जुर्म कम होते और आपको भी कम काम करना पड़ता । पराधीन देश में पढ़ने-लिखने-बोलने तक की मुमानियत है....ऐसा क्यों पिताजी ?”

“रेखा ! मैं आज थका हूँ । बोलने का जी नहीं चाहता । अब तुम चुपचाप खाओ....”

“थके तो आप रोज ही रहते हैं पिताजी !”

“इसे बोलने दीजिये—” दाई ने मिस्टर शर्मा से कहा—  
“आप चुप रहिये तो यह भी चुप हो जाय । इसके साथ बोलते चलियेगा, तो इसके ग्रामोफोन की चाभी भरती जायगी और रेकार्ड की तरह बजती चलेगी यह....”

“तुम चुप रहो दाई ! मैं तुमसे तां बोलती नहीं....जाओ, अब हमलोग कुछ नहीं लेंगे—”

तभी टेलीफोन की घण्टी बज उठी ।

मिस्टर शर्मा तेजी से खाना छोड़कर उठ गये । मुँह-हाथ धोकर रिसीवर उठा लिया—

“हलो !....हाँ ! शर्मा स्पीकिंग....क्या ?...आपके पास ?...आश्चर्य है !....तब तो बड़ा बुरा हुआ...डर की कोई बात नहीं....हाँ ! अभी तो मैं खाना खा रहा था....मेरी नींद में कोई बाधा नहीं पहुँचेगी....हाँ ! आप अभी आ सकते हैं....”

मिस्टर शर्मा ने रिसीवर रख दिया । उनके मस्तक पर चिन्ता की रेखायें उठ आई थीं ।

“कौन था पिता जी ?”—रेखा ने पूछा ।

“सेशन्स-जज मिस्टर सक्सेना थे....”

“क्या कह रहे थे ?...”

“कुछ नहीं....तुम जाकर सो रहो...सरकारी बातें सभी से नहीं बताई जाती।”

मिस्टर शर्मा अपने कमरे में चले गये।

थोड़ी ही देर बाद दरवाजे पर एक कार आकर रुकी और सेशन्स-जज साहब भीतर आये।

“आइये !....” मिस्टर शर्मा ने कहा।

दोनों कोच पर आ बैठे।

“आप बहुत डर गये हैं !”

“जी नहीं....” जज ने कहा—“कुछ चिन्तित अवश्य हो रहा हूँ। क्रान्तिकारियों के गिराव ने तो सरकार की नाक में दम कर रखा है....”

“वह धमकी का पत्र आपको कब मिला ?”—मिस्टर शर्मा ने पूछा।

“ज्यों ही मिला, मैंने पढ़कर आपको फोन किया”—जज ने कहा—“अपनी जान का डर तो सभी को होता है। फिर मैं तां सरकारी अफसर हूँ। मेरी रक्षा का भार आपको लेना ही पड़ेगा....”

“आप निश्चिन्त रहिये—” मिस्टर शर्मा ने सान्त्वना दी—“मैं आपके प्राणरक्षार्थ कुछ उठा न रखूँगा....आप वह पत्र अपने साथ लाये हैं ?”

“जी हाँ !”—कहकर जज ने एक छोटा-सा कागज उनके सामने रख दिया।

मि० शर्मा लेकर पढ़ने लगे। छोटा-सा पतला कागज, टाइप किये गए सुस्पष्ट अक्षर—

“जज मिस्टर सक्सेना को सावधान किया जाता है कि अगर उन्होंने कल चन्द्रनाथ को फाँसी की सजा दी, तो रात तक उन्हें भी मौत की तैयारी कर लेनी पड़ेगी।”

“देख लिया आपने ?”—जज ने पूछा ।

“जी हाँ !....”

“अब तक इन दुष्टों ने जो धमकी दी उनमें से एक भी भूठी नहीं निकली । ये शैतान अपना काम कर ही गुजरे और सरकार की सारी शक्ति फेल होकर रह गई....”

“हम लोग तो पूरी चेष्टा करते ही हैं जज साहब !....”

“और कहीं आपकी चेष्टा असफल रही, तो मुझे तो जान से ही जाना पड़ेगा....आपका तो एक्सपेरिमेंट होगा और मैं मिट ही जाऊँगा...इससे तो अच्छा यह है कि मैं अपना फैसला ही बदल दूँ..”

“आप सोच लीजिये....”

“मगर फैसला भी अब बदला नहीं जा सकता....लोग कहेंगे हार कर हिम्मत हार गये....फैसले की नकल भी आज ही वायसराय को भेजी जा चुकी है । उनका अनुरोध था....वे शुरू से ही इस मामले की स्टडी कर रहे थे....मैं क्या करूँ, कुछ समय में नहीं आता मिस्टर शर्मा....”

“आप धीरज रखिये”—मिस्टर शर्मा ने कहा—“मैं अभी फोन करके आपके बँगले पर तथा आपके साथ सुरक्षा के लिए सशस्त्र पुलिस का प्रबन्ध किये देता हूँ । कोर्ट में भी कल आपके चारों ओर पुलिस ही पुलिस...आप विश्वास रखें, कोई भी संदिग्ध व्यक्ति आपके पास तक नहीं आ सकेगा । कल रात भर मैं स्वयं आपके बँगले पर रहूँगा....”

“धन्यवाद !....”

मिस्टर शर्मा फोन करने दूसरे कमरे में चले गये । जज साहब अकेले उल्टी-सीधी साँसें लेते हुए कुर्सी पर बैठे रहे । ऊपर से वे चाहे जितने गम्भीर बने हों, उनका अन्तर भय से थरा उठा था । कमरे की हर चीज उन्हें रिवावर-सी ही दिखाई दे रही थी । उनका मस्तिष्क धीरे-धीरे असीम भय से विकृत होता जा रहा था । उस

कमरे में अब अकेले बैठ सकना उनके लिये असम्भव-सा हो गया ।  
वे उठने लगे, दूसरे कमरे में मिस्टर शर्मा के पास जाने के लिये—  
तभी—

“खबरदार ! जरा भी बदन हिलाया, आवाज निकली तो  
ठीक नहीं होगा....”

आवाज ही सुनकर जज साहब मुर्दा हो गये । चिल्लाना चाहा  
मगर मुँह की जवान तालू से जा सटी । भय से उनके अङ्ग-अङ्ग  
निश्चल हो गये । वे न बैठ सके, न उठ ही सके । आधा उठे—  
भुके हुए बेचारे ने हाथ चुपचाप ऊपर कर दिये ।

“अरे ! यह क्या ?....” रेखा की आवाज थी ।

रेखा जज साहब के सामने आ गई, मगर वे वैसे ही आधा  
उठे—आधा बैठे रहे, हाथ ऊपर की ओर किये ।

“चाचा जी ! यह आप कौन-सी कसरत कर रहे हैं ?” रेखा  
ने हँसकर कहा ।

तभी मिस्टर शर्मा टेलीफोन करके बापस लौटे ।

बोले—“क्या है रेखा ?...अरे, यह आप क्या कर रहे हैं  
जज साहब ?”

अब जज साहब आश्वस्त हुए । धड़ाम से साँफे पर बैठकर  
हाँफने लगे । थोड़ी देर बाद बोले—“किधर गया ?...”

“कौन ?”—मिस्टर शर्मा ने पूछा ।

“वही, मिस्टर शर्मा वही !...कातिल...मुझसे बोला, खबर-  
दार जरा भी बदन न हिले...” जज साहब ने कहा ।

रेखा हँसकर बोली—“चाचाजी ! वह ताँ मैं बोली थी । दाई  
की बिल्ली को मैं उधर बाँध आई हूँ । शैतान रातभर दौड़ लगा  
कर चूहे पकड़ा करती है....”

मिस्टर शर्मा हँसने लगे । जज साहब को जान मिली ।

कचहरी में कभी-कभी मेला लग जाता है, तब—जब कोई दिलचस्प तथा भयानक मुकदमा पेश रहता है। लॉग स्वयं सजा पाने से डरते हैं, मगर दूसरों का सजा मिलने का तमाशा देखने जरूर जाते हैं।

आज भी कोर्ट में बड़ी भीड़ है। जितनी संख्या जनता की है, उससे कुछ ही कम सशस्त्र पुलिस है। जजी कचहरी को पुलिस दल ने चारों ओर से घेर रखा है। सफेदराश जासूसों की संख्या भी कम नहीं है। सभी सतर्क हैं। जनता की भीड़ पुलिस की भीड़ को देखकर भेड़ बनी जा रही है। कचहरी के आस-पास सभी मँडरा रहे हैं, परन्तु भीतर जाने का कोई साहस नहीं करता।

न्यायालय के दरवाजे पर स्वयं मिस्टर शर्मा खड़े हैं और जो कुछ इने-गिने लोग भीतर जाने का साहस कर रहे हैं, उनकी तलाशी ले रहे हैं। किसी व्यक्ति पर थोड़ी-सी शंका होने पर ही उसे पूछ-ताछ के लिये जासूसों के हवाले कर दिया जाता है।

धोती-कुर्ते में एक सुन्दर युवक मिस्टर शर्मा के सामने आ खड़ा हुआ। मिस्टर शर्मा ने उसे देखा। बोले—“लाल बेटा ! तुम भी मुकदमा देखने आये हो ?”

“हाँ बाबूजी ! बैठा था सो इधर चला आया....” लाल ही था वह।

मिस्टर शर्मा ने लाल की जेब देखी, उसकी कमर टटोली और इत्मीनान कर लेने पर अन्दर जाने की आज्ञा दे दी।

भीतर जाकर लाल दर्शकों के मध्य में जा बैठा।

अपराधी चन्द्रनाथ कटघरे में खड़ा था। पीछे दो बन्दूक-धारी थे। चन्द्रनाथ के हाथ में हथकड़ी और पैरों में बेड़ी पड़ी थी। देश की आजादी का स्वप्न देखने वाला, कानून के शिकंजे में पड़कर आज स्वयं अपराधी बन बैठा था।

चन्द्रनाथ ने लाल को देखा और लाल ने चन्द्रनाथ को— दोनों एक दूसरे को कुछ देर तक देखते रहे। चन्द्रनाथ का आँखों में उपेक्षा एवं घृणा का भाव था, जैसे उसके अन्तर में कोई तीव्र तूफान उठ रहा हो, जैसे उसकी आँखें कह रही हों—“मेरी मौत का तमाशा देखने आये हो ?....मंडल ने मेरे लिये क्या किया ? देश को आजाद देखने के पहले ही मैं मरना नहीं चाहता...मगर मुझे फाँसी हुई, तो याद रखो, तुम में से कोई भी नहीं बचेगा.... मैं सब बता दूँगा...सब कुछ कह दूँगा....”

लाल का ऐसा लगा, जैसे चन्द्रनाथ का अट्टहास उसके कानों में गूँज रहा हो। उसने अपनी आँखें दूसरी ओर फेर लीं, फिर एक गहरी साँस लेकर चुपचाप बैठ रहा।

जज साहब अभी नहीं आये थे। न्यायालय में पूर्ण निस्तब्धता थी। चन्द्रनाथ आज कुछ चञ्चल नजर आ रहा था।

ग्यारह बजते ही बगल का दरवाजा खुला और जज साहब भीतर आये। उनकी अगल-बगल चार सशस्त्र सिपाही थे।

जज साहब के स्वागत के लिये सभी उठ खड़े हुए और उनके बैठते ही पुनः बैठ गये। जज ने फाइल में से फैसला उठाया और खड़े हो गये।

चन्द्रनाथ का बदन जरा-सा काँपा। लाल के कान सजग हुए।

जजने केवल एक ही वाक्य में अपना फैसला सुनाया—

“मुजरिम चन्द्रनाथ का जुर्म हर तरह से साबित हो चुका है, इसलिये उसे कांडे मारते-मारते मौत की सजा दी जाती है।”

लाल ने दाँत पीसा। दर्शक स्तब्ध रहे। चन्द्रनाथ ने कुछ कहना चाहा, मगर जज साहब पुलिस के पहरे में बाहर जा चुके थे।

लोग बाहर आने लगे। लाल भी बाहर आया। उसने चारों ओर दृष्टि डालकर उस भिखारी की खोज की, मगर वह कहीं दिखाई न पड़ा।

मिस्टर शर्मा न्यायालय के दरवाजे पर अब तक खड़े थे और गौर से बाहर से निकलने वाले लोगों का चेहरा पढ़ रहे थे।

तभी एक सफेदपांश जासूस आया और धीरे-से मिस्टर शर्मा के कान में बोला—“भुजरिम इकबाल करना चाहता है....”

मिस्टर शर्मा चौंक पड़े, फिर बोले—“तुम चलो मैं अभी आया....” जासूस चला गया।

थोड़ी देर बाद मिस्टर शर्मा कचहरी के हवालात में आये। पुलिस का कड़ा पहरा था। मिस्टर शर्मा को देखकर हवालात का ताला खोल दिया गया। मिस्टर शर्मा अन्दर घुसे।

चन्द्रनाथ हवालात के कमरे में सर नीचा किये हुए टहल रहा था। चेहरा पीला पड़ गया था। हाथ की मुट्ठियाँ कसी हुई थीं। बड़ा बेचैन लग रहा था वह।

“क्या कहना चाहते हो ?”—मिस्टर शर्मा ने रोबीली आवाज में पूछा।

“ओह ! आप ?...आइये...मैंने ही आपको बुलाया....मैं... मुझे कुछ कहना है....” चन्द्रनाथ उद्वेग से बोल नहीं पा रहा था।

“क्या कहते हो....कहां।....”

“मैं सब कुछ कहना चाहता हूँ....सब कुछ कह दूँगा....मैं सारा भेद जानता हूँ....”

“तुम इकबाल करना चाहते हो ?....”

“जी हाँ ! अगर मेरी जान छोड़ दी जाय”—चन्द्रनाथ ने कहा।

“अपनी जान सुरक्षित समझो तुम ?”—मिस्टर शर्मा ने कहा—“किसी बात का डर नहीं। मैं आज रात में तुमसे भेंट करूँगा.... तुम तब तक अपनी ज़बान काबू में रखो....मेरे सिवा एक शब्द भी किसी से मत कहो, नहीं तो सारा किया-कराया मिट्टी हो जायगा....”

“बहुत अच्छा !....मगर मेरी जान तो छोड़ दी जायगी न ?”

“ज़रूर !....”

“आप मुझसे कब मिलेंगे ?”

“रात में आठ बजे के बाद किसी भी समय”—कहकर मिस्टर शर्मा घूम पड़े ।

बाहर आये तो उनके मस्तक पर चिन्ता और संतोष दोनों के भाव थे ।



चन्द्रनाथ को फाँसी की सजा हो गई—न्याय ने अपना कार्य समाप्त कर दिया....मगर चन्द्रनाथ की आँखें ?

लाल सोच रहा था । चन्द्रनाथ की आँखों में उसने जो देखा था, उससे वह परेशान-सा हो उठा था । चन्द्रनाथ की उस भेदक दृष्टि में दृढ़ता नहीं थी । मौत का भय था, मण्डल के प्रति घृणा थी । कहीं वह प्राणों के भय से सारा भेद खोल दे तो !

तो जो कार्य उसके सरदार ने उत्साही युवकों के बल पर उठाया है, वह अधूरा ही रह जायगा । देश की आजादी परतन्त्रता के बन्धनों में और भी जकड़ जायगी ।

लाल को सन्तोष था तो केवल यही कि सरदार को कोई नहीं जानता । अगर चन्द्रनाथ ने सब कुछ बता भी दिया तो केवल उस जैसे सौ-पचास युवकों को फाँसी हो सकेगी, परन्तु सरदार का तो बाल भी बाँका न होगा—और सरदार यदि जीवित रहे, तो अपनी शक्ति से फिर वैसा ही गरोह बना लेंगे ।

तो चन्द्रनाथ को फाँसी की सजा हो गई और उसे फाँसी देने-वाले जज की फाँसी का इन्तजाम लाल को करना है आज ।

वह दृढ़-प्रतिज्ञ है । सरदार की आज्ञा से वह आग में भी कूद सकता है, आस्मान पर चढ़ने की ताकत हो तो तारे भी तोड़ ला सकता है ।

धीरे-धीरे संध्या का आँचल फैल रहा था। लाल ने अपनी गुप्त आलमारी खोली और उसमें से दो भरे रिवाल्वर निकाल कर जेब में रखा।

रिवाल्वर जेब में रखकर पीछे घूमा तो चौंक पड़ा लाल !

रेखा खड़ी थी। शिकारी चुस्त पाजामा, ऊनी कोट और खुले बाल।

“रेखा, तुम कब आई ?....”

“अभी तो चली आ रही हूँ लाल भैया ! जब तुम उस शीशे में मुँह देख रहे थे...”

“तुम्हारा सर देख रहा था”—लाल बिगड़ कर बोला।

“अच्छा !”—रेखा लाल के सामने आ खड़ी हुई—“शीशे में तुम अपना चेहरा देखते हो, तो दिखाई पड़ता है मेरा सर !.... अजीब बात है लाल भैया ?....”

“रेखा ! तू यहाँ क्यों आई है ?”—

“तुम कहीं घूमने चल रहे हो न लाल भैया !....मैं भी तो इसी इरादे से आई थी। शाम के समय घूमना भी बड़ा अच्छा लगता है....”

“मगर मुझे घूमने की फुर्सत नहीं रेखा !” लाल ने कहा—“तुम जाओ। मैं एक जरूरी काम से जा रहा हूँ। गले पड़ोगी तो ठीक नहीं होगा....”

“मैं भी जरूरी ही काम से तुम्हारे साथ चलेगी”—रेखा गम्भीर होकर बोली—“तुम्हारा निशाना अगर चूकेगा तो मैं उसे सम्हाल दूँगी...”

“चुप रह व्यर्थ सर खाये जा रही है....”

“लाल भैया ! तुम्हारा सर क्या हुआ तरबूज हो गया कि मैं खाये जा रही हूँ....इधर बहुत दिनों से तुम्हारे साथ कहीं गई नहीं....आज तैयार भी हुई तो तुम्हारा सर खाने लगी...”

“रेखा !”—लाज ने कहा—“मैं आज परेशान हूँ । मुझे अकेला छोड़ दो....”

“अच्छी बात है लाल भैया !”—रेखा संजीदा स्वर में बोली—“जाओ तुम अकेले ही घूमने....मगर याद रखो तुम अपनी जीवन—रेखा को छोड़कर ज्यादा दूर तक आगे नहीं जा सकते.... आज नहीं तो कभी तुम्हें मेरी आवश्यकता पड़ेगी ही...हाँ, लाल-भैया ! तुमने कुछ सुना ?....”

“क्या ?....”

“एक क्रान्तिकारी को फाँसी की सजा हुई है आज !”

“तो....”

“और क्रान्तिकारी-दलवाले आज रात में जज साहब की जान लेंगे...”

सुनकर लाल चौंक पड़ा । साँचने लगा, क्या रेखा ने कल छिपकर भिखारी से उसकी सारी बातें सुन ली थीं ।

“तुम्हें कैसे मालूम हुआ रेखा ?” उसने पूछा ।

“अभी कल रात जज चाचा आये थे और पिताजी से बहुत देर तक बातें करते रहे....बहुत डर गये थे बेचारे...”

“तू आजकल बहुत बात बनाना सीख गई है रेखा !”

“तुम्हारे साथ चलूँ तो रिवाज़र बनाना भी सीख जाऊँ लाल भैया !....यही एक साध रह गई है मन में कि मैं तुम्हारे साथ चलने योग्य न बन सकी....कांशिश तो कर ही रही हूँ...”

“रेखा ! मैं कहता हूँ, मुझे एकान्त चाहिये....तुम अभी चली जाओ....”

“मैं जाती हूँ लाल भैया !”—रेखा का स्वर आर्द्र हो उठा था—“मुझे तुम्हारा साथ चाहिये और तुम्हें चाहिये एकान्त....मुझे जाना ही पड़ेगा...क्या तुम्हें मेरा कुछ मोह नहीं लगता लाल भैया ? पहले तो ऐसे नहीं थे तुम !....जब से तुम उस बड़े शीशे में अपना

मुँह देखने लगे हो, तभी से मुझसे बात-बात पर बिगड़ जाते हो। कभी मुझे भी उस शीशे में अपना मुँह देखने दो। मैं भी तो देखूँ, देश की परतन्त्रता का बन्धन कितना खुल चुका है।....बड़ा अच्छा शीशा है यह लाल भैया !”

“रेखा तुम्हारी जबान अगर तलवार होती तो अच्छा था।”

“तलवार की लड़ाई तो पुरानी पड़ गई है लाल भैया !....आज कल तो गोली की मार चलती है। जिस दिन मेरी बोली में गोली की तेजी आ जाय, तभी मानोगे मुझे...”

लाल खीझ उठा था। उसने आगे बढ़कर रेखा की बाँह पकड़ ली और उसे ढकेल कर बाहर कर दिया—“निकल यहाँ से शैतान कहीं की....”

“पहले बाँह पकड़ते हो फिर धक्का देते हो”—रेखा बोली—“पुरुषों की यह आदत छूटेगी नहीं कभी....तुम्हारी यह आदत न छुड़ा दी, तो मेरा नाम रेखा नहीं....”

रेखा चली गई। लाल परेशान-सा कुर्सी पर बैठ गया।

यह रेखा आजकल बड़ी गहन-गम्भीर बनती जा रही है लाल के लिये। वह समझ नहीं पाता कि रेखा क्या कहती है, क्या चाहती है।

लाल जानता है कि रेखा उसका अधिकांश भेद जान चुकी है, फिर भी वह उसे और अधिक जानने नहीं देना चाहता। जितना वह जान चुकी है, उतने तक में सीमित रहे, यही अच्छा है। पुलिस सुपरिण्टेंडेंट की बेटी इससे अधिक और क्या उसकी सहायता कर सकती है।

रेखा !

वह आजकल बदल गई है। उसने अपने अन्दर की जीवनी-शक्ति को जग लिया है। वह लाल को समझ चुकी है और जब से उसने उस बड़े से शीशे में अपना चेहरा देखा है, उसे लगता है, वह सुकुमार युवती नहीं, रणचण्डी है, शक्ति की प्रेरणा की गति है।

वह लाल का सहारा चाहती है और लाल अपना सहारा उसे देना नहीं चाहता । शायद उसे रेखा पर, उसकी शक्ति पर विश्वास नहीं....या उसे रेखा की आवश्यकता ही नहीं ।

रेखा अब लाल के सहारे से कुछ-कुछ निराश हो चुकी है । पुरुष से उपेक्षित नारी अब स्वयं अपना मार्ग निर्धारित करने को तत्पर है ।

वह अकेले ही लाल से आगे बढ़ना चाहती है ।

रेखा जब घर आई तो मिस्टर शर्मा कहीं जाने को तैयार थे ।

रेखा का देखकर बाले—“घूम कर आ रही हो बेटी ?”

“गई तो थी इसी इरादे से”—बाली वह—“मगर लाल भैया लाल-पीले हां पड़े । अब नहीं जाऊँगी घूमने पिता जी !...”

“मैं जज साहब के बँगले पर जा रहा हूँ....कोई फोन आवे तो बता देना....”

मिस्टर शर्मा कार पर जज साहब के घर आये । आज पुलिस की पूरी फौज पहरे पर तैनात थी ।

वहाँ कुछ जरूरी हिदायत देकर वे लौटने लगे, तो—

“कहाँ ?” जज साहब का चेहरा आज पीले से बदलकर सफेद हो रहा था ।

“मैं बहुत जल्द लौटूँगा”—मिस्टर शर्मा बोले—“जेल जाकर उस मुजरिम चन्द्रनाथ से भेंट करनी है....शायद कुछ काम की बातें निकल आवें....”

“अच्छा तो, मगर जल्दी लौटियेगा ! मेरा केवल आप पर ही विश्वास है....”

“आप चिन्ता न करें....”

मिस्टर शर्मा कार पर जा चढ़े ।

पाँच मिनट बाद ही वे जेलर के कमरे में थे ।

“मैं चन्द्रनाथ से भेंट करना चाहता हूँ....अकेले ही....गुप्त बातें करनी हैं...” उन्होंने कहा ।

मिस्टर शर्मा आये तो सन्तरी ने सलाम ठोका । चन्द्रनाथ ने चिन्तित मुद्रा से उन्हें देखा ।

“तुम जाओ....” मिस्टर शर्मा ने सन्तरी को आज्ञा दी और वह चला गया ।

चन्द्रनाथ काल-कोठरी में रखा गया था । आस-पास दूसरे बैरक नहीं थे । रात के आठ बज रहे थे । अन्धकार गाढ़ा हो चला था ।

“आप आ गये ?....” चन्द्रनाथ ने कहा—“देखिये, मैं जो भेद बता रहा हूँ, वह सरकार के बड़े काम की चीज हैं । इसके बदले में मेरी जान ही बख्शी जाय, मैं यह नहीं चाहता....”

“तब क्या चाहते हो ?....”

“कोई सरकारी आहदा !...”

“मिलेगा”—मिस्टर शर्मा ने कहा—“मैं सिकारिश कर दूँगा । ....हाँ, तो तुम बलवाइयों का सारा भेद जानते हो ?...”

“जी हाँ ! एक-एक आदमी का नाम-पता बता दूँगा....”

“इस गिरोह का सरदार कौन है, जानते हो ?”

“यही एक भेद नहीं जानता....उससे मिल चुका हूँ, मगर वह कौन है, इसे कोई नहीं जानता....मगर क्या मेरी इतनी सहायता पर्याप्त नहीं ?...”

“बहुत है”—मिस्टर शर्मा बोले—“तुम थोड़ी देर रुको । मैं फोन करके जज साहब का भी पहरे के अन्दर यहीं बुलाता हूँ । उनके सामने ही सारा बयान लेना ठीक होगा....”

“जो कुछ करना हो जल्दी कीजिये....आप मण्डल की शक्ति नहीं जानते....मुझे अपनी जान का खतरा है...”

“चन्द्रनाथ ! यह न भूलो कि जेल है और यहाँ पर जो क्रांति-कारी आयेंगे, वे हाथों में हथकड़ी पहन कर ही....”

कहकर मिस्टर शर्मा चले गये ।

जंगले के भीतर खड़ा हुआ चन्द्रनाथ अन्धकार में घुसती हुई आकृति देखता रहा फिर काल-कोठरी में व्यग्रभाव से टलहने लगा, दो ही मिनट बाद—

“चन्द्रनाथ !...” बड़ा ही गम्भीर स्वर आया ।

“क्या है सन्तरी ?” चन्द्रनाथ ने सोचा सन्तरी लौट आया है ।

मगर....

मगर जंगले के बाहर देखते ही उसकी आँखों का आस्मान फट पड़ा ।

एक धुँधली-सी छाया, काले कपड़ों से ढँकी । हाथ में एक भयानक रिवाल्वर !

चन्द्रनाथ का शरीर तूफान का भोंका बन गया—“तु....तुम.... आप कौन हैं ?”

छाया ने हाथ की अँगुली से अपना मस्तक खुजलाया । बोली—“खबरदार जोर से बोलने की कोशिश मत करना....”

“ओह !....” हताश स्वर था चन्द्रनाथ का—“सरदार आप ?....यहाँ मुझे छुड़ाने आये हैं ?”

“आया था छुड़ाने ही मगर अब तुम्हें यहीं दफन करके जाऊँगा”—छाया ने कहा—“क्रांति के दूत जेलों में नहीं सड़ सकते, मगर तुम तो कुत्ते निकले चन्द्रनाथ !....मेरा भी भय न लगा तुम्हें ?....देश के प्रति वफादारी का वादा तो तुम भूल ही गये, परन्तु सरदार के रिवाल्वर की शक्ति भी तुम्हें याद न रही....”

“मुझे क्षमा कीजिये सरदार !....मुझे यहाँ से ले चलिये.... मैंने अभी उन्हें कुछ भी नहीं बताया है....अब भी समय है....”

“समय बीत चला चन्द्रनाथ ! अब कुछ नहीं हो सकता...”

“कुछ नहीं ?....”

“नहीं !....”

“तो तुम भी यहाँ से नहीं भाग सकते....” चन्द्रनाथ तेज स्वर में बोला—“मैं चिल्लाऊँगा....शोर करूँगा....तुम्हारी गोली खाकर भी मरते दम तक चिल्लाता रहूँगा मैं....तुम भाग नहीं सकते...भाग नहीं सकते सरदार !....”

“चन्द्रनाथ चिल्लाओ मत, कोई सुन नहीं सकता। सन्तरी को बाँधकर मैं उधर छोड़ आया हूँ।....काई मुझे रोक भी नहीं सकता....खैर ! इसे छोड़ो....क्या तुम्हें अपने किये पर पश्चाताप है। क्या तुम बाहर निकल कर अब भी ईमानदारी से मण्डल की सेवा करोगे ?....”

“सरदार ! मुझे यहाँ से ले चलिये....”

“फिर तो तुम दगा नहीं दोगे....१”

“नहीं सरदार ! कभी नहीं...सांते-जागते कभी नहीं....”

“मैं सब तैयारी करके आया हूँ—मगर यहाँ से निकलने के पहले तुम्हें अपने अपराध की सजा भुगतनी पड़ेगी....”

“मैं तैयार हूँ...चन्द्रनाथ ने कहा।

“इधर आओ....जंगले के पास...”

चन्द्रनाथ जंगले के पास आ गया।

मुँह खोलो और अपनी जीभ सीकचों से बाहर निकालो।”

“लीजिये...” चन्द्रनाथ ने आज्ञा पालन की।

“ठीक है...” सरदार के हाथ में कोई चीज चमकी, आगे बढ़ी विद्युत गति से और चन्द्रनाथ चीख पड़ा। उसकी जीभ कटकर सरदार के हाथ में आ गई थी।

“अब खूब चिल्लाओ...बता दो जितना भेद तुम्हें बताना हो कुत्ते ! इसी मौत के काबिल थे तुम....अब तुम्हारे दोनों हाथ तोड़ दूँ, ताकि तुम लिखकर भी कुछ बता न सको....मरो, मरना ही तुम्हारे हकमें अच्छा है मगर मेरे हाथों नहीं सरकारी कुत्तों के हाथ मरो...”

सरदार का रिवाल्वर सजग हुआ।

धौंय ! धौंय !

और चन्द्रनाथ के दोनों हाथ नीचे लटक पड़े। वह धुँधली छाया तेजी से एक ओर जाकर विलीन हो गई।

एक ही मिनट बाद मिस्टर शर्मा दौड़े आये। गोली की आवाज उनके कानों में पड़ी थी।

“क्या हुआ ?...क्या हुआ चन्द्रनाथ ?...”

मगर चन्द्रनाथ बोले तो कैसे बोले ? पीड़ा से छटपटाता हुआ जमीन पर लोट रहा था वह।

तभी जेलर साहब तथा कई वार्डर दौड़े आये। साथ में कई लालटेन भी थीं।

“यह गोली की आवाज कैसी थी ?...” जेलर ने पूछा।

“मैं इससे बातें करके आपके आफिस की ओर आ रहा था कि गोली की आवाज सुनकर इधर दौड़ आया”—मिस्टर शर्मा बोले—“इसे किसी ने गोली मार दी है ...”

काल-कोठरी का ताला खोला गया। देखकर सभी सन्न रह गये।

“इसकी जीभ काट ली गई है और दोनों हाथ तोड़ डाले गये हैं कि यह कोई भेद न बता सके”—हताश स्वर में मिस्टर शर्मा बोले।

जेल में खतरे का घण्टा बज उठा। चारों ओर पुलिस के दल दौड़ पड़े। जेल में दिन-सा प्रकाश फैल गया। मगर उनके हाथ कोई न लगा।

वे शायद यह नहीं जानते थे कि धुँधली छाया अन्धकार में ही दिखाई पड़ सकती है, प्रकाश में तो वह लुप्त हो जाती है।

टेलीफोन भी खटक रहे थे। जासूसों की दौड़-धूप शुरू हो गई थी।

“मैं चलता हूँ”—मिस्टर शर्मा जेलर से बोले—“मुझे जज साहब की भी खबर लेनी है...”



जज साहब के मकान से थोड़ी ही दूर पर एक पतली-सी अँधेरी, बदबूदार गली है, जहाँ मनुष्य के पैर शायद ही कभी पड़ते हों। दो नक्काबपोश एक मकान के पिछवाड़े छिपे खड़े हैं। कभी-कभी दोनों अपने चारों ओर गौर से देख लेते हैं।

“लाल !...”

“जी हाँ !...”

“तैयार हो तुम ?...”

“बिल्कुल सरदार !...”

“दिल में कोई हिचक, कोई भय तो नहीं ?”

“जी नहीं...”

“चन्द्रनाथ का अन्त तुम सुन चुके हो...रास्ते से बाहर पैर रखते ही तुम्हारी भी यही गति होगी...समझ गये ?...”

“मुझे अपने पैरों पर विश्वास है, वे कभी रास्ते से दूर नहीं जा सकते”—लाल ने कहा।

“तुमने अपना वेश बदल लिया है न ? मुँह पर दाढ़ी-मूँछें...”

“मैं बिल्कुल तैयार हूँ सरदार !...”

“तो देखो !”—सरदार बोला—“इस वाटर-पाइप के सहारे तुम इस मकान की छत पर पहुँचोगे...छत ही छत जज साहब के बैंगले की छत पर पहुँचकर रौशनदान से...”

“मैं समझ गया...”

“भागते वक्त सावधान रहना...उधर कोने में एक मोटर साइकिल खड़ी है...उसमें काफी पेट्रोल है...देख लिये गये, तो दूर भागना, दो-चार दिन में वापस आना...अगर कोई देख न सके तो तुरन्त अपने घर चले जाना...अब मैं चलता हूँ...”

सरदार धीरे से चला गया।

लाल ने अपनी नक्काब ठीक की, फिर वाटर-पाइप के सहारे धीरे-धीरे ऊपर चढ़ने लगा। थोड़ी ही देर में वह उस मकान की छत पर था।

सेशन जज मिस्टर सक्सेना आज अपनी जान हथेली पर रखे कमरे में कोच पर बैठे थे ? उन्हें अपने बचने की तनिक भी आशा नहीं थी। उन्हें पुलिस और जासूसों पर जरा भी विश्वास नहीं था।

कमरे के बाहर पुलिस का जाल बिछा था। सभी सतर्क थे।

तभी मिस्टर शर्मा बड़बड़ासे वहाँ आये।

जज ने उन्हें देखकर सन्तोष की साँस ली।

बोले—“आपने तो बड़ी देर कर दी मिस्टर शर्मा ! एक-एक मिनट काटना हमारे लिये भारी हो रहा है...”

“मैं भी बड़ा परेशान-हूँ मिस्टर सक्सेना !...जेल में बड़ी आश्चर्यजनक घटना घट गई...”

“क्या हुआ ?”—जज भयभीत स्वर में बोले।

“मैं चन्द्रनाथ से मिला”—मिस्टर शर्मा बोले—“तो उसने सारा भेद बताना मंजूर कर लिया....मैं जेलर के आफिस की ओर बढ़ा आपको फ़ोन करने के लिये, कि बीच ही में रिवाल्वर की आवाज आई। दौड़कर गया तो देखा, किसी ने चन्द्रनाथ की जीभ काट ली है और उसके दोनों हाथ तोड़ डाले हैं !...”

“उफ़ !....क्या होगा मिस्टर शर्मा ?....न जाने क्या होना चाहता है ?” जज उल्टी साँसें लेने लगे—“आप क्या जेलर के आफिस तक नहीं पहुँच पाये थे...”

“जी नहीं !...पाँच मिनट तो मुझे आते-जाते ही लग गये और पहुँचने के पहले ही...जेलर का आफिस काल-कोठरी से दूर भी तो है....”

“आपके जाने के बाद चन्द्रनाथ के पास और कोई नहीं था क्या ?...वार्डर क्या सब मर गये थे ?”

“रास्ते में वार्डर को मैंने उधर भेज तो दिया था....”

कमरे के ऊपर चारों ओर चार रौशनदान थे। इन्हीं में से एक रौशनदान के पास छिपा हुआ लाल उपस्थित था। उसने अपना रिवाल्वर निकालकर हाथ में ले लिया था और रौशनदान की राह लक्ष्य कर रहा था।

तभी लाल चौंक पड़ा।

उसके मुख से शब्द निकलते-निकलते बचा।

उसने देखा, उसके सामनेवाले दूसरे रौशनदान से निकला हुआ एक दूसरा रिवाल्वर भी जज साहब की खोपड़ीका लक्ष्य कर चुका है।

लाल हैरान था।

दूसरे रौशनदान के पास कौन है, वह नहीं देख सकता था। क्या सरदार को उस पर विश्वास नहीं था, जो उन्होंने दो व्यक्तियों को एक ही कार्य पर तैनात कर दिया ?

अभी लाल इस पर विचार कर ही रहा था, कि—  
घाय !

उस ओर के रौशनदान से आवाज आई और वह रिवाल्वर लुप्त हो गया। हत्या लाल के हाथों नहीं हो सकी, फिर भी लाल को सन्तोष था कि कार्य पूरा हो गया। अब वह भागने की ताक में लगा।

नीचे बड़ा शोर मच गया। जज साहब की खोपड़ी टूट चुकी थी और उनके प्राण उड़ गये थे। मिस्टर शर्मा हाथ मल रहे थे और दौत पीस-पीस कर सिपाहियों को हुक्म दे रहे थे।

“गोली रौशनदान से चलाई गई है....इधर देखो....दौड़ो जल्दी” मिस्टर शर्मा चिल्लाये।

सिपाही भागने-दौड़ने लगे।

उसी समय रेखा दौड़ी आई।

बोली—“पिताजी ! दाई की तबियत एकाएक खराब हो गई है । जल्दी चलिये”—तभी उसकी दृष्टि खून से लथपथ जज साहब की लाश पर पड़ी—“अरे ! चाचाजी को क्या हुआ ?...बाप रे बाप !....” वह चीख पड़ी ।

“रेखा !” मिस्टर शर्मा ने कहा—“तू किसी डाक्टर को लेकर घर जा....मैं अभी नहीं चल सकता...जज साहब का खून हो गया है....”

रेखा की आँखों में आँसू आ गये । बोली—“आप यहाँ से चलिये, यहाँ खतरा है पिता जी !...”

मिस्टर शर्मा ने प्यार से रेखा का सर सहलाया—“पगली ! ऐसा तो होता ही रहता है....तू घर चली जा । डाक्टर लेती जाना और दाई को ठीक से दवा दे देना...आज तो शायद मैं घर न आ सकूँ...”

रेखा चली गई ।

तभी सिपाही चिल्ला उठे—“वह है...वह भागा जा रहा है....”

मिस्टर शर्मा वहाँ से गरज कर बोले—“पकड़ो ! जाने न पावे बेइमान...”

छत-छत भागता हुआ लाल देख लिया गया । पुलिस ने भी छत-छत ही उसका पीछा किया । आखिरी मकान पर पहुँच कर लाल धड़ाम से नीचे कूद पड़ा । छत नीची थी, अतः चोट अधिक नहीं आई ।

पास ही खड़े हुए दो सिपाहियों ने लाल को पकड़ना चाहा, मगर लाल के रिवाल्वर ने उन्हें सुला दिया । दौड़कर लाल मोटर-सायकिल पर जा चढ़ा । मोटर सायकिल भाग चली ।

पुलिसवाले भी असावधान न थे । थोड़ी ही देर बाद लाल का मालूम हो गया कि एक कार पूरी तेजी से उसका पीछा कर रही है । लाल ने अपनी स्पीड और तेज की । रात का समय, चारों

ओर सन्नाटा ! लाल की मोटर सायकिल शहर का रास्ता छोड़कर देहाती मार्ग पर भाग चली ।

पीछेवाली कार काफी पीछे थी, परन्तु उस पर से चलाई जाती हुई गोलियाँ लाल तक पहुँच रही थी । डर था कि कोई गोली लाल की खोपड़ी न ठीक कर दे ।

सड़क पक्की थी । दोनों आंर लहराते हुए गोहूँ-जौ के खेत खड़े थे ।

एक गोली आई और लाल की पिछली पहिया धड़ाके के साथ बस्टे हो गई । लाल भी गिरते-गिरते बचा । उसने मोटर सायकिल का मोह छोड़ दिया और तेजी के साथ बगल के खेत में घुसकर भागने लगा । गोहूँ के पौधे काफी बड़े थे । लाल को छिपकर भागने में विशेष असुविधा नहीं हुई । लाल ने अपना काला लबादा और नकाब उतार कर फेंक दी ।

भागने की धुन में उसे ध्यान ही न रहा कि पुलिस की एक गोली से उसका बायाँ पैर भी जखमी हो गया है । घाव साधारण ही था । गोली माँस छीलती हुई निकल गई थी ।

पुलिस की कार लाल की बेकाम मोटर सायकिल के पास आकर रुक गई । टार्च के सहारे आस-पास के खेतों में प्रकाश फेंका जाने लगा ।

परन्तु लाल का पता न लगा ।

लाचार पुलिस की कार लाल की मोटर सायकिल लाद कर लौट पड़ी ।

जज की हत्या से सरकारी कर्मचारियों की नींद हराम हो गई थी । चारों ओर टेलीफोन-तार भेजे जा रहे थे । उच्च अधिकारियों को भी इस हत्या का समाचार भेज दिया गया था ।

मिस्टर शर्मा रह-रहकर पुलिसवालों पर बिगड़ रहे थे । वे बहुत क्रोध में थे । इस समय जज साहब की मृत्यु से उनका सर नीचा हो गया था ।

जब पीछा करनेवाले सिपाही निराश लौटे और उन्होंने मिस्टर शर्मा को अपनी असफलता का हाल सुनाया, तो वे उबल पड़े और कुछ भद्दी गालियाँ उन काठ के पुतलों को दे डालीं।

उधर घर पररेखा दाई की तिमारदारी में परेशान हो रही थी।

“रेखा ! ओ रेखा...”

“अब सां जाओ दाई ! आधी रात तो बीत गई। चिल्लाती रहोगी तो डाक्टर की दवा का असर कैसे होगा ?”—रेखा पलंग पर लेटी-लेटी बोली।

“तुमसे उठा नहीं जाता ?” बुढ़िया चीखकर बोली—“जिन्दगी बिता दी इसके पालने-पोसने में और आज जब खुद मरने लगी तो इसकी जवान को गरुड़पुरान सूझ रहा है...उठती है...या नहीं...”

“लो उठ गई—बालो क्या कहती हो ?”—रेखा पड़े-पड़े बोली।

“एक गिलास पानी दे मुझे...” दाई ने कहा।

“जाड़े में इतना पानी पीती हो, तभी पेट में जाकर बर्फ बन जाता है...और तब लगती हो चिल्लाने पेट दर्द से...डाक्टर भी क्या खाक दवा करेगा....!”

“तेरा डाक्टर गया भाड़ में...ओ रेखा ! मुनती है...तेरा डाक्टर...अरी, मेरी बिल्ली को दूध पिलाया या नहीं ?...”

“बिल्ली गई भाड़ में”...रेखा तुनक कर बोल उठी—“यह बुढ़ापा भी जवानों के लिये काल है...आज चारपाई पर पड़ी तो दुनिया भर का काम...”

“अरे तू भी कभी बूढ़ी होगी रेखा !...तब देख लेना, चारपाई तेरे लिये चुम्बक न बन जाय, तो कहना—पानी पिलाती है मुझे या नहीं ?....”

“देती हूँ दाई !...तुम तो जैसे भूडोल मचा देती हो...”

“इतना जोर से न चिल्लाऊँ, तो तेरे कान पर कीड़े भी न रेंगे...” बुढ़िया ने कहा।

रेखा ने उठकर बुढ़िया को पानी पिला दिया। एक घूँट पीते ही बुढ़िया चीख उठी—“भगवान भला करे इस लड़की का ! बूढ़ी को पानी भी देती है तो बर्फ डालकर....”

“बर्फ नहीं डाला है दाई ! नल का पानी है यह तो...तुम्हारे लिये कुआँ खोदकर पानी कहाँ से लाऊँ ?”

“रेखा बेटी !...” बाहर से मिस्टर शर्मा ने पुकारा।

रेखा ने दौड़कर दरवाजा खोला—“आ गये पिता जी !”

“दाई की कैसी तबियत है ?”—अन्दर आते हुए मिस्टर शर्मा ने पूछा।

“अब ठीक है”—रेखा बोली और दरवाजा बंदकर अन्दर आई।

मिस्टर शर्मा सीधे अपने कमरे में चले गये।

पीछे-पीछे रेखा भी आई। उसने देखा, आज उसके पिता का चेहरा अतिशय गम्भीर है।

“खाना लाऊँ पिता जी ?”

“आज नहीं बेटी !...इच्छा नहीं है...अब सोना चाहता हूँ” मिस्टर शर्मा पलंग पर जा पड़े।

“कुछ पता लगा खूनी का...” रेखा ने पूछा।

“नहीं बेटी !...वह हाथ से निकल गया...अब तुम जाओ...”



सारा लखनपुर गाँव इस समय सो रहा है। छोटी-सी बस्ती है, १०-२० घरों की। सभी किसान हैं, खून को पानी बनाकर खेत सींचनेवाले इन गरीबों की दुनिया ही न्याारी है। सुख में भी खुश और दुख में भी। न किसी का लेना, न देना।

बूढ़ा जियावन अभी तक जाग रहा है। चारपाई पर कथरी ओढ़े पड़ा हुआ हुक्का पी रहा है। जमाना देखी हुई आँखें रात में भी देखती ही रहना चाहती हैं, साना नहीं। ज़ाएँ-शीएँ झोपड़ी बूढ़े के शरीर की तरह बूढ़ी हो चली। दीपक का सारा तेल जल चुका है और उसकी लौ काँपते-काँपते आखिरी साँस ले रही है।

नयना की जवान आँखों में नींद खेल रही है, लेकिन बाप से पहले वह साना नहीं चाहती थी। बूढ़े के पायताने बैठकर वह उसका पैर दबा रही है।

गरीब बेटी की जवानी बाप के बुढ़ापे का साथ दे रही है। खेलों की मिट्टी में खेलते-कूदते नयना का बचपन जवान बना, तो बूढ़े बाप को चिन्ता हो आई। बिना माँ की अकेली लड़की, अगर बाप ने कभी आँखें बन्द कर लीं, तो किसका सहारा लेगी बेचारी ?

बूढ़े ने हुक्का ज़मीन पर रख दिया था और आँखें बन्द किये यही सब सोच रहा था।

तभी दीपक की लौ एक बार काँपकर अन्धकार की गाँद में बेहोश हो पड़ी।

“बापू...!” नयना का स्वर इतना मीठा था जैसे दूर की अमराई से किसी परदेसी की बंशीध्वनि कानों में आ पड़ी हो।

“.....”

बूढ़ा चुप रहा। ध्यानमग्न चिन्तित !

“सो गये क्या बापू...?”

“ऊँ...नहीं तो बिटिया ! क्या है ?”

“नींद नहीं आ रही है बापू तुम्हें ?...”

“अब क्या नींद आयेगी नयना !...अब आयेगी तो वही महानिद्रा, कि मोहमाया सब कुछ छुड़ाकर बोलता पंखी उड़ा ले जायगी अपने साथ...”

“तुम कैसी बातें करते हो बापू ?”—नयना ने कहा—“मुझे

नहीं सुहाती ऐसी बातें....आज तुमने कुछ खाया नहीं। ऐसा कब तक चलेगा ?...”

“अरे पगली !....अभी तो दोपहर की ही लिट्टियाँ पेट में पत्थर बन रही हैं....पेट की आग भी तो अब जलते-जलते बूढ़ी हो चली बिटिया, अब क्या इतनी जल्दी-जल्दी पचेगा ? तू ही क्यों नहीं खा लेती ? मेरा मुँह कब तक देखती रहेगी ?”

“मुझे भी भूख नहीं है बापू !...लिट्टियाँ रखी हैं कल खालेंगे” फिर दोनों चुप हो रहे। नयना पैर दबाती रही। बूढ़ा पड़ा रहा।

“बापू !....”

“क्या है ?...”

“मनोहर बड़ा वैसा आदमी है...”

“कौन मनोहर ? भोला का छोकरा...”

“हाँ बापू !...”

“कैसा है वह ?—”

“बड़ा वैसा...बहुत खराब है वह बापू ! मुझसे ऐसी बातें करता है, जो कभी किसी ने नहीं कही...उसे मना कर दो तुम बापू !...”

“क्या कहता है वह बेइमान ?”

“मैं क्या जानूँ ?...मुझे देखकर जाने क्या-क्या बकने लगता है...शहर से थोड़ा पढ़ के क्या आया है कि बात करता है तो पहेली बनाकर कि कुछ समझ में ही नहीं आती....कहता है ‘तुम चाँद हो’...भला जमीन का इन्सान भी कभी आसमान का चाँद बन सकता है बापू !...”

“नहीं रे नहीं ! वह जो कहता है, उसका मतलब मैं समझता हूँ। कल उसे ठीक कर दूँगा...भोला ने छोकरे को नाक का बाल बना डाला है कि कोई छू भी न सके...मैं सब जानता हूँ। यह भोला भी कम नहीं है...”

“अब सो जाओ बापू !....रात बहुत बीत चली है...मैं भी सोऊँ न ?...”

“हाँ, तू सो जा...”

बाप-बेटी सोने की चिन्ता में लगे ।

नयना तो पड़ते हो सो गई । बूढ़ा भी धीरे-धीरे खराटे भरने लगा ।

घंटे भर बाद भोपड़ो का दरवाजा किसी ने खटखटाया । नयना का थका शरीर जवानी की मीठी नींद में बेहोश था परन्तु बूढ़े की पलकें उस आवाज से पिजड़े के फाटक की तरह खुल गईं और नींद पंखी बनकर उड़ चली ।

“नयना !...बिटिया !...”

मगर नयना न जागी, न हिली, न बोली । नींद क्या थी कि हिमालय की चट्टान बन गई थी कि हटायें नहीं हटती थी ।

तभी भोपड़ी का दरवाजा फिर खटका ।

बूढ़ा कराहते हुए उठा—“आता हूँ भाई !...ज़िन्दगी क्या है कि रात में भी न चैन, न आराम...और नयना तो ऐसी सां जाती है कि इसका बाप भी जवानी में इस तरह घोंड़े न बेचता रहा होगा....”

दरवाजा खोला तो बूढ़े का एक परदेसी दिखाई पड़ा....

“बाबा ! रात भर के लिये शरण दे दो...बड़ा उपकार होगा... पैर में चोट लगी है, चल नहीं सकता....आधी रात को किसे कहाँ पुकारूँ ?...”

“मुझे पुकार लिया है, यही बहुत है बेटा !”—बूढ़े ने कहा—  
“रात भर ही क्यों, दो-चार दिन रह सकते हो...आओ अन्दर आओ...नयना ! ओ बिटिया ?....उठती है या नहीं ?...”

“उठ गई बापू !—कौन है ? दिया जला दूँ ?...”

“हाँ बिटिया ! एक परदेसी मेहमान है....जला दे दिया—”

नयना ने दीपक में तेल डालकर उमे जलाया। क्षीण रोशनी झोपड़ी में फैल गई।

नयना ने परदेसी को देखा—पुष्ट शरीर, गर्द से भरे कपड़े मुँह पर घनी दाढ़ी-मुँछें।

और परदेसी ने नयना को देखा—गाँव की सुन्दरता जैसे कीचड़ में से कमल खिल आया हो, जैसे धूल के बीच हीरे का टुकड़ा हँस रहा हो।

“बाबा ! यह तुम्हारी बेटी है ?” परदेसी ने पूछा।

“हाँ बेटा !—अभी नासमझ है। नींद में होती है, तो गाज गिरने पर भी नहीं उठती—आओ बैठो—”

परदेसी बैठ गया।

“तमाखू पीते हो ?...”

“नहीं बाबा !....”

“भूखे हो ?”

“रहने दो बाबा ! इन्सान की भूख भी क्या कभी जा सकती है ?—पेट न हो तो इन्सान पंगु बनकर बैठा रहे—इतनी रात में खाना भी क्या अच्छा लगेगा ?—”

“देखो बेटा ! तुम यहाँ आ पड़े हो तो हमारा कर्त्तव्य तो निभेगा ही....रुखी सूखी ही सही....नयना ! रोटियाँ रख छोड़ी है न ?...ला दे मेहमान को....”

नयना चली गई।

“बाबा !....” परदेसी ने कहा—“तुमने मुझे शरण देकर मेरा बड़ा उपकार किया...मैं बहुत ऋणी हूँ तुम्हारा....”

“छोड़ो तुम इन सब बातों को...तुम्हारे पैर में चोट लगी है?”

“है तो मामूली-सी...”

“लाओ देखूँ, हो सके तो पट्टी बाँध दूँ...”

परदेसी ने अपने पैर का घाव दिखा दिया। बूढ़ा दीपक की

रोशनी में उस घाव को देर तक देखता रहा। उसकी आँखें आश्चर्य से फैलते-फैलते गुफा-सी बन गईं।

“बेटा !...”

“हाँ बाबा !....”

“यह घाव....यह घाव कैसे लगा तुम्हें ?....”

“गोली से....”

“किसकी गोली ?” बूढ़े का स्वर कठोर था।

“पुलिस की....” परदेसी ने कहा।

“तुम चोर हो ?....ढाकू हो ?....क्या हो तुम ?....कौन हो ?”

“मैं चोर ढाकू नहीं बाबा !...विश्वास करो मुझ पर...तुम कहो, तो मैं अभी चला जा सकता हूँ...किसी पर बोझ बनने से क्या लाभ ?”

“परदेसी ! बोझ ढोते-ढोते ही तू मेरी जवानी का यह रूप हो गया है, जो जरा से बोझ से अब क्यों घबड़ाऊँगा....हम गाँव वाले इन्सान की जवान का विश्वास करते हैं। तुम चोर-ढाकू नहीं हो, तो रहो। पुलिस की क्या बात ? वह तो भले आदमियों की मौत बन रही है आजकल !...” कहकर बूढ़े ने परदेसी के पैरों में फिटकरी की पट्टी बाँध दी।

तभी नयना छांटी-सी थाल में रोटियाँ ले आई।

परदेसी खाने लगा। नयना खड़ी-खड़ी उसका खाना देखती रही।

“बापू !....” बोली वह—“परदेसी मेहमान का हमारा यह खाना पसन्द नहीं। शहरी दाँत जरा कमजोर हाँते हैं। गाँव का खाना कैसे अच्छा लगे ?...”

“नहीं नयना ! तुमने बड़ी अच्छी रोटियाँ पकाई हैं”—बोला परदेसी—“अब तो दो-चार दिन खा कर ही टलूँगा....”

“अरे बेटा ! तुम हमेशा के लिये यहीं रुक जाओ तो हमारा बुढ़ापा कट जाय और मौत की अर्थी को दो कंधे भी मिल जाय...”

“परदेसी-मेहमानों का क्या ठिकाना बापू?... आज यहाँ, तो कल वहाँ...” नयना ने कहा।

“ठीक कहती हो नयना तुम !” परदेसी बोला—“मेरा शरीर बिका न होता, तो तुम लोगों के हाथ बेदाम बेच देता... फिर भी तुम लोगों का कभी-कभी याद तो करूँगा ही...”

ग्वाना समाप्त हुआ तो नयना ने परदेसी के हाथ धुनाये।

परदेसी ग्वाट पर सोया और नयना तथा उसका बूढ़ा बाप जमीन पर पड़ रहे।

रात बहुत थोड़ी रह गई थी। नयना की नींद टूटी तो फिर पलकों ने भपकने का नाम ही न लिया। वह परदेसी के विषय में ही सोचती पड़ी रही। परदेसी उसे जाने क्यों इतना अच्छा लगा था? जीवन में पहली बार उसने एक अपरिचित मनुष्य को इस तरह अपने एकदम निकट पाया था। परदेसी का सभी कुछ अच्छा लगा, परन्तु उनकी दाढ़ी-मूँछें उसे पसन्द न आई थीं।

घंटों तक जागती रहकर उसकी आँखें निद्रालु हुईं।

और जब नींद खुली तो काफी दिन चढ़ आया था। बूढ़ा रात रहे ही खेतपर चला गया था। परदेसी बेखबर सो रहा था।

नयना उठ बैठी।

उसने परदेसी पर दृष्टि फेंकी तो उसकी आँखों को स्वप्न-दिखने लगा।

रात में परदेसी के मुख पर घनी दाढ़ी-मूँछें थीं, परन्तु इस समय सलोना-सा जवान चेहरा दिखाई पड़ रहा था और दाढ़ी-मूँछें सरक कर बिस्तर पर एक ओर पड़ी थीं।

भोली नयना के लिये यह दृश्य ऐन्द्रजालिक था। आदमी की दाढ़ी-मूँछें भला इस तरह बेलाग अलग कैसे हो सकती हैं? नयना ने वैसा जादूगर आज पहले ही पहल देखा था।

कितना सुन्दर था इस जादूगर परदेसी का नया चेहरा। नयना

देखती रही, एकटक, अपलक। आँखों में अगर पीने की ताकत होती तो वह उस सौन्दर्य को एक ही घूट बना डालती।

आज नयना को न जाने क्या हो गया।

यह जादूगर उसके घर आया ही क्यों, जिसका चेहरा रात में दूसरा और दिन में दूसरा दिखाई पड़ता है।

नयना उठकर खड़ी हो गई और परदेसी की चारपाई के पास आ झुककर उसे ध्यानपूर्वक देखने लगी। आँखों की प्यास बुझती ही नहीं थी और पीने की ताकत भी ही नहीं। इतनी विवशता थी कि नयना व्याकुल हो उठी।

वह चारपाई पर बैठ गई। हाथ से उसने परदेसी के गाल छुए तो परदेसी चौंक पड़ा। उसकी आँखें खुल गईं। वह आश्चर्य में भरकर नयना को देखता रह गया।

“नयना !...” परदेसी उठ बैठा।

“परदेसी ! तुम बहुत अच्छा जादू जानते हो”—नयना ने चारपाई पर से नकली दाढ़ी उठाते हुए कहा—“तुम इन्हें अपने मुँह पर कैसे जमा लेते हो जी ?...”

“अब परदेसी को ध्यान आया। उसने झपटकर दाढ़ी-मूँछें ले लीं और अपने चेहरे पर तुरन्त लगा लीं। बोला—“नयना ! यह बात किसी से मत कहना...”

“कौन-सी बात ?”

“इस जादू की....”

“बापू से भी नहीं कहूँगी ?”

“नहीं, किसी से भी नहीं...हवा और पत्थरों से भी नहीं... समझ लो, तुमने स्वप्न देखा था...”

“नहीं कहूँगी परदेसी !....तुम जो चाहोगे वही करूँगी... अगर तुम जादू की दाढ़ी न लगाया करो, तो तुम्हारा चेहरा बड़ा भला लगे...”

“सच...!”

“सच परदेसी ! चाहो तो मेरी आँखों से पूछ लो । दिल तो तुम मेरा देख सकते नहीं, सुन सकते हो तो सुन लो—तुम मुझे बहुत अच्छे लगते हो । जी चाहता है हमेशा तुम्हारे साथ ही रहकर तुम्हारा जादू देखूँ...” नयना ने परदेसी का हाथ पकड़ लिया ।

परदेसी उस स्पर्श से चौंका, परन्तु उसने अपना हाथ हटाया नहीं । नयना तो विभोर थी । भूली-भूली सी परदेसी की आँखों में देख रही थी ।

“परदेसी !...तुम चले जाओगे ? चले जाओगे न...”

“आनेवाले को एक न एक दिन जाना ही पड़ता है नयना ! यह मजबूरी तो हर एक इन्सान के साथ है...”

“जिन्दगी में बहुत-से लोग आते हैं, मगर आँखों में बहुत कम बस पाते हैं परदेसी !...और जो आँखों में घर बना लेते हैं, वे जल्दी निकाले नहीं निकलते । ऐसा कभी तुम्हारे साथ भी हुआ है ?...”

“यह तो रोग है नयना ! इसका इलाज बड़ा कठिन है”—परदेसी ने कहा—“मुझे केवल एक ही रोग है और वह है देश की चिन्ता !...”

अपने गाँव और अपने देश की चिन्ता किसे नहीं होती परदेसी ?....और गाँव-देश में कुछ अपने लोग भी तो रहते हैं । उनका मोह क्या नहीं होता ?....”

“होता है, मगर देश-प्रेम के आगे व्यक्ति का प्रेम याद नहीं पड़ता....”

“तुम पता नहीं क्या कहते हो ?”—बोली नयना—“एक बात पूछती हूँ बताओगे न ?....तुम्हें एक पल देखकर ही पलकें निहाल हो गई हैं, ऐसा कैसे होता है भला ?....”

“इसे तो तुम ही जाना नयना !....”

“परदेसी ! तुम बड़े भोले हो....शहर में रहते हो, मगर इतनी

जरा-सी बात भी नहीं जानते ?....शहरी लड़कियों की भी ऐसी ही आँखें होती हैं ?”

“कैसी आँखें ?....”

“मेरी तरह, कि किसी को एक पल देखते पलकें निहाल !... परदेसी ! तुम न जाओ तो कैसा हो ? हम लोगों के पास रहो तो हम भी खुश रहें। बापू तो बस तुमको अपना बना लें...”

“मेरा बहुत दर्ज होगा नयना !...”

“दर्ज तो होगा ही”—नयना ने कहा—“मगर मेरी खुशी जो मर जायगी तुम्हारे जाते ही...जाने दो परदेसी ! किमकी-किसकी खुशी का ख्याल करोगे तुम ?...तुम्हारे तो बहुतों हैं, मुझे तो एक तुम ही मिल पाये हो। चले जाओगे, तो दिल पर रखने के लिये यहाँ पत्थरों की कमी नहीं...”

नयना की आँखें बह चलीं।

परदेसी कैसे समझाये इस ग्रामीण बाला को ? उसने अपनी हथेली से नयना के नयन पोंछ दिये तो वह स्पर्श नयना को बड़ा ही सुखकर प्रतीत हुआ। उसने परदेसी का हाथ पकड़कर अपनी आँखों पर जोरों से दबा लिया।

“परदेसी !...”

“बोला नयना !”

“आँखों से आँसू क्यों बह चलते हैं ?”

“दिल पर जब कोई चोट लगती है, तब आँखें बरस ही पड़ती हैं...” परदेसी ने कहा।

“चोट दिल पर लगती है और बरसती हैं आँखें ?”—नयना बोली—“तो क्या आँखों और दिल के बीच कोई डोर है परदेसी ?...क्या आँखों में आकर लोग दिल तक पहुँच जाते हैं ?...क्या आँखों में देखने से दिल की सूरत दिखाई पड़ सकती है ?....अगर ऐसा है परदेसी ! तो एक बार तुम मेरी आँखों में देखो....”

नयना ने अपने खुले नयन परदेसी की आँखों के सामने पसार दिया ।

“कुछ देख पाये ?”—

“मैं ही तो हूँ ।”—

“हाँ ! तुम्हीं हो....आँखों की डार पकड़ कर दिल तक उतर आये हो ।....और दिल तक जब आ चुके हो, तो बाहर नहीं निकल पाओगे परदेसी ! गांव के लोग किसी को घर में बसा कर फिर बाहर नहीं निकालते । अपने से तुम भले ही चले जाओ । ठाँकर मारने से दूसरों को चोट तो लगती ही है, मगर ठुकरानेवाला क्या कभी रुकता है अपनी दी हुई चोट देखने के लिए ?”

“नयना ! चाँद दूर आसमान पर हँसता है और उसे देखकर लोग पाने की लालसा से जमीन पर गड़े हाथ मारते हैं, परन्तु इससे जमीन और आसमान की दूरी तो कम नहीं होती । आसमान की चीज जमीनवालों का कैसे मिल पाये ? इतनी विवशता न हो तो दुनियाँ के लिए आँसू का मोल ही क्या ? ...”

“ठीक कहते हो परदेसी !....तुम चाँद हो और मैं जमीन की धूल ।....मगर यह न भूलो कि धूल भी हवा के साथ उठकर कभी आसमान छूने का सपना देख सकती है और सपने हमेशा भूठे भी तो नहीं होते...”

“नयना !....” परदेशी ने नयना का सर सहला कर कहा—  
“पता नहीं तुम मुझसे क्या चाहती हो ? मेरा परिचय जान पाओ तो घर से कॉप उठो । पुलिस हमेशा मेरी खोज में पड़ी रहती है । मैं अगर अधिक दिनों तक यहाँ रहा तो तुम लोगों पर आफत आ सकती है....”

“आफत का नाम लेकर तुम मुझे डराना चाहते हो परदेसी ?.... कभी देख सको, तो देख लेना कि तुम्हारे सामने नयना पर अगर

वज्र भी गिर पड़े तो वह तुम्हें देखते-देखते सह लेगी, मुँह से कराह भी नहीं निकलेगी...”

“मैं मज्जबूर हूँ नयना ! तुम इतनी भोली हो कि मेरी मज्जबूरी बताने पर भी नहीं समझ सकोगी....अपने दिल को बहता पानी न बनाकर कठोर पत्थर बनाओ । पानी ढाल पाते ही वह चलता है, मगर पत्थर तो अपनी जगह पर अडिग रहता है....”

“परदेसी बाबू ! आँखों में अगर पानी की नदी उमड़े तो पत्थर का कलेवा भी वह निकलता है....तुमने शहर के कठोर पत्थर देखे होंगे । गाँव की पहाड़ी चट्टानें तो दिन-रात रोती रहती हैं । विश्वास न हो तो चलो, उस तरफ एक सोता है तुम्हें दिखा दूँ....पत्थर की आँखों से निकला पानी कितना मीठा होता है और इन्सान की आँख का पानी खारा !....पत्थर रोते हैं तो कितनोंकी प्यास बुझती है और इन्सान तो रोकर खुद अपने दिल की भी प्यास नहीं बुझा पाता....”

“नयना ! चलो, सोते के किनारे चलकर बैठें....” परदेसी ने कहा ।

“चलो !....”

नयना उठी । परदेसी भी अपनी दाढ़ी-मूँछें ठीक कर उठ खड़ा हुआ ।

दोनों भोंपड़े से बाहर आये तो नयना की दृष्टि दरवाजे पर खड़े हुये हट्टे-कट्टे देहाती युवक पर पड़ी । वह चौंक कर बोली—  
“मनोहर तू ?....”

“हाँ-हाँ, मैं ही हूँ । पहचानती नहीं क्या ?”—

“कब से यहाँ खड़ा है ?....” नयना ने पूछा, अपने स्वर में रोष भर कर ।

“बस यही थोड़ी देर से”—मनोहर बोला—“सोचा, तुम्हें पुकार कर मीठी बातों में दखल क्यों दूँ ?...हाँ नयना ! यह कौन है तेरे साथ ?...”

“मेहमान !”—नयना ने कहा ।

“मेहमान !”—परदेसी को घूरते हुए मनोहर बोला—“तुम जरा दूर चले जाओ । मुझे नयना से कुछ बातें करनी हैं....”

“नहीं जी । तुम यहीं खड़े रहो—जो कहना है तुम्हारे सामने ही कहेगा....” नयना ने कहा ।

“नहीं-नहीं, मैं हट जाता हूँ”—कह कर परदेसी कुछ दूर जाकर खड़ा हो गया ।

“बोल, क्या कहता है ?”

“नयना ! हमसे आँखें मोड़ कर यह किस दड़ियल का बसा रही हो अपनी आँखों में ?”

“तुम्हें इससे क्या ?...मैं बहुत बार कह चुकी हूँ मनोहर ! मुझे तेरी बातें अच्छी नहीं लगती....ज्यादा दक करेगा तो बापू मे कड़ दूँगी....”

“अब और क्या कहेगी अपने बापू से....जो कहना था सो तो कह ही चुकी....आज सबेरे ही तेरे बापू मेरे यहाँ आये थे और आग बबूला होकर बापू से मेरी शिकायत कर गये । बापू ने भी मुझे दो चार चाँटे मार लिये, मगर प्रेम की राह में दो-चार चाँटे काँटे की तरह थोड़े ही चुभते हैं....”

“तू चला जा मनोहर ! नहीं तो अच्छा नहीं होगा....”

“मैं जाता हूँ, मगर तू यह याद रख कि चम्पा में जब ज्यादा महक आ जाती है तो लोग उसे हरी-हरी ढालों के बीच से खाँजकर तोड़ ही लेते हैं...तेरी महक भी अब क्या कम रङ्ग ला रही है । बूढ़े बाप के बल पर मत ऐंठ । उसे तो जभी चाहूँ, तभी....हाँ !....”

कहकर मनोहर परदेसी पर एक तीव्र दृष्टि डालता हुआ चला गया ।

नयना परदेसी के पास आई । दोनों साथ-साथ चलने लगे ।

“कौन था यह नयना ?...” पूछा परदेसी ने ।

“था एक मनोहर का बच्चा ! मुझे ने नाक में दम कर रखा है । गाँव में खस की टट्टी भी नहीं कि दिन भर घर में बन्द रहूँ ।

जब निकलती हूँ तो न जाने कहाँ से आ पहुँचता है, जैसे शैतान दिन रात मेरी ही छाया बना फिरता हो... यह बड़ा खराब आदमी है परदेसी बाबू !....”

“वह तो उसकी शकल ही कहती है....”

“लां देखो, कितना अच्छा सोता है... कभी देखा है ऐसा अच्छा पानी ?”

परदेसी चारों ओर का मनोहर दृश्य देख रहा था। पानी का स्वच्छ निर्भर मीठी-मीठी फुहारें फँकता हुआ बह रहा था। देखकर परदेसी की आँखें तृप्त हो गईं।

दोनों एक चट्टान पर बैठे, बिल्कुल पास-पास। नयना ने अपना एक हाथ परदेसी के कंधे पर रखकर अपना आधा बोझ उसके हवाले कर दिया।

“परदेसी ! तुम्हें यह जगह पसन्द है ?”

“बहुत !”

“और मैं ?....”

“ऐसे स्थान पर तुम्हारा साथ भी अच्छा ही लगता है....”

“यह बेमन की बात कैसी परदेसी ?.... पत्थर के आँसू तुम्हारी नज़रों में इतने कीमती हैं और जैसे मेरे आँसू का कुछ मोल ही नहीं ? बड़े कच्चे खरीदार हो बाबू !...”

“मैं ऐसे बाजार में कभी नहीं आया था नयना ! जहाँ मुझे खरीदने की जरूरत महसूस हो.... मैं तो प्रकृति के बाजारों में घूमा हूँ, जहाँ की हर चीज़ बेदाम मिलती है। मातृभूमि का प्रेम भी मुझे बेदाम ही मिला है। अगर कभी कुछ मूल्य चुकाना भी पड़ा, तो जान तक हाज़िर रहेगी...”

“मातृभूमि को तुम इतना चाहते हो परदेसी ?....”

“हाँ...”

“और मातृभूमि के बाद ?...”

“उसके बाद सभी को चाहता हूँ....”

“मुझे भी तो ?....”

“हाँ !...”

“मेरे अच्छे बाबू !....”

कहकर नयना ने परदेसी का हाथ अपने हाथों में लेकर दबाया ।



“हलो !....हाँ, शर्मा स्पीकिंग !...अभी आया है ?....लखनपुर में ?.. आप उसे रोक रखिये, मैं अभी आया...हाँ, जमनापुर थाने का हल्का है...ठीक है....सब कुछ हाँ जायेगा....आज ही शाम को....जी हाँ ! बिल्कुल ठीक !...ऐसा कभी नहीं हाँ सकता...जी मैं कोशिश तो करूँगा ही...इसमें क्या शक है ?”

मिस्टर शर्मा ने फ़ोन का रिसीवर रख दिया, फिर तेजी से कपड़े बदलने लगे ।

तभी आ पहुँची रेखा ।

“कहाँ से आ रही है बेटी ?”

“लाल भैया के यहाँ गई थी”—बोली रेखा—“कल तीन बार गई थी और आज चार बार, मगर एक बार भी भेंट नहीं हुई....ये लाल भैया भी कभी-कभी गदहे की सीँग हो जाते हैं पिताजी....”

“तो तू उस गदहे के पीछे क्यों परेशान रहती है...”

“देखिये न ! कल से ही शेक्सपीयर के साहित्य पर एक नोट लिखकर उनसे बहस करने को तैयार हूँ, मगर वे मिलें तब तो !...गये होंगे अपने गाँव, माँ से मिलने....आप कहाँ चल दिये पिताजी....”

“कलेक्टर साहब का फ़ोन आया है, उन्होंने बुलाया है....”

“और यह क्या ?”—रेखा की दृष्टि मेज पर रखी हुई खाने की थाल पर गई—“आपने पूरा भोजन भी नहीं किया पिताजी....”

“आधा ही खाया था कि फोन आ पहुँचा....”

“तो अब खाकर जाइये....”

“सरकारी नौकरी है बेटी !”—मिस्टर शर्मा बोलें—“बफा-दार नौकर के लिये काम पहले और खाना बाद में।”

“जी हाँ ! खाली पेट काम भी तो खूब हाँता है पिता जी !.... पुत्रिमन्त्रालों को खाना ही न चाहिये। दौड़ने-धूपने के लिये पेट हल्का रहता है....” रेखा हँसने लगी।

“बड़ी शरीर लड़की है”—हँसते हुए मिस्टर शर्मा ने हैट उठाया और चल पड़े।

दस मिनट बाद ही वे कलेक्टर के कमरे में हाजिर थे !

“आइये मिस्टर शर्मा बैठिये !”—कलेक्टर ने कहा।

पास ही मामूली पांशाक में एक जासूस खड़ा था।

“देखिये !”—बोला कलेक्टर—“ये गुप्ता साहब खबर लाये हैं कि लखनपुर गाँव में इन्हें एक बूढ़े किसान के घर एक दाढ़ी-मूँछ वाला संदिग्ध व्यक्ति दिखाई पड़ा है....”

“क्यों यही बात है न मिस्टर गुप्ता ?”—मिस्टर शर्मा ने पूछा।

“जी हाँ !”—जासूस ने कहा—“लखनपुर गाँव उस स्थान के केवल दो मील दक्षिण है, जहाँ जज साहब के हत्यारे की मोटर सायकिल पाई गई थी....”

“ठीक है ! तुमने उस आदमी को देखा ?”

“जी हाँ ! देखने में हट्टा-कट्टा, मुँह पर घनी दाढ़ी-मूँछें, गाँव वालों से एकदम भिन्न मालूम पड़ा....”

“तुमने पता नहीं लगाया ?”

“लगाया था। मनोहर नाम के एक युवक ने बताया कि वह

उस गाँव में पहले कभी नहीं आया था। उसकी कोई रिश्तेदारी भी वहाँ नहीं है। जज साहब की हत्या की रात ही वह वहाँ आया है...”

“ठीक है”—मिस्टर शर्मा ने हाथ की मुट्ठी मेज पर पटकते हुए कहा—“तुम ठीक खबर लाये हो....तुम अभी माटर सायकिल से जमनापुर थाने जाकर थानेदार से मिलो। मैं फोन पर उन्हें सभी बातें समझा देता हूँ। देखो सावधान रहना....”

“बहुत अच्छा!”—जासूस दोनों का सलाम ठोंककर बाहर चला गया।

“मिस्टर शर्मा आपका क्या खयाल है?” कलेक्टर ने पूछा।

“अगर धावा अचानक और ठीक मौके पर हुआ तो आसामी गिरफ्तार हो जायगा....”

“जज साहब की हत्या ने तो और भी हम लोगों के सर पर आफत ला दी है....सच कहता हूँ, अब तो रात में नींद भी ठीक से नहीं आती। कभी-कभी स्वप्न में भी क्रान्तिकारियों से मुठभेड़ करने लगता हूँ....जागता हूँ तो बड़ी हँसी आती है....”

“मेरा भी वही हाल है साहब!”—मिस्टर शर्मा ने कहा—“आपका फोन पाकर आधा खाना छोड़कर भागा आया हूँ.... अच्छा, मैं जरा जमनापुर थाने को फोन कर लूँ....”

“बेहतर है...फोन उधर है....”

मिस्टर शर्मा फोन के पास आये। रिसीवर उठाया, नम्बर मिलाया—“थानेदार साहब!....देखिये, मिस्टर गुप्ता जासूस आपके पास गये हैं। उनसे आपको सारी बातें मालूम हो जायगी। पता चला है कि आपके हलके के लग्गनपुर गाँव में ही जज साहब का हत्याकारी छिपा है।....हाँ! कोई बूढ़ा किसान है नाम तो मिस्टर गुप्ता ही आपका बतायेंगे....जरूर! धावा तो करना ही पड़ेगा....पूरी ताकत से धावा दें। आज ही रात में आठ-नौ के लगभग, इससे पहले नहीं—हाँ! चाहे जैसे हो पता लगाना ही पड़ेगा। आसामी

भागने न पावे—मेरी क्या जरूरत है वहाँ? क्या आप काफी नहीं?—हाँ-हाँ, आप जो भी चाहे कर सकते हैं...लूटपाट, आग लगाना, कांडे मारना, गोली दागना...सब कुछ! ऐसे समय जुल्म भी बहुत काम दे जाता है...समझ गये न!...नहीं भाई! मिस्टर गुप्ता तो गये ही हैं...थैंक यू!...”

रिसावर रख मिस्टर शर्मा कलेक्टर के पास आये।

“सफलता की आशा तो बहुत है, देखिये क्या होता है?”—बोले वे।

“चन्द्रनाथ का क्या हाल है?”—कलेक्टर ने पूछा।

“वह तो अब हमारे किसी काम का नहीं रहा।”—मिस्टर-शर्मा ने कहा—“न कुछ बोल सकता है, न लिखकर बता सकता है...अगले सोमवार को शायद उसे फाँसी दे दी जायगी...”

“कुछ अक्त काम नहीं करती मिस्टर शर्मा!...जहाँ तक मेरा विचार है, सरकार की इतनी बड़ी ताकत से लाहा लेने वाला कोई मामूली दिमाग का आदमी नहीं है। इस गिराह का सरदार अवश्य ही कोई आश्चर्यजनक व्यक्ति है...देखिये, हम कब उसे पकड़ पाते हैं?...”

“अभी तो उसके पकड़ने का स्वप्न देखना बड़ा कठिन है साहब! जबकि उसके मामूली आदमी तक पकड़ में नहीं आ पाते। इसी जज साहब के हत्यारे को देखिये। हम लोगों ने उसे चारों ओर से घेर लिया था...मगर शैतान उतनी ऊँची छत से कूदकर भाग निकला...सिपाहियों ने पीछा भी किया, उसकी मोटर सायकिल भी बेकाम कर दी गई, फिर भी निकल ही गया। मोटर सायकिल भी ऐसी कि उसमें लाइसेंस का प्लेट ही नहीं...”

X

X

X

सन्ध्या के सितारे आसमान पर चमकने लगे हैं। गाँव वाले जगह-जगह आग जला कर अपना बदन गर्म कर रहे हैं। नयना

और परदेसी भोपड़े में हैं। बूढ़ा दोपहर का गया-गया अभी खेत से लौटा नहीं है।

“परदेसी बाबू ! तुम रुकोगे नहीं ?...”

“नहीं नयना !....कभी रुक सकने लायक हुआ तो जरूर तुम्हारे दरवाजे तक आऊँगा....”

“तो कब जा रहे हो तुम ?....” नयना की आवाज भीग चली थी।

“शायद कल सुबह चला जाऊँ”—परदेसी ने कहा।

तभी—

“बच्चा ! बूढ़े का भीख मिल जाय !” दरवाजे पर से आवाज आई।

परदेसी चौंक पड़ा। दौड़कर बाहर आया। बूढ़ा भिखारी खड़ा था एक ऊँगली से अपना मस्तक खुजलाते हुए।

“कौन हैं परदेसी ?” नयना भी पीछे-पीछे आ पड़ी।

“भिखारी हैं नयना ! कुछ हो तो लाकर दे दो...” परदेसी ने कहा।

नयना भीतर जाकर दीपक जलाने लगी। भिखारी परदेसी के निकट आ गया। बोला—बेटा लाल ! ज़रा भी समय नहीं है ! जमनापुर से पुलिस चल चुकी है। तुम भागो यहाँ से...अभी भागो....लो ये कपड़े ! रास्ते में पहन लेना...दाढ़ी-मूँछ फेंक देना... उधर बरगद के पीछे एक साइकिल रखी है...जल्दी करो लाल !....

तभी भीख लेकर नयना आ पहुँची। बोली—“क्या कह रहा है यह भिखारी, परदेसी ?...”

“कुछ नहीं—बेचारा दिन भर का भूखा है...”

भिखारी भीख लेकर दुआयें देता हुआ चला गया। नयना और लाल अन्दर आये।

“मैं चल रहा हूँ नयना !....” लाल ने कहा।

“कहाँ ?....किधर ?....क्यों ?....” नयना की आँखें एक बारगी ही बरसने लगीं ।

“जहाँ भाग्य ले जाय !....मैं अब नहीं रुक सकता ! मुझे जाना ही होगा....अभी, इसी वक्त !”

“तुम तो कल सबेरे जाने को कह रहे थे परदेसी !....रात के आँधरे में ठोकर खा जाओगे । रुक जाओ, दिन के उजाले में चले जाना....”

“नहीं नयना ! मैं इसी समय जाऊँगा । मुझे रोकांगी तो बहुत बुरा होगा....”

“परदेसी !...नहीं रुकांगे तो राकूँगी भी नहीं....कल बसन्त की बहार लेकर आये और आज पतझड़ देकर जा रहे हो, इसे याद रखना । दूर देश में कभी मेरी छाया भाँके तो याद कर लेना—बस !....”

“नयना ! मैं तुम्हारा उपकार कभी नहीं भूल सकूँगा”—

“निर्मोही ! नयना के उपकार को याद करके क्या करोगे ? नयना की याद आये तभी समझूँगी कि मेरी आँखों के आँसू सफल हुए, नहीं तो समझ लूँगी कि खारे जल से नहलाने पर पत्थरों के देवता नहीं पसंजते....”

“मैं चलूँ नयना ! मुझे देर हो रही है....”

“जाओ ! आँखों से दूर जा रहे हो, अगर दिल से भी निकल जाओ तब जानूँ....”

लाल दरवाजे की ओर बढ़ा ।

नयना ने असीम वैकल्य से भरकर अपने हाथ कलेजे पर दाब लिये ।

“परदेसी !....मेरे बाबू !....जरा सुन लो !...”

लाल रुक गया—“क्या कहती हो नयना ?...”

“कहने को तो बहुत है परदेसी ! मगर कहूँगी सिर्फ एक

बात !... एक बार !...केवल एक बार परदेसी, तुम अपनी जादू की दाढ़ी हटा कर अपनी वह जादूभरी सूरत दिखा दो । बड़ा उपकार मानूँगी बाबू !...तुम्हें बाँध न सकी, तो तुम्हारी सूरत ही बाँधकर रखूँगी नयनों में....”

“लां देखो !....”

लाल ने अपनी दाढ़ी-मूँछ हटाकर नयना को अपनी असली सूरत दिखाई । नयना विभोर होकर देखती रही । आँखों से आँसू की धारा बहती रही ।

“मेरे परदेसी ! मेरे बाबू !”—दौड़कर नयना लाल से लिपट गई ।

लाल उसका सर सहलाने लगा । उसकी काली लटों का चुम्बन लेकर बोला—“नयना खुश रहो तुम !....”

उसने अपनी दाढ़ी-मूँछें लगा ली और तेजी से बाहर निकल गया ।

नयना आँखों में सागर और दिल में आग लिए हुए चारपाई पर गिर पड़ी ।

उधर लाल चला जा रहा था, तेजी के साथ, कभी दौड़ भी पड़ता था । कुछ दूर जाकर उसने अपनी दाढ़ी-मूँछें उतार फेंकी और कपड़े भी बदल डाले ।

भिखारी के कथनानुसार बरगद के पीछे एक सायकिल भी मिल गई । अब क्या था, अँधेरी रात थी, और सुनसान पगडण्डी । रास्ता ऊबड़-खाबड़ जरूर था, मगर लाल के पैरों का जोर पाकर सायकिल पूरी तेजी के साथ भाग रही थी ।

एकाएक लाल की सायकिल की पिछली पहिया खड़खड़ाने लगी । लाल उतर पड़ा ! देखा, हवा निकल गई थी । रात के समय पंचर बने तो कैसे, लाचार लाल पैदल ही सायकिल को ठेलता हुआ आगे बढ़ा ।

पगडंडी के दोनों ओर दीर्घाकार वृक्ष थे, जिससे और भी

अन्धकार हो रहा था। लाल को अगर डर था तो, केवल यह कि पुलिसवाले उसे देख न लें।

“भबरदार रुक जाओ !...”

मुनते ही लाल चौंक कर रुक गया। बगल के पेड़ों के पीछे से खड़-खड़ाहट हुई और दूसरे ही क्षण लाल के चारों ओर पचीसों सशस्त्र पुलिस आ खड़े हुए।

एक टार्च तीव्र प्रकाश फेंकती हुई लाल के मुख पर जल उठी और एक रोबीला स्वर सुनाई पड़ा—“कौन हो तुम ?....कहाँ से आ रहे हो ?....”

“आप लोग कौन हैं ?....”

“पुलिस के आदमी...मैं जमनापुर थाने का थानेदार हूँ !”

“मेरा नाम लालचन्द है और मैं मिस्टर शर्मा के बगल में रहता हूँ”—लाल निशंक स्वर में उत्तर दिया।

“आप कहाँ से आ रहे हैं ?”—प्रश्न हुआ।

“अपने गाँव गया था”—लाल बोला—“रास्ते में सायकिल पंचर हो गई। बड़ी दूर से पैदल ही चला आ रहा हूँ...अगर आप लोगों के पास सामान हो तो मेरी मदद कर दें। बड़ी कृपा होगी !....”

“देखिये ! हम लोग एक हत्याकारी के पीछे हैं”—थानेदार ने कहा—“आपको हमारे साथ चलना होगा। हम मिस्टर शर्मा से आपका परिचय जानकर ही आपको रिहा कर सकते हैं....”

“बहुत परेशान हूँ साहब ! अगर जाने दें तो बड़ी मेहरबानी....”

“हम मजबूर हैं मिस्टर लालचन्द !....”

“तो जैसी आपकी इच्छा !....” लाल ने कहा।

थानेदार ने कुछ इशारा किया। दो सिपाही लाल के दो तरफ आ खड़े हुए। सभी लोग लखनपुर गाँव की तरफ तेजी से चल पड़े।

लाल समझ रहा था कि वह एक तरह से कैद में है; फिर भी

उसे सन्तोष था कि लखनपुर में सिवा नयना के और कोई उसे उस रूप में नहीं पहचान सकता और नयना उसे पहचान कर भी अपनी जवान का ताला बन्द ही रखेगी।

लखनपुर आ गया। पुलिस की एक टुकड़ी दूसरे रास्ते से वहाँ पहले ही पहुँच चुकी थी और उसने गाँव के चारों ओर घेरा डाल दिया था।

गाँव के सभी बाल-वृद्ध एक क्रतार में खड़े किये गये थे और कुछ पुलिसवाले डरा-धमका कर उनसे कुछ पूछ रहे थे। तभी यह टुकड़ी भी पहुँच गई।

“कुछ पता लगा नायब साहब ?”—थानेदार ने पूछा।

“जी नहीं!...हम पूरे गाँव की तलाशी ले चुके हैं....यह आदमी उसको देखा था”—नायब ने एक ग्रामीण की ओर इशारा कर दिया।

थानेदार उसके पास आया। पूछा—“तुम्हारा नाम ?”

“मनोहर सरकार!...मैंने देखा था माई-बाप! भूट नहीं कहता...जियावन काका के घर में वह कल रात और आज दिन भर तक रहा था....”

“ठीक है”—कहकर थानेदार बूढ़े जियावन की ओर बढ़ा।

मनोहर की बगल में ही नयना खड़ी थी और उसके सामने थोड़ी दूर पर खड़ा था लाल, दो पुलिस के बीच में।

नयना ने उसे देखा था। पहचान भी गई थी एक ही नजर में, फिर भी उसने अपनी नजरे इस तरह से घुमा ली थीं, जैसे वह आदमी उसके लिये एकदम अपरिचित हो।

अगर वह सावधानी न दिखाती तो उसकी बगल में खड़ा हुआ चालाक मनोहर अवश्य ही सारा भेद जान जाता।

“नयना !...” मनोहर ने फुसफुसाते हुए नयना का हाथ पकड़ कर कहा !

“क्या है ?”—नयना भी धीरे से ही बोली।

“वह आदमी डाकू था”—बोला मनोहर—“शाम तक उसे मैंने तेरे साथ देखा था....तू जरूर जानती है कि वह कहाँ भागा है। अगर मैं पुलिस से यह बात कह दूँ तो वह तुझसे अच्छी तरह समझ ले....बोल ! मेरी बनेगी या नहीं ? ...”

“तेरी बने मेरी जूती....चुप रह, नहीं तो मैं चिल्ला पड़ूँगी”—नयना ने कहा।

थानेदार जियावन के सामने खड़ा था।

“क्यों बूढ़े ! वह आदमी कौन था ?...”

“क्या जानू सरकार ! परदेसी समझ कर ही जगह दे दी थी....जानता होता कि वह ऐसा आदमी है, तो कभी टिकने नहीं देता...” बूढ़े ने कहा।

“वह गया कब ?”

“शाम को खेत पर से जब मैं लौटा तो बिटिया ने बताया कि वह चला गया....”

“इसकी बेटी कौन है ?”—थानेदार ने ऊँची आवाज में कहा, तो नयना सामने आ खड़ी हुई। थानेदार ने गौर से उसे देखा।

“क्यों री छोकरी ! तू उस आदमी को जानती है ?....”

“यह जरूर जानती है सरकार !” मनोहर चिल्लाया—“वह इसका चहेतू है। खूब घुल-मिल कर रहते थे दोनों...”

“यह बात है !”—थानेदार ने कहा—“नायब साहब ! गाँव वालों का जाने दो, सिर्फ इस बूढ़े और छोकरी को राक ला....”

भीरु ग्रामीण आज्ञा पाते ही उड़ गये।

“देखो !....” थानेदार ने नयना और बूढ़े से कहा—“वह आदमी डाकू और खूनी है। उसका पता दोगे तो काफी इनाम मिलेगा....”

“सरकार ! जानता होता तो जवान खोल देता...मैं कुछ भी नहीं जानता हज़ूर !....दुहाई है सरकार के इकबाल की....”

“चुप रह !...शायद तू नहीं जानता बूढ़े कि उसे अपने घर में रखकर तूने कितना बड़ा जुर्म किया है...अब से भी अच्छा है बता दे, नहीं तो इसका नतीजा बहुत बुरा होगा...”

“जो हो सरकार ! मर्जी आपकी....हम बेकसूर हैं....उसका नाम तक तो जानते ही नहीं....”

“तू भी कुछ नहीं बतायेगी छोकरी ?....”

“मैं क्या जानूँ सरकार ?...” नयना ने कहा ।

“ये ऐसे नहीं मानेंगे”—नायब ने कहा—“लात के देवता बात नहीं चाहते....”

“ठीक है”—थानेदार बोला—“दानसिंह ! तुम ज़रा इस बूढ़े की भोपड़ी को मशाल से गर्म ताँ कर दो...”

एक सिपाही मशाल लेकर आगे बढ़ा । घास-फूस की भोपड़ी मशाल चूम कर ज्वाला फेंकने लगी । सारा गाँव लाल लपटों से उजला हो उठा !

बूढ़ा अपने बुढ़ापे की छाँह को धूँआ बनते देखता रहा चुपचाप, नयना भी निश्चल रही । लाल भी स्तब्ध खड़ा रहा ।

“अब भी नहीं बतायेगा ?”—थानेदार गर्ज—“दो आदमी इस छोकरी के दोनों पाँव पकड़ लो और दो आदमी दोनों हाथ....हाँ ठीक है...अब खींचो अपनी-अपनी ओर...देखो, गिरने न पावे...”

नयना चीखने लगी । बूढ़ा राम-राम जपने लगा । नयना की असहाय दृष्टि एक क्षण के लिये लाल की आँखों से मिली । लाल ने अपने नेत्र बन्द कर लिये ।

“और खींचो !....” थानेदार चिल्लया ।

जलती भोपड़ी की लपटें नयना की चीखों से काँपने लगीं । लाल दाँत पीस रहा था । उस भोली बालिका का अपने लिए असीम त्याग देखकर उसका क्रान्तिकारी हृदय भी डिग उठा था ।

“छोड़ दो उसे....अब इस बूढ़े को पेड़ पर उल्टा टाँगकर कोड़े लगाओ...”

कोड़े लगने लगे। चार-पाँच बार तक तो बूढ़ा चिल्लाया, फिर चीख बन्द हो गई। कोड़े बराबर बरसते रहे।

“ठहरो....” थानेदार ने कहा—“अरे ! यह बूढ़ा मर गया क्या ? नायब साहब ! देखा तो...”

नायब ने देखा। बोला—“जी हाँ...”

नयना रोने लगी। थानेदार ठठाकर हँसा।

“चलो सब लोग....बूढ़े की लाश भी ले लो...इस छोकरी को हिफाजत से ले चलो....”

नयना जमनापुर थाने लाकर हवालात में बन्द कर दी गई। लाल यद्यपि कैद नहीं था, फिर भी उसकी कोठरी के दरवाजे पर एक सिपाही तैनात था।

दूसरे दिन प्रातःकाल लाल थानेदार के सामने पेश किया गया।

“बैठिये !”—थानेदार ने एक कुर्सी की ओर इशारा किया।

लाल बैठ गया।

“आपका कहना है कि आप मिस्टर शर्मा के पड़ोसी हैं ?”

“जी हाँ ! उनकी बेटी रेखा मेरी मित्र है...” लाल ने कहा।

“ठीक है”—बोला थानेदार—“मिस्टर लालचन्द ! आप बुरा न माने। हम आपको पुलिस के साथ मिस्टर शर्मा के पास भेज रहे हैं। वे जो उचित समझेंगे, करेंगे...”

“बड़ी कृपा है आपकी !”

“देखिये, आप बुरा न मानेंगे”—थानेदार ने कहा—“हमारा कर्त्तव्य बड़ा भयानक होता है। आपको जो कष्ट हुआ उसके लिये प्राफी चाहता हूँ....हम भी तो पराधीन ठहरे। कल गाँव में जो कुछ भी जुल्म किया गया, उसकी हमें आज्ञा मिल चुकी थी... आप चाय तो पीते ही होंगे ?”

“इसके लिये धन्यवाद ! आप कष्ट न करें...मैं जल्द से जल्द डेरे पर पहुँचना चाहता हूँ....”

“अच्छी बात है...ओ दानसिंह !....”

“हाजिर !....” लम्बा-चौड़ा सिपाही आ खड़ा हुआ ।

“देखो ! तुम मिस्टर लालचन्द को लेकर एस० पी० साहब के पास जाओ और उनसे कल की सारी घटना बता देना...और उस छोकरी के बारे में जो हुकम हो, जल्द लेकर आना....”

“जो हुकम !...”



“पिताजी ! देखिये न लाल भैया अभी तक नहीं आये...सौ बार तो दौड़ चुकी, ताला बन्द तो बन्द । छत पर से कूद कर जाती हूँ तो बिगड़ते हैं....आज तो मैं आपसे शेक्सपीयर के साहित्य पर बहस करूँगी...” चाय पीते-पीते रेखा बोल रही थी ।

“तू तो पता नहीं किस चीज की बनी है रेखा !”—मिस्टर शर्मा ने कहा—“साहित्य की बात तो लाल ही तुझसे कर सकता है...नैपोलियन की बहादुरी पर बहस कर तो मैं तैयार हूँ...”

“आप इतिहास जानते हैं पिताजी ?...”

“बी० ए० में मैंने हिस्ट्री ही ले रखी थी....”

“अच्छा तो अंग्रेज हिन्दुस्तान में कब आये, कैसे आये, क्यों आये ? १८५७ का गदर कब हुआ, क्यों हुआ, कैसे हुआ ?... बताइये....”

“चुप रह रेखा ! अंग्रेज चाहे जैसे आये, उनका शासन यहाँ पर होना बहुत जरूरी था....उनके आने के पहले यह देश फूट

और वैमनस्य से बरबाद हो रहा था। आज तो शेर और बकरी साथ-साथ खाते हैं...”

“शेर की आत्मा चाहे जितनी भी कुचल दी जाय, परन्तु समय आने पर वह जागरूक होगी ही पिता जी !....”

“रेखा तू व्यर्थ की बात ले बैठती है...तुम्हें कोई काम की बात तो सूझती ही नहीं...”

तभी चपरासी ने आकर जमनापुर थाने से एक पुलिस के आने की सूचना दी।

तुरन्त ही दानसिंह और लाल पेश किये गये।

लाल को देखते ही रेखा चीख पड़ी—“लाल भैया ! आ गये तुम ?...”

“मैं कैद में हूँ रेखा !...” लाल ने कहा।

“कैद में !....पिता जी, इन्हें किसने कैद किया ?....”

“क्या बात है ?”—मिस्टर शर्मा ने दानसिंह से पूछा।

“कल ये साहब लखनपुर से एक मील उत्तर पर हमें पंचर सायकिल लिये पैदल आते हुए मिले थे...थानेदार साहब ने इन्हें रोक लिया था....” दानसिंह ने कहा।

“मैं अपने गाँव गया था बाबूजी ! लौटते वक्त पहिया पंचर हो गई। लाचार पैदल ही आ रहा था कि पुलिस के हाथ पड़ गया....”

“अजी ! यह लड़का तो मेरा पड़ासी है। नाहक ही परेशान किया बेचारे को”—मिस्टर शर्मा ने दानसिंह से कहा।

“इजूर माफ करें...हम कर ही क्या सकते थे ?...”

“लाल बेटा ! तुम जाओ....”

“चलो रेखा ! चलती हो ?...”

“चलो न, मैं तो सौ बार जा-जाकर लौट आई हूँ...”

लाल और रेखा चले गये।

“कल का हमला कारगर हुआ कि नहीं !”—मिस्टर शर्मा ने दानसिंह से पूछा ।

“जी नहीं ! धावा हुआ तो था बड़ी सरगर्मी से, मगर कुछ हाथ नहीं लगा”—दानसिंह ने कहा—“जुल्म भी किया गया, बूढ़े की जान भी चली गई, मगर आसामी हाथ न आया, और न तो उसकी बेटी ने उसका पना ही बताया...”

कहकर दानसिंह ने सारी घटना ब्यांरेवार सुना दी ।

सुनकर मिस्टर शर्मा बोले—“तुम लोगों का अनुमान है कि वह लड़की फरार को अच्छी तरह जानती है, मगर बताती नहीं ?”

“जी हाँ हजूर !...”

“तब तो उस लड़की का कलेजा बहुत सख्त मालूम पड़ता है, जो अपने प्रेमी के लिए अपने बाप को भी मरते देख सकती है...”

“बड़ी चालबाज लड़की है हजूर !...”

“तुम जाओ और थानेदार साहब से कहना कि उस लड़की को सख्त पहरे में रखें....मैं जल्द ही उस लड़की के बारे में अपना हुक्म भेजूँगा....समझ गये न ?....”

“जी हजूर !....”

दानसिंह सलाम कर चला गया ।

मिस्टर शर्मा कुछ देर तक न जाने क्या सोचते रहे, फिर एक कागज पर कुछ लिखने लगे ।

लिखकर उन्होंने कागज जेब में रखा, फिर पुकारा—“दाई !”

“जी, आई !...” बूढ़ी दाई आ पहुँची ।

“मैं काम से बाहर जा रहा हूँ । खाने का समय हो तो रेखा को बुलाकर खिला देना, नहीं तो शैतान शाम तक बहस ही करती रह जायगी लाल से...”

मिस्टर शर्मा चले गये ।

उधर लाल के कमरे में लाल और रेखा में झड़प हो रही थी ।

“तुम क्यों चले गये थे ?”—

“माँ को देखने गया था रेखा !...तुम्हें बता नहीं सका....  
नाराज-मत हो इस ज़रा-सी बात पर...”

“इतनी बार तुम्हारे बन्द दरवाजे तक दौड़ी, जैसे मेरे पैर न  
हुए लोहे के टुकड़े हों गये कि दर्द ही न करें...”

“दर्द हों रहा हों तो लाओ पैर दबा दूँ...”

“रहने दो जी ! बड़े आये हों जले पर नमक छिड़कनेवाले ?...  
चाहे कहीं भी जाँय, आकर भट बहाना कर देंगे कि गाँव गया  
था...लाल भैया ! रेखा को इतनी भोली मत समझना...बताओ  
तो, गाँव गये थे न ?...माँ कैसी हैं.... ?”

“बिल्कुल अच्छी !...”

“बिल्कुल गलत !...जाड़े के मौसम में बूढ़े लोग कभी स्वस्थ नहीं  
रह सकते...कम से कम जुकाम-खाँसी की शिकायत तो रहती ही है...”

“माँ को खाँसी का रोग तो बहुत पुराना है रेखा !”

रेखा एकाएक चुप होकर गम्भीर बन गई। लाल को उसकी  
वह गम्भीरता खटकी। आजकल रेखा में बहुत कुछ परिवर्तन वह  
देख रहा था।

“रेखा !...”

“बोलो न लाल भैया !....”

“क्या सोच रही हो ?....”

“सोच रही हूँ कि तुम्हें कभी मुझ पर विश्वास होगा या  
नहीं ?...कभी तुम मुझे अपना हमदर्द समझोगे या नहीं ?...”

“तुम्हारे और माँ के सिवा मेरा अपना है ही कौन रेखा ?....  
तुम चाहे जो समझो, मेरा विश्वास तो तुम्हारे प्रति कभी शिथिल  
नहीं हुआ !...”

“रहने दो लाल भैया ! मुँह देखकर बातें करने की आदत अच्छी  
नहीं....घर जाने लगे तो रेखा मर नहीं गई थी, जो कह नहीं सके

कुछ...कहकर जाते तो रेखा तुम्हारे पैर में बेड़ी न डाल देती... कहकर जाना मंजूर न था तो बहाना बना दिया...या घर जाने के बहाने कहीं और चले गये होंगे, कौन ठिकाना तुम्हारा ?...खैर, छोड़ो इन बातों को....चाय बना दूँ ?...पियोगे तो ?...”

“रहने दो रेखा ! क्यों तकलीफ करांगी ?....”

“लाल भैया ! प्याले में जहर नहीं घोल दूँगी, विश्वास रखो... पिताजी भले ही जज साहब के खूनी की खांज करें, रेखा तो जान कर भी अनजान ही बनी रहेगी...”

“रेखा ! मेरी तबियत खट्टी हो गई है तुम्हारी बातों से...”

“चाय पी लो लाल भैया ! चीनी ज़रा ज्यादा कर दूँगी तो खट्टापन जाता रहेगा....”

लाल के खीजने पर ध्यान न देकर रेखा उठी और स्टोव जलाकर चाय पकाने लगी । कुछ देर तक दोनों चुप रहे ! स्टोव तेजी से जलता रहा । रेखा आग की लपटें देखती रही ।

“लाल भैया !....आग की ये लपटें देख रहा न ?...”

“देखता तो हूँ....अन्धा हूँ क्या ?....”

“इन्सान के दिल में भी कभी ऐसी लपटें उठ सकती हैं लाल भैया ?....”

“तेरे ही दिल में उठती होंगी पागल लड़की !...”

“जो कहो लाल भैया ! पागल ही सही...अगर मेरे दिल में लगी हुई आग को देख पाते तुम तो कहते कि मैं क्या हूँ, क्या नहीं हूँ.. जो आँखें बन्द कर ले और देखना न चाहे, उसे आग की एक छोटी-सी लपट तो क्या, सूर्य का गोला भी अंधेरा नज़र आयेगा....है न लाल भैया ?....”

“चाय का पानी खोलकर बहा जा रहा है और तू बातें बनाने बैठी है....हट ! मैं बनाये लेता हूँ”—

रेखा ने चाय की पत्ती डालकर कतली उतार ली ।

थोड़ी देर बाद दोनों मेज पर बैठे चाय पी रहे थे ।

“रेखा ! तू मुझसे ऐसी बातें मत किया कर !....” लाल बोला ।

“कैसी बातें लाल भैया ?”—

“यही पागलों जैसी...”

“पागलों की बातों का भी तो कुछ अर्थ होता ही है लाल भैया ! जो न समझे उसे कौन समझाये !....अगर तुम्हें मेरी बातें अच्छी नहीं लगती, तो मैं अब कुछ न कहूँगी कभी....हाँ ! तुमने एक बात सुनी या नहीं ?....शायद न सुन सके हों, क्योंकि उसी दिन तो तुम अपने गाँव चले गये थे....”

“कौन-सी बात ?”

“वही जज चाचा जो थे न, उनको किसी ने गोली मार दी....”

सुनकर लाल चौंक पड़ा । मगर चुप रहा । इस बाचाल लड़की से वह क्या बहस करे ?

“भला उन्हें किसने गोली मारी होगी लाल भैया ?....”

“मैं क्या जानूँ ?”—लाल उबल कर बोला ।

“पिता जी भी वहाँ मौजूद थे, जज चाचा के एकदम पास !....अगर गोला ज़रा भी बहक जाती तो उन्हें जा लगती....मगर गोली चलानेवाला नौसखुआ तो था नहीं...हैं न लाल भैया ?”

“हाँ, है तो...अच्छा अब चुपचाप चाय पी ले अभी चल उठ !....”

“लाल भैया ! बुरा न मानो”—रेखा गम्भीर होकर बोल रही थी—“तुम तो इतने ऊपर उठ चुके हो कि तुम्हें ज़मीन की हर चीज बहुत छोटी नज़र आता है....कभी मुझे पास से देखने की कोशिश करो....कभी निकट से देख पाओगे मुझे, तो सच कहती हूँ भैया ! बड़ा आश्चर्य मानोगे...तुम दूर आसमान पर उड़ो और मैं ज़मीन पर चलकर तुम्हारी छाया पकड़ूँ, यह अब मुझसे नहीं होगा....मुझे भी अपने साथ ले चलो लाल भैया ! मुझे भी उड़ने

की शिक्षा दो, मुझे भी महान बनाओ....मुझे तुम कब तक ठुकराते रहोगे ?....” रेखा ने लाल के कंधे पर अपना सर टेक दिया ।

लाल उसका सर सहलाने लगा । बोला—“ठाँकरोँ मे घबड़ा मत रेखा ! सुखरू होता है इन्साँ ठाँकरोँ खाने के बाद....हिना जैसा रङ्ग लाना हाँ तो पत्थर पर अपनी जान पटक दो...देखो, रङ्ग आता है या नहीं....”

“तुम कभी आजमाओ तो लाल भैया”—रेखा का स्वर रुद्ध हो गया था—“कभी ठाँकरोँ मारकर देखाँ तो, रेखा सुखरू हुई या नहीं ?....तुम दूर-दूर रहोगे तो रेखा की शक्ति का कैसा अन्दाजा लगा सकोगे ?...तुमने सुना है कि नारी का कलेजा पानी-सा तरल होता है, परन्तु क्या तुमने किसी नारी का हृदय टटोल कर देखा है ?...लाल भैया ! नारी पुरुष की परिपूरक है । पुरुष सबल हुआ तो नारी की प्रेरणा उसे और सशक्त करती है । अगर पुरुष निर्बल हुआ तो नारी स्वयं भी बलहीन हो जाती है ।...जो नारी तुम जैसा बेटा पैदा कर सकती है, वह जिन्दगी के हर दौरान में तुम्हारा साथ क्यों नहीं दे सकती ?...”

“मेरा माथा थक गया रेखा ! अब तुम जाओ....हम दोनों नारी-पुरुष के सम्बन्ध में फिर कभी बातें कर लेंगे....”

“तुम अगर चाहते हो लाल भैया ! कि मैं तुम्हारे यहाँ न आऊँ तो वह भी सही । रेखा किसी के गले की ढाल होकर नहीं बजना चाहती...मेरी बातें तुम्हें अच्छी नहीं लगती, तो अब कभी तुमसे बातें करने नहीं आऊँगी....तुम्हें जब कभी मेरी आवश्यकता लगे, ज़रा बगल में भाँक लेना तो मुझे अपने कंधे के पास ही खड़ी पाओगे....”

रेखा उठकर चलने लगी ।

लाल ने रोका—“रेखा ! रुठ कर न जाओ....तुम जब चाहो, मेरे पास आ सकती हो । अपनी रेखा से कभी अलग नहीं रहा....

अगर तुम रुठ कर अलग रहोगी भी, तो लाल को पंगु बनाकर ही । मुझे सजग देखना चाहो, तो तुम्हें मेरी कसम, रुठ कर मत जाओ रेखा !...”

“रेखा रुठकर नहीं जा रही है लाल भैया ! वह यह देखने के लिए अलग हो रही है कि रेखा को तो कदम-कदम पर लाल ही नजर आता है, मगर क्या लाल को भी अपना पाव तले की क्षीण रेखा दिखाई पड़ती है कभी ?...मुझे देखना है कि लाल-रेखा से अगर रेखा अलग कर दी जाय, तो लाल क्या लाल ही रह जाता है ?...क्षमा करना लाल भैया ! चलती हूँ....”

लाल ने देखा, जाती हुई रेखा को आँखें भर आई थीं और वाणी तो जैत्रे आँसुओं के सागर में डूब चुकी थी । लाल ने रोका नहीं और रेखा कमरे से बाहर हो गई ।

बाहर आकर रेखा ने पुनः उस रात वाले भिखारी को देखा । वह ठमक गई ।

भिखारी उसे देखकर गिड़गिड़ाया —“कुछ दे दो बिटिया ! बड़ा पुन्य होगा....”

“तुम बड़े वैसे हो जी”—रेखा ने कहा—“भीख माँगते शर्म नहीं आती । लाल भैया ने एक दिन दे दिया, तो अब तुम्हारी आदत पड़ गई....जाओ, आज कुछ नहीं मिलेगा....”

“दे दूँ कुछ रेखा ! बेचारा बड़ा बूढ़ा है”—लाल अन्दर से आकर बोला ।

“दे न दो, रेखा से क्या पूछते हो ?”—रेखा चली गई बिना एक क्षण रुके ।

भिखारी ने ढंगली से अपना मस्तक खुजलाया और लाल ने चारों ओर देखकर धीरे से उसे अपने कमरे में कर लिया ।

“लाल !....कल तो तुम बच गये, पुलिस के हाथों में पड़ कर भी”—भिखारी ने कहा ।

“एस० पी० का पड़ोसी होने से यही तो फायदा है सरदार !”

“तभी तो मैं तुम्हें यह मकान छोड़ने नहीं देता....मगर लाल ! यह रेखा क्या तुम्हारे यहाँ हर रोज आती है...?”

“हर रोज ही नहीं; दिन में कई बार !....”

“उमसे सावधान रहना । तुम जानते हो कि नारी के स्वभाव एवं शक्ति पर मेरा ज़रा भी विश्वास नहीं”—

“मैं जानता हूँ सरदार ! मैं पूर्ण सावधान हूँ....रेखा मेरे मार्ग में कंटक नहीं बनने पायेगी । जिस दिन उसे कंटक बनते देखूँगा, उसे अपने से तो क्या, दुनिया में ही दूर कर दूँगा....”

“शाबाश बेटे !....हाँ, जज के खून से तो बड़ा तहलका मच रहा है.. सुना तुमने ? राजधानी में बहुत अंग्रेज जासूस आ रहे हैं”—

“जज का खून !...” लाल एकाएक बोला—“सरदार ! एक बड़ी ही आश्चर्यजनक घटना हो गई । मुनकर आप विश्वास न करेंगे...”

“कहा !....”

“जज का खून मैंने नहीं किया, किसी दूसरे ने किया है....”

“लाल !...” भिखारी चौंक गया—“कहते क्या हो तुम ?”

“बिल्कुल ठीक कह रहा हूँ सरदार !...”

“लाल !—” भिखारी गम्भीर हो गया—“क्या तुम्हारा मतलब है कि जज का खून उस दिन तुम्हारे हाथों से नहीं हुआ ?”

“जी हाँ !....यही मेरा कहना है !....”

“क्यों ?...तो जज मारा कैसे गया....”

“बात बड़ी विचित्र है सरदार !—” लाल ने कहा—“मैं रोशनदान से निशाना लगा ही रहा था, तब तक....”

“तब तक क्या हुआ ?”

“मेरे सामने वाले दूसरे रोशनदान से बाहर निकले हुए एक

रिवात्वर पर मेरी नजर पड़ी, जो जज की खोपड़ी का निशाना कर चुका था....’

“फिर ?....”

“मैं आश्चर्य में पड़ा ही था कि वह रिवात्वर गोली फेंक बैठा और जज साहब की खोपड़ी चूग-चूर हो गई....अन्त में मुझे भागना ही पड़ा....”

“दूसरे रौशनदान के पास कौन था, तुमने देखा ?” सरदार का स्वर आश्चर्य से पूर्ण था ।

“देखने के लिए ठहरता, तो शायद अब तक यहाँ न होकर कहीं और होता....”

“तुमने तो बड़ी चिन्ता की बात सुना दी लाल !”—भिखारी बोला—“कौन था वह, जिसने जज की हत्या की ?...और जज से उसकी दुश्मनी ही क्या थी ?....”

“पहले तो मैंने समझा कि आपने इस काम पर किसी और को भी तैनात किया है—बाद को सोचने लगा कि सरदार को मुझ पर कभी इतना अविश्वास नहीं हो सकता...”

“मैंने दूसरे आदमी से तो इसका जिक्र भी नहीं किया था लाल !....मैं बहुत-बहुत हैरान हो गया हूँ....यह कार्य तो किसी ऐसे व्यक्ति का है, जो जज साहब का बहुत पुराना दुश्मन हो, या ऐसा कि, जो हमारा प्रतिद्वन्दी हो....मैं इस पर विचार करूँगा...”

“और कोई नई खबर सरदार ?...”

“नई खबर यह कि तुम्हारे कारण वह ग्रामीण लड़की बेचारी आफत में पड़ गई है....पुलिस सहज ही उसका पीछा नहीं छोड़ेगी...”

“मगर वह तो मेरे बारे में कुछ भी नहीं जानती सरदार ! मेरा नाम तक जानती ही नहीं....केवल एक दिन धाँखे से मेरी सूरत देख ली थी उसने और मुझ पर....मुझ पर...”

“मैं समझ गया, मगर तुम्हारा दिल तो मजबूत है न ?”—

“फौलाद की मजबूती पर शक न कीजिये सरदार !...मैं पत्थर का पुतला न होता तो नयना की चीख सुनकर और उसके बाप की मौत देखकर भी स्थिर न रहता...नयना का भी कलेजा बड़ा कड़ा है सरदार ! उसका बाप मर गया, उस पर इतना जुल्म हुआ, मगर उसकी गली मेरी ओर न उठी...”

“क्या नाम है उस लड़की का ?...नयना !...नाम तो अच्छा है लाल !”—भिखारी तेज आँखों से लाल को देखता हुआ हँसा—  
“उसका क्या कुछ ख्याल तुम्हें नहीं ?”

“मेरी परीक्षा आम बहुत बार ले चुके हैं सरदार !...लाल को केवल इस समय अपने देश की गुलामी का ख्याल है, और सभी माया-मोह बढ़ भूल चुका है...मुझ पर आपको कुछ अविश्वास है क्या ?”

“नहीं तो !...मगर जिस लड़की ने तुम्हारे लिए इतना किया, उसके लिए तुम्हें कुछ तो करना ही चाहिए बेटे !...”

“आपकी जो आज्ञा हो, उसे मरते दम तक पूरा कर सकता हूँ... यों नयना जैसी हजार-लाख लड़कियाँ भी देश के लिये बलिदान हो जाँय तो मेरी निगाह में कम है । आप मुझे क्या करने का हुक्म देते हैं....” लाल के स्वर में दृढ़ता थी जिससे सरदार भी प्रसन्न हो उठा ।

“लाल ! उस लड़की को पुलिस के चंगुल से छुड़ाना ही पड़ेगा....”

“मैं तैयार हूँ....”

“अभी तक वह जमनापुर थाने में ही बन्द है”—सरदार बोला—“लो यह कागज !...देख रहे हो न !...यह जमनापुर के थानेदार के नाम सुपरिटेण्डेण्ट पुलिस का हुक्मनामा है । मिस्टर शर्मा की दस्तखत की हूबहू नकल हुई है या नहीं ?”

“मैं तो हैरान हो गया हूँ सरदार ! मैंने मिस्टर शर्मा की

हस्तलिपि देखी है....कमाल हासिल है आपको, कि नकल ने असल को भी मान दे दी...हाँ ! तो मुझे क्या करना होगा ?....”

“तुम एक टैक्सी वाले का वेश पकड़ोगे और टैक्सी लेकर जमनापुर जाओगे.. ”

“मगर उस लड़की को लाकर रखूँगा कहाँ सरदार ?....वह मेरे पास न रहे, तभी अच्छा ! बड़ी भावुक लड़की है। मैं तो अटल रहूँगा, मगर वह परेशान हो उठेगी मेरी नीरसता पर...”

“उसे छुड़ाना हमारा धर्म है”—भिखारी ने कहा—“उसका अब कोई सहारा नहीं। तुम उसे रेखा के साथ रख देना....रेखा तो खुश होगी न ?....”

“बहुत !...आपने अच्छी तरकीब बताई। मिस्टर शर्मा के घर रहने से कोई उसे पूछेगा भी नहीं और मिस्टर शर्मा भी यह नहीं जान सकेंगे कि यही लड़की जमनापुर थाने में बन्द थी...”  
बोला लाल ।

“तो लाओ मैं तुम्हारी सूरत बदल दूँ...थानेदार से बातें करते समय अपनी आवाज पर ध्यान रखना। गला भारी करके बोलना !....”

“बहुत अच्छा !”

भिखारी ने अपनी झोली खोली। उसमें भित्ता के बदले तरह-तरह के सामान भरे पड़े थे। भिखारी लाल की सूरत बदलने लगा।

उसने लाल की आँखों के चारों ओर तथा गाल पर हल्की स्याही फेरकर झुर्री डाल दी। गाल की हड्डी उभर आई। एक छोटी-सी भूरे रङ्ग की मूँछ लगा दी। आगे के दो दाँतों पर पक्का गाढ़ा काला रङ्ग पोत दिया कि दूर से देखने पर आगे के दाँत टूटे-से लगें।

थोड़ी ही देर में टैक्सीवालों की पोशाक पहनकर लाल पूरा टैक्सी ड्राइवर बन गया !

“उस मोड़ के किनारे तुम्हें एक टैक्सी मिलेगी खड़ी हुई”—  
बोला सरदार—“तुम्हें देखते ही मण्डल का आदमी उतर जायगा  
और तुम उसे ड्राइव करने लगना...हाँ! वह परवाना ठीक से  
रख ला....”!

पहले, भिखारी और कुछ देर के बाद लाल घर से बाहर हुआ।

लाल को नियत स्थान पर टैक्सी खड़ी मिली। वह उसके  
पास चला गया। उसे देखकर ड्राइवर धीरे से उतर गया और  
लाल ने स्टेयरिङ्ग के पास बैठकर टैक्सी स्टार्ट कर दी।

थोड़ी ही दूर टैक्सी गई थी कि किसी ने पुकारा—“आं  
टैक्सीवाले !....”

लाल ने घूमकर देखा तो रेखा खड़ी थी सड़क के किनारे।

लाल चौंक पड़ा। उसने चाहा कि टैक्सी न रोकें, मगर रेखा  
तब तक आगे आ चुकी थी। लाचार लाल ने टैक्सी रोक दी।

रेखा बिना इधर-उधर देखे टैक्सी पर आ बैठी और बोली—

“पुलिस कप्तान का बँगला !...”

लाल ने टैक्सी स्टार्ट कर दी।

“तुम कब से टैक्सी चलाते हो ड्राइवर ?” रेखा ने पूछा।

लाल ने चुप ही रहना उचित समझा।

“बहरे हो क्या जी ?”

“आपने कुछ पूछा ?” लाल सचमुच बहरा बन गया। बोली  
भी तो आवाज बिगाड़कर।

“मैं पूछती हूँ, तुम यह टैक्सी कब से चला रहे हो ?”—रेखा  
जोर से बोली ताकि ड्राइवर सुन ले।

“यह टैक्सी तो अभी आज ही चलाने लगा हूँ”—

“और बहरे कब से हुए हो !”

“जी हाँ ! आज ही से...इसके पहले दूसरी टैक्सी चलाता

था”—सुनकर रेखा हँस पड़ी। बोली—“तुम इतने बहरे हो, तो दूसरी गाड़ी का भोंपू कैसे सुनते होंगे ?”

“भोंपू है हमारी टैक्सी में...देखिये न !”—लाल ने अपना भोंपू दबाकर भों-भों बजाया।

तो रेखा लोट-पोट हो गई।

“नौकरी करोगे ?...” पूछा उसने, इसबार खूब तेज आवाज में।

“सोचता तो हूँ नौकरी कर लूँ, मगर बहरे आदमी को कौन नौकरी दगा ?....”

“हमारे पिता जी तुम्हें नौकर रख लेंगे....”

“पिताजी तो मेरे बचपन में ही मर गये थे, अब अकेला ही हूँ...।”

“अकेलापन तुम्हें अच्छा लगता है ?”

“केला अच्छा तो लगता है, मगर इतने पैसे नहीं पैदा होते कि पेट भर दाना भी खाँय और ऊपर से फल भी...लड़कपन में मैं बहुत-बहुत केले खाता था...”

रेखा का बैगला आ गया। उतर पड़ी वह, और मनीबैग में से पैसे निकाल कर देने के बाद तुरन्त घूम कर चली गई।

लाल ने छुटकारे की साँस ली कि रेखा ने उसे पहचाना नहीं।

उसने टैक्सी घुमाई और तेजी के साथ जमनापुर की ओर रवाना हुआ !

लाल को यद्यपि नयना के प्रति सहानुभूति थी, परन्तु नयना की तरह उसका दिल बेदिल नहीं हुआ था। उसने लाल को बचाने के लिए जिस दृढ़ता एवं साहस का परिचय दिया था, वह बहुत कम लड़कियों में पाया जाता है। अगर नयना पढ़ी-लिखी होती और यह जानती होती कि लाल कौन है तथा देश की आजादी के लिए वह किस प्रकार की क्रान्ति का सृजन कर रहा है, तो उसका यह त्याग लाल की दृष्टि में और महान होता।

मगर नयना ने तो जो कुछ त्याग किया था, वह केवल हृदय की कमजोरी के कारण । लाल के उग्र हृदय को ऐसी लड़की कम पसन्द थी, जो थोथे प्रेम के वशीभूत हो अपने पिता का भी बलिदान देव सके !

फिर भी जो कुछ हुआ, वह लाल के लिए सन्तोषप्रद ही था । टैक्सी चलाता हुआ वह मन ही मन रेखा और नयना की तुलना कर रहा था ।

रेखा शिक्षित है । लाल के साथ वह कई साल से रह रही है । लाल ने उसे बहुत नजदीक से पढ़ा है । वह चंचल भी है और गम्भीर भी । उसमें सरलता भी है उग्रता भी । लाल का हर स्वभाव उससे मेल खाता है, जैसे लाल और रेखा दो न होकर एकाकार हों । लाल जानता है कि रेखा से उसका कोई भेद छिपा नहीं । अब तो वह सभी कुछ जान चुकी है । लाल का साथ देने के लिये वह कितनी व्यग्र है, इसे लाल समझता है, परन्तु वह एक युवती को काटों की राह पर क्यों घसीटे ? क्रान्ति का मार्ग तो पग-पग पर जान के खनरे से घिरा है । रेखा का उज्ज्वल भविष्य इस पथ को अपनाते ही अन्वकारपूर्ण हो जायगा । कभी-कभी लाल के हृदय में रेखा को अपने साथ कर लेने की उत्कट अभिलाषा होती है, परन्तु मंडल का सरदार तो नारी को बाधा के रूप में देखता है । वह कभी भी रेखा को अपने साथ मिलाने का आज्ञा न देगा । रेखा के पिता भी कट्टर सरकारी नौकर हैं । जिस दिन उन्हें रेखा पर तनिक भी शंका हुई तो वे अपनी नमकहलाली प्रदर्शित करने के लिए उसे तुरन्त गोली का निशाना बना देंगे ।

लाल रेखा को बहुत चाहता है । उसने रेखा की आँखों में हर समय अपना ही प्रतिबिम्ब देखा है ।

मगर नयना की आँखों में अपनी छाया देखकर भी लाल उसे उपेक्षित ही समझता है । भोली-अपढ़ नयना देश की आजादी

और लाल की क्रान्ति का अर्थ क्या समझे ? वह तो केवल लाल को अपनाता चाहती है, जैसे हर जवान लड़की एक पुरुष की चाहना करती है ।

लाल को रेखा असाधारण लगी है और नयना अत्यन्त असाधारण । त्यागमयी दोनों हैं, मगर एक का त्याग निःस्वार्थ है और दूसरे का सस्वार्थ । नयना लाल के प्रेम के लिये त्याग करती है, तो रेखा त्याग करने के लिए ही लाल से प्रेम करती है । दोनों में कितना महान् अन्तर है ?

और यही अन्तर लाल के समझ के लिये गूढ़ है, जो वह हर नारी को दुर्भेद्य पहेली नमस्कृता है, तो प्रेम की दुनिया में आकर उसके गतिशील पैर पंगु बन जायेंगे । रेखा का नारीत्व यदि उसे मिलता है, तो उसे एक बहुत बड़ा सहारा मिल जायगा ।

हर तरह से लाल का हृदय रेखा का ही उच्च पाता है और नयना की आकृति क्षीण होती-होती स्मृति-पट से विलीन होती जा रही है ।

लाल के हृदय में आया कि वह टैक्सी लौटा ले चले । नारी के स्वार्थ को प्रोत्साहन देकर वह क्या करेगा ?

फिर उसे सरदार की आज्ञा याद आई । चाहे जो हो, उसे सरदार का हुक्म बजाना ही पड़ेगा । मण्डल के नियम का उल्लंघन करना बेमौत मरना है ।

लाल सोचने लगा—रेखा तो उससे रुठकर गई है आज ! फिर नयना को लाकर वह उसे कैसे सौंपने जायगा ? और अगर नयना रेखा के घर में रहने भी लगी, तो वह उस बेड़ी को अपने पैर में पड़ने से कैसे बचा सकेगा ?

तभी लाल चौंक पड़ा ।

जमनापुर थाने की पीली कांठी सामने ही थी । फाटक पर बन्दूकधारी पुलिस का पहरा था ।

लाल ने टैक्सी रोक दी। उतर कर पुलिस के पास गया।

पूछा—“थानेदार साहब हैं ?....”

“हैं ?....तुम कहाँ से आ रहे हो ?”—

“मुझे कप्तान साहब ने भेजा है....”

सुनकर पुलिस में बेहद स्फूर्ति आ गई। भट से बोला—“तुम आओ मेरे साथ....”

दोनों थाने के अन्दर आये।

“ओ भाई दानसिंह !”—सिपाही ने पुकारा—“इन्हें कप्तान साहब ने भेजा है....”

दानसिंह पास आया। उसने धूरकर लाल को देखा, फिर बोला—“मेरे साथ आओ....”

लाल थानेदार के सामने लाया गया।

“क्या है दानसिंह ?”—थानेदार ने पूछा।

“इस आदमी का मिस्टर शर्मा ने भेजा है”—दानसिंह बोला।

“ओह !....क्या खबर लाये हो भाई !”

लाल ने बिना आवश्यकता के बोलना उचित न समझा, उसने जेब में निकाल कर एक कागज थानेदार के हाथ में दे दिया। थानेदार ने कागज उठाकर देखा। पढ़ने लगा—

“मैं एक जासूस और कुछ पुलिस सादी वर्दी में भेज रहा हूँ। उस लड़की का तुरन्त इनके साथ कर देना !”

पढ़कर थानेदार ने उड़ती दृष्टि से लाल का देखा।

फिर बोला—“ओह ! तो आप जासूस हैं ?...”

“जी हाँ !” लाल ने कहा।

“खूब भाई, खूब ! आप लोग भी वेश बदलने में कमाल कर देते हैं”—थानेदार हँसकर बोला—“फाटक के सिपाही ने कोई बेअदबी तो नहीं की !”

“जी नहीं—धन्यवाद !”

“आपके साथ के और लोग कहाँ है ?....” पूछा थानेदार ने।

लाल इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए पहले से ही तैयार था बोला—“मिस्टर शर्मा ने कहा था कि बागी लोग भी उस लड़की को छुड़ाने की फिक्र में होंगे और हो सकता है कि उनके कुछ जासूस भी थाने के आस-पाम चक्कर लगा रहे हों, अतः तुम अकेले ही जाना, अन्य लोगों को कुछ दूर पर ही उतार देना....”

“ठीक है....तो आपने उन्हें उधर ही उतार दिया है ?”

“जी हाँ। हम-आप तो हुकमी बन्दे हैं न ?....”

“क्या करें साहब !”—थानेदार ने कहा—“पेट न होता तो इतनी जलील नौकरी क्यों करते ? दिन और रात में कभी आराम की शकल भी नहीं देख पाता...हाँ ! तो आपके साथ यहाँ से कुछ पुलिस भी कर दूँ ?”

“बेकार है”—लाल ने कहा—“मेरी टैक्सी चारों ओर से सुरक्षित है....थोड़ी दूर आगे तो मेरे साथी मिल ही जायेंगे....व्यर्थ के दिव्यात्रे से बागी भी कान खड़े कर लेंगे....”

“दानसिंह ! उस छोकरा को लाओ....” थानेदार ने आज्ञा दी।

नयना लाई गई। लाल ने देखा, सुन्दर चेहरा पीलापन लेकर और भी मुन्दर हो गया, लगता था। जैसे वह इधर एक पल के लिए भी न सोई हो और हमेशा किसी चिन्ता में लीन रही हो।

लाल को उस लड़की की विवशता पर बड़ी दया आई।

नयना ने भी लाल को देखा, मगर पहचान न सकी।

“आप अपनी टैक्सी अन्दर ला दें तो अच्छा हो—” थानेदार ने कहा।

लाल बाहर आया, टैक्सी स्टार्ट कर थाने के अन्दर ले गया। दानसिंह ने नयना को ठेलकर टैक्सी की पिछली सीट पर बैठा दिया और फाटक बन्द कर दिये।

“अच्छा चलो साहब !....”

“बेहतर है”—थानेदार ने कहा—“कप्तान साहब से हमारा सैल्यूट बालियेगा और कहियेगा कि हम लोग सभी तरह खिदमत के लिए बिल्कुल तैयार बैठे हैं....”

लाल ने थानेदार से हाथ मिलाया और टैक्सी स्टार्ट कर दी।

थाने के बाहर आकर टैक्सी तेजी के साथ भाग चली।

थानेदार अभी आकर मेज पर बैठा ही था कि फोन की घंटी बज उठी। थानेदार ने रिसीवर उठाया—“हलो !...मैं थानेदार ! जमनापुर से बोल रहा हूँ....आह ! मिस्टर शर्मा हैं ?...गुडमॉर्निङ सर !...क्या कहते हैं सर ? उस लड़की का जेल भेज दूँ ?...मगर उसे तो आपका जासूस अभी आकर ले गया है। क्या ?...वह आपका आदमी नहीं था ? आपने उसे नहीं भेजा था ?...माई गाड ! वह...वह तो निकल गया....जी हाँ, टैक्सी का नम्बर मुझे याद है ३२५७, रंग हलका हरा है...जी, शेवर लेट गाड़ी है।....बेशक बुरा हुआ। मैं अभी सभी थानों का फोन करता हूँ। आप शहर के चौराहों पर तुरन्त पुलिस तैनात कर दें...जी, मुझे माफ करें....बड़ा शर्मिन्दा हूँ...मेरे पास माटर सायकिल भी नहीं कि पीछा करूँ....”

उधर लाल तेजी से टैक्सी भगाये जा रहा था। उसे किसी प्रकार के भी खतरे की आशंका नहीं थी। ३-४ मील आ चुकने पर लाल ने एक टैक्सी खड़ी देखी। ड्राइवर बाहर निकल कर खड़ा था। लाल की टैक्सी का देखकर ड्राइवर सजग हुआ। उसने हाथ ऊपर उठाकर इशारा किया।

लाल ने टैक्सी रोक दी और उतर कर उसके पास आया !

“क्या है ?”—पूछा उसने।

“आप अपनी टैक्सी छोड़ दीजिये और मेरी टैक्सी पर जाइये”—

“और यह लड़की ?...”

“इसे भी ले जाइये....”

“ऐसा क्यों ?”—लाल ने पूछा।

“सरदार की आज्ञा !...आप जरा जल्दी करें...”

लाल ने अपनी टैक्सी पर से नयना को उतार कर दूसरी टैक्सी पर बिठाया। टैक्सी चल पड़ी। लाल हँसाने था कि सरदार ने ऐसा प्रबन्ध क्यों किया।

अब तक नयना चुपचाप बैठी थी। लाल को उसने पहचाना न था। वह सोच रही थी कि अब भी वह पुलिस के ही नियन्त्रण में है।

पुलिस के पंजे में आकर नयना ने जो-जो कष्ट उठाये थे, वह भूलने की घटना नहीं थी। नयना का बाप मर गया था, घर उजड़ गया था, वह निराश्रिता हो गई थी, फिर भी वह भीख माँगकर गुज़र करना पसन्द करती थी, मगर पुलिस की कैद में रहना नहीं।

लाल अभी नयना को अपना परिचय नहीं बताना चाहता था, इसीलिये चुपचाप तेजी के साथ टैक्सी चलाये जा रहा था।

“तुम मुझे कहाँ ले जा रहे हो ?” नयना का स्वर भयभीत था।

“जेल !” लाल ने छोटा-सा उत्तर दे दिया।

नयना को निश्चय हो गया कि अब उसकी जिन्दगी जेल में ही कटेगी। ज़बानों के सपने जेल की दीवारों में ही बूढ़े हो जायँगे।

उसने चारों ओर देखा। टैक्सी की छत ऊपर से खुली थी। मगर सड़क के किनारे के पेड़ इतने नीचे नहीं थे कि वह बन्दर बन कर ऊपर चढ़ जाय।

लाल को किसी विपत्ति की आशङ्का हाँ आई थी। अगर विपत्ति मिर पर न होती, तो सरदार कभी ऐसा प्रबन्ध न करते।

आधे घण्टे तक टैक्सी भागती रही।

तभी लाल की दृष्टि एक आदमी पर पड़ी, जो उसे दूर से ही इशारे कर रहा था।

लाल ने टैक्सी रोक दी।

आदमी पास आकर बोला—“ये कपड़े लेकर आप अपनी

असली सूरत पकड़ लें और यहाँ से पैदल ही घर चले जायँ...लड़की को मेरे हवाले करें....मगर लड़की...लड़की....लड़की कहाँ है ?....”

आश्चर्य से लाल ने घूम कर देखा तो मोटर खाली थी। नयना पता नहीं कब और कहाँ उतर गई थी।

“बड़े आश्चर्य की बात है”—लाल ने कहा।

“अब देर करने का मौका नहीं”—वह आदमी बोला—“जाने दीजिये, उस लड़की की फिर खोज की जायगी...इस समय आप अपने कां बचायें। पुलिसवाले चारों ओर खड़े हैं....वह टैक्सी मैं ले जाना हूँ, ३२५७ की गाड़ी कौन ले गया ?...”

“नम्बर ३५ ले गया”—लाल ने कहा।

“वह किसी आफत में न पड़े, इसका प्रबन्ध करना है....पता नहीं उसने गाड़ी का नम्बर बदला या नहीं ?....अच्छा तो आप जायँ....”

लाल एक छोटो-सी गठरी उस आदमी के हाथ से लेकर पास ही के एक पुल के नीचे चला गया। उस गठरी में लाल के कपड़े थे। थोड़ी ही देर में लाल वहाँ से निकला तो वह अपने असली वेश में था।

मस्त चाल से सीटी बजाता हुआ वह आगे बढ़ा। शहर वहाँ से केवल दो मील पर था।

शहर में घुमने पर उसने देखा कि हर चौराहे पर पुलिस के जत्थे खड़े हैं और सभी टैक्सियों तथा कारों को रोक कर पूछताछ कर रहे हैं।

लाल निर्भय अपने डेरे पर पहुँच गया।

अभी वह ताला खोल ही रहा था कि पीछे से आवाज आई—  
“बच्चा !....”

लाल ने घूमकर देखा, बूढ़े भिखारी की उँगली मस्तक पर थी।

लोग आ-जा रहे थे। भिखारी बोला—“कुछ दे दो बच्चा !.... ईश्वर भला करे....”

लाल पैसा निकालने के लिए जेब टटोलने लगा।

“बच आये बेटा लाल ?”—भिखारी धीरे से बोला—“यहाँ तो पूरी सरगर्मी है....वह लड़की नम्बर ४७ के साथ चली गई न ?”

“जी नहीं !.... वह तो रास्ते में ही न जाने कहाँ उतर गई थी—” लाल ने कहा ।

“तुम्हें उसने पहचान लिया था ?”

“नहीं !....”

“मैं चलता हूँ, कल शाम को आऊँगा”—बोला भिखारी, फिर उसने जरा तेज आवाज में कहा—“मिल जाय बेटा ! दूसरा दरवाजा देखू....”

लाल ने कुछ पैसे जेब से निकाल कर भिखारी के हाथ पर रख दिया और वह आशीर्वाद देता हुआ चला गया—“भगवान भला करें दाता का ! जियो मालिक ! खुश रहो !....”

लाल दरवाजा खोलकर अन्दर आ बैठा ।



जाड़े में दोपहर की धूप भी बड़ी भली लगती है । जी चाहता है कि धूप ही खाये, पिये और पहनें । रेखा बरामदे में कुर्सी पर बैठी हुई धूप खा रही है । बूढ़ी दाई पास ही बैठ कर रेखा के लिये एक नये डिजाइन का स्वेटर बुन रही है ।

और चहकती हुई बुलबुल की वह निस्वरता बूढ़ी दाई को प्राज खल रही है । इतनी उम्र के अनुभव ने उसे बता दिया है कि रेखा अवश्य ही कल लाल से झगड़ा कर आई थी । तभी तो उसने रात में खाना नहीं खाया और न आज सुबह चाय ही पी ।

“रेखा !....”

“.....” रेखा चुप रही ।

“बोलेंगी नहीं आज ?”

“क्यों बोलूँ...तुम्हारा लाउड-स्पीकर तो बज रहा है”—रेखा ने रूखे स्वर में कहा ।

“आज इस तरह से गुमसुम क्यों बैठी है तू ?”

“तुम्हारी तरह से बचपन कहाँ से लाऊँ जो खेल्नूँ कूदूँ”—बोली रेखा—“तुम चुपचाप स्वेटर बुनो दाई ! जबान की कैची न चला कर, हाथ की सूइयाँ जरा तेज चलाओ । जाड़े में स्वेटर न रहने से मुझे जुकाम हो गया है....”

“जुकाम होने पर नाक बहा करती है, आँखें नहीं बहती रेखा !....तू अपने आँसू तो पोंछ ले....पता नहीं इसे कल से क्या हो गया है ? कुछ बताती भी नहीं कि कोई उपाय करूँ....पाल-पोस कर इतनी बड़ी कर दिया इसे, अब आँसू दिखाकर जान लेना चाहती है....”

रेखा ने चटपट अपनी आँखें पोंछ ली और कुर्सी पर से उठ खड़ी हुई ।

“कहाँ जाती है ?”—दाई ने पूछा ।

“जहाँ तुम्हारे लाउड-स्पीकर की आवाज न पहुँच सके....”

“सुन तो !”—दाई ने उठकर रेखा का हाथ पकड़ लिया और उसे पुनः कुर्सी पर बिठा कर उसका सर सहलाने लगी—“रेखा ! क्या हो गया है तुमको ?....”

“कुछ नहीं दाई ! मेरे सर में दर्द है....”

“हे भगवान् ! बचपन में तो इसे कभी कोई बीमारी नहीं हुई, अब जवानी भी आई तो सरदर्द बनकर....ऐसा तो होता ही है लड़की !....कभी-कभी आपस में कहा-सुनी तो हो ही जाती है । उस लाल-पीले ने तुम्हें कुछ कह दिया है क्या ?....”

“हाँ”—रेखा जोर से बोली ।

“तभी आँखों में बेमौसम के बादल घिर आये हैं और चेहरे पर आँधियाँ चल रही हैं....सुन रेखा ! रुठने के बाद का मिलाप बड़ा अच्छा लगता है। अभी तू बच्ची ही तो है, क्या समझेगी ? जरा-सी बात हुई तो लगी सिसकने—चल मैं अभी लाल से कह-कर मेल करा देती हूँ....”

“मैं उनके पास नहीं जाऊँगी दाई !....” रेखा ने कहा।

“क्यों ?...”

“उन्हें मैं अच्छी नहीं लगती....”

“उस छोकरे की आँखें पत्थर की हैं क्या, जो तेरी सूरत देख नहीं सकता ?....तू भला किसे अच्छी नहीं लगेगी !....”

“वे कहते हैं मेरे यहाँ मत आया कर।”

“तां मत जा तू उसके पास”—दाई बाली—“दो-चार दिन नहीं गई, तो वह छाकरा खुद दौड़ा आयेगा...बड़ा लाट साहब का नाती बन गया है। तूने ही तो उसे सर चढ़ा लिया है....मेरी चले, तो मैं उस दर्दमारे का एक दिन में ठीक कर दूँ...”

“क्या बात है दाई ?....” पीछे लाल खड़ा था।

“अरे लाल बेटा ! आओ-आओ !...देखा, रेखा बिटिया को आज जुकाम हो गया है...”

“तभी तो नाक न बह कर आँखें बह रही हैं दाई !”

रेखा को लगा, जैसे लाल व्यङ्ग्य कर रहा है।

“बड़ा अच्छा स्वेटर बुन रही हो दाई !” लाल ने कहा—“एक मेरे लिए भी बुन दांगी ?”

“रेखा तो मुझसे भी अच्छा बुनती है बेटा !...तुम्हारे लिये भी बुन देगी...”

“रेखा तो पंगु है दाई ! तभी तो अपना स्वेटर तुमसे बुना रही है....जुकाम में तो ऐसा होता ही है....”

अब रेखा को असह्य हो उठा। वह तेजी से उठी और अपने

कमरे में चली गई। लाल आया था मेल करने, परन्तु सब कुछ बेमेल हो गया।

और समय होता तो लाल की बातों पर रेखा हँस पड़ती, परन्तु इस समय तो वह और भी रुष्ट हो गई।

“रेखा को क्या हो गया है दाई ?....”

“यह तो तुम ही जानो बेटा !”—दाई ने कहा—“तुम दोनों के बीच पड़ते-पड़ते तो मेरी मौत आ गई....क्यों उसे खिन्ना देते हो तुम ?...”

“मैं क्यों खिन्नाऊँ ? कल वह खुद ही रुठकर चली आई थी.... इस समय मैं मनाने आया था, तो और भी नाराज हो चली....”

“तुम भी बेटा लाठी मारकर नाराजी भगाते हो....ऐसा भी कहीं चलता है...मनाने के लिये पाँव पड़ना पड़ता है—समझे ?”—बूढ़ी दाई अर्थपूर्ण ढङ्ग से मुस्कुलाई।

“लाल को पाँव पड़ना नहीं आता दाई....मेरे पैर सलामत रहे तो जूतियाँ अपने-आप आ जायँगी....”

“क्या कहता है लड़के !...रेखा तेरी जूती है ?....तू भी कम शैतान नहीं है, नहीं तो मेरी रेखा शीशे पर पैर रखकर भी फिसलनेवाली नहीं...”

“मैं जाता हूँ दाई !...रेखा को कभी मेरी जरूरत पड़े तो बुला लेना...”

“जाओ तुम !” दाई ने कहा—“रेखा तुम्हें क्यों बुलाने जायगी ?...प्यासे की प्यास अगर सच्ची है, तो कुएँ को खुद उसके मुँह तक उठ आना पड़ेगा....”

लाल कुछ बोला नहीं। उल्टे पाँव लौट गया।

दाई रेखा के कमरे में आई तो तकिये में अपना मुँह छिपाकर वह रो रही थी। तकिये का गिलाफ भींग चला था।

“रेखा होश में आ...उस छोकरे को जाने दे” दाई ने रेखा के पास बैठते हुए कहा ।

“दाई !”—रेखा बोली....“लाल भैया खुद ही बिगड़ते हैं और खुद ही रूठते भी हैं...मैंने कुछ नहीं किया था....लाल भैया मुझे अपने साथ रखना नहीं चाहते...”

“तो तू उसका साथ छोड़ दे...”

“नहीं दाई ! यह नहीं हां सकता...” सिसक रही थी रेखा—  
 (“सूर्य की ही चमक से चन्द्रमा में चाँदनी है गुलाब की ही खुशबू से हवा महँकती है....लाल मेरे लिये जो हैं, वैसा दूसरा कोई भी नहीं हो सकता...).क्या वे चले गये दाई ?”

“हाँ !...”

“तुमने उन्हें क्यों जाने दिया ? वे जाने लगे तो उन्हें रोका क्यों नहीं ?”

“पगली ! उड़ते हुए भौंरे को पकड़कर कौन डङ्क खाना चाहेगा....”

“वे मुझसे रूठ गये हैं दाई ! वे आये और मैं बोली तक नहीं...लाल भैया अब मेरे पास कभी न आयेंगे....”

“वह जरूद आयेगा...तू धीरज रख । घबड़ाने से काम नहीं चलता....”

कहकर दाई चली गई खाना पकाने ।

उस दिन रेखा ने कुछ न खाया । अपने कमरे में चिन्ता में मग्न पड़ी रही । लाल को मनाने का उसका जी चाहता था परन्तु नारीजनित मान उसे रोके हुए था । वह चाहती थी कि लाल स्वयं आकर उसे मनाये ।

शाम को मिस्टर शर्मा दिन भर की परेशानी के बाद लौटे । वे आज दोपहर को खाना खाने भी नहीं आ सके थे । दाई से यह सुनकर कि रेखा की तबियत खराब है, वे उसके कमरे में आये ।

रेखा लिहाफ में बदन छिपाये पड़ी थी। रात के आठ बज रहे थे।

“रेखा !....”

रेखा ने लिहाफ से सर निकाल कर कहा—“जी !....”

“कैसी तबियत है ?....”

“बिल्कुल ठीक !”

“दाई तो कहती थी कि तुम्हारी तबियत बहुत खराब है”—  
मिस्टर शर्मा ने कहा।

“दाई पागल है....” रेखा बोली।

“सुन लीजिए”—दाई बोली—“इस लड़की की बातें मुझे  
जरूर पागल बना देगी...दिन भर से एक दाना भी मुँह में नहीं  
रखा है इसने, अब कहती है कि तबियत बिल्कुल अच्छी है...यह  
खेल मुझे जरा भी नहीं सुहाता रेखा !....”

“नहीं सुहाता, तो मेरे पास मत आया करो”

“ले मैं नहीं रुकती...अब जा जा मे आये कप्तान साहब से  
मेरी शिकायत कर दे....बहुत करेंगे फाँसी दे देंगे....माँ बनकर इसे  
पाला, अब बेटा बनकर इसकी मार सहूँ, यही बाकी रह गया  
है”—भुनभुनाती हुई दाई चली गई।

“रेखा ! तू दाई को परेशान मत किया कर”—मिस्टर शर्मा  
बोले—“सच कहता हूँ, यह न होती तो तू भूख-भूख करके मर  
जाती और यह सरकारी नौकर एक पल के लिये भी तेरे पास बैठ  
कर तुझे दूध न पिला पाता। दाई ने तेरे लिये कम कष्ट नहीं भेले  
हैं। तू बीमार पड़ी है, तो उसने रात आँखों पर रखकर बिता दी  
है। तू खुश रही, तो उसने दिन हँसकर गुज़ार दिये हैं !....बेचारी  
बूढ़ी हो चली। तेरे लिये उसके कलेजे में माँ से कम ममता नहीं....”

“दाई का दिमाग ठिकाने नहीं रहता पिताजी !”—बोली रेखा—  
“देखिये न, एक तो मेरी तबियत खराब, दूसरे सवाल पर सवाल....  
किसका-किसका जवाब दूँ मैं ?...”

“अभी तो कहती थी कि तेरी तबियत बिल्कुल अच्छी है”—  
रेखा ग्रीष्म उठी। बोली—“आप भी ठीक दाई की ही तरह  
हैं पिताजी !....आप दिन भर से अब तक कहाँ थे ?”

“भक्त मारने से फुरसत मिले तब तो घर आऊँ ?”—मिस्टर  
शर्मा ने कहा—“इन बलवाइयों के मारे तो जान अजीब मुसीबत में  
है....आज वे जमनापुर थाने से एक कैद लड़की को भगा ले गये....”

“कैद लड़की ?”—रेखा उठ कर बैठ गई।

“हाँ ! कार पर वे उसे छुड़ा ले गये....वह लड़की भी उन्हीं के  
दल की मालूम होती है....”

“पिताजी ! क्या उनके गरोह में लड़कियाँ भी हैं ?”

“होंगी ही...कौन जाने ?....”

“लड़कियाँ भी क्या इतनी निडर हो सकती हैं ?”

“तेरी तरह सभी डरपोंक तो होंती नहीं रेखा !...उसी लड़की  
का देख न, उसकी आँखों के सामने उसका घर जल गया, उसके  
बाप की जान ले ली गई, मगर उसने मुँह की ज़बान तक न  
हिलाई....”

रेखा की आँखें आश्चर्य से फैल गईं।

बोली—“तब तो मैं उस लड़की का जरूर देखूँगी पिताजी !  
मेरी ही तरह तो होंगी ?....”

“नहीं तो क्या उसके दो सिर और चार हाथ हैं....पगली कहीं  
की !...अब वह लड़की हमारे पंजे में कहाँ है जो तू देखेगी ? उसे  
तो बलवाई भगा ले गये....”

“अच्छा हुआ, बेचारी की जान बच गई, नहीं तो क्या आप  
लोग उसे यों ही छोड़ सकते थे ?....”

“उसकी तां क्या, अगर वैसा काम तू भी करे, तो तेरी भी  
जान नहीं छूट सकती रेखा !....” मिस्टर शर्मा के स्वर में दृढ़ता  
थी, जिसे रेखा ने लक्ष्य किया।

“अब आप जाकर खाना खा लीजिये पिताजी ! दिन भर के भूखे हैं....” रेखा ने बात बदल दी ।

“तू भी भूखी ही है—नहीं खायेगी क्या ?....”

“बीमार बनाना हां तो कहिये चलकर खाल्डू....”

“रहने दे तब....काई दवा ली या नहीं ?....”

“दवा की अभी जरूरत नहीं समझी....” रेखा ने कहा ।

मिस्टर शर्मा चले गये । रेखा ने पुनः लिहाफ से मुँह ढँक लिया । चाहती थी कि लाल का ख्याल उसे न आये, मगर आकर ही रहा—तो आँखों में आँसू भर आये ।

लाल उसे ससझाया क्यों नहीं ? वह उससे दूर-दूर रहने की चेष्टा क्यों करता है ! रेखा ऐसी नारी नहीं, जो पुरुष के पाँव की बेड़ी बनकर रहे । वह तो ऐसी तारिका है, जो चाँद के पास रह कर और चमकेंगी ।

तो लाल को रेखा की जरूरत कब महसूस होगी ? कब वह अपनी जीवन-रेखा को पहचानेगा ?

रेखा की नाव किनारा खाँज रही है और किनारा अपने आप दूर भागा जा रहा है । रेखा का कोई सहारा नहीं, वह किसे पुकारे ? उसकी अकेली जान तूफान के थपेड़ों से अपनी जिन्दगी की नाव कैसे बाहर करे ?

रेखा को उस रात नींद नहीं आई !

प्रातःकाल के समय थोड़ी देर के लिए आँखें झपकी तो भयानक स्वप्न नाच उठा । रिवाल्वर की गरज, गोलियों की सनसनाहट, चीख-पुकार और इन सबसे ऊपर बेड़ियों में जकड़ी मातृभूमि का करुण मुख !...देखती रही रेखा, सुनती रही चीख-पुकार और गोलियों की गरज । विचलित नहीं हुई वह । भागी भी नहीं । उसने एक रिवाल्वर निकाला । साधकर गोला छोड़ दी और माँ की बेड़ियाँ एक ही बार में टूटकर बिखर गईं । दौड़कर

वह उन कोमल पैरों से जा लगी। बोली—“माता। तुम्हें बचपन में ही खो दिया था, आज तुम्हें पा सकी हूँ।” और माता के मुख की करुणा धीरे से हँस पड़ी। रेखा निहाल हो गई। वह माता के पास पहुँचना चाहती थी, आज पहुँच भी गई।

स्वप्न का प्रारम्भ भयानक और अन्त सुखद था। नींद खुली तो रेखा ने देखा, उसके गाल तर थे आँखों के पानी से। उसके नेत्रों के समक्ष अब भी माता की वह मूर्ति नाच रही थी।

वह उठ बैठी।

कुछ देर तक स्वप्न पर विचार करने लगी। मातृभूमि का वह दर्शन कितना मुग्धकर था।

परन्तु वह माँ की सेवा करे तो कैसे?

रास्ता उसका अनजाना है, अनदेखा है।

और रास्ता जाननेवाला लाल उससे रूठ बैठा है, उसे अपनाना नहीं चाहता। नारी के हृदय का विद्रोह किसका सहारा लेकर पनपे, किसकी ज्वाला पकड़कर प्रज्वलित हो?

लाल की याद आने से रेखा का मुख गम्भीर हो उठा।

वह उसे मनायेगी। रेखा का लाल उससे रूठा नहीं रह सकता। उसे मानना ही पड़ेगा। उसे अपना हठ छोड़ना ही पड़ेगा। उसे रेखा को अपनाना ही होगा।

रेखा ने हृद् संकल्प कर लिया।

वह अपने लाल भैया के पास जायेगी। उसके पैरों पर सर रखकर गिड़गिड़ायेगी। कहेगी—“लाल भैया! मुझे माफ करो। अपनी रेखा को क्षमा करो...”

एक घण्टे बाद ही रेखा धीरे-धीरे चलकर लाल के दरवाजे पर आ खड़ी हुई।

दरवाजा भिड़काया हुआ था। आहिस्ता से रेखा ने उसे खोला। लाल मेज पर बैठा था। उसकी पीठ दरवाजे की ओर थी।

उसके सामने मेज पर रेखा की फोटो रखी थी, जिसे वह निरनिमेष दृष्टि से देख रहा था ।

कह रह था—“मेरी रेखा ! तू क्यों रूठ गई हैँ मुझसे ?....क्या चाहती है तू ?...मैंने पहले ही कह दिया था कि रेखा के परे लाल का कोई अस्तित्व नहीं....रेखा से दूर रहकर पंगु है, अपाहिज है, पागल है... फिर भी तू रूठ ही गई रेखा !...कसूर भी न बताया कि उसका प्रतिकार कर सकता....कुछ कहा भी नहीं कि कुछ समझ सकता...तेरे दिल की बात मुझसे छिपी नहीं है रेखा !....तू आगे बढ़ना चाहती हैँ...तू अकाश चूमना चाहती हैँ....मगर एक कमजोर इन्सान तुझे क्या मदद दे सकता हैँ ?...केवल एक गंगा को ही भागीरथ ने रास्ता दिखाया था; मगर दूसरी नदियाँ तो स्वयं अपना मार्ग बनाकर बह चलती हैं...तुझमें ताकत हांगी, तो खुद उठेगी रेखा ! लाल तेरा पाँव खींचकर भी तेरी महानता को नहीं ला सकेगा...”

सुन रही थी रेखा । उत्तरोत्तर गम्भीर होती जा रही थी वह ।

लाल बेखबर था ।

रेखा ने उसे खबर दी, पुकार कर—“लाल भैया !....”

लाल चौंकर घूमा । पीली पड़ी रेखा पर उसकी दृष्टि जम गई ।

रेखा आगे बढ़ आई । मेज पर से अपना फोटो उठाकर देखने लगी, फिर ज्यों का त्यों रख दिया उसने !

“रेखा ! क्यों आई हो ?....” पूछा लाल ने ।

“क्या आने का भी अधिकार मेरा छीन लिया गया लाल भैया ?” बोली रेखा—“अनाधिकार चेष्टा करके आई हूँ तो थोड़ी देर बैठकर ही जाऊँगी....”

“बैठा न !....कैसी हो रही हा ?”

“जैसी तुम देखना चाहते थे”—रेखा बैठते हुए करुण-कण्ठ से

बोली—“तुमसे अलग होकर रह सकती, तो यहाँ न आती....आ गई हूँ तो बुरा न मानो लाल भैया !....”

“रेखा ! तुम्हें अपने से अलग कर ही कौन रहा है ?...”

“तुम लाल भैया, और कौन ?”—रेखा क्षीण हँसी हँस पड़ी—  
“तभी तो सजीव रेखा से अधिक, रेखा की निर्जीव फोटो तुमको प्यारी है....है न ?....”

“तू रुठ चली थी, तो तेरी फोटो से ही बातें कर रहा था ।”

“तुम सब कुछ कर सकते हो लाल भैया ! मगर रेखा जैसी जवान इस फोटो को नहीं, जो यह तुम्हारी बातों का जवाब दे सके.. कभी जवाब पाने की लालसा उठेगी, तो उसे सजीव रेखा ही पूर्ण कर सकेंगी....इस फोटो में तुम निर्जीव रेखा की हँसी देख रहे हो, मगर सजीव रेखा के आँसू तुम इसमें न देख पाओगे....”

“रेखा ! तुम फिर वैसी ही बातें करने लगी ?”

“मैं एक बात पूछने आई थी लाल भैया !”

“पूछो !...”

“तुमने कभी किसी बहरे टैक्सीवाले को देखा है ?” रेखा ने पूछा ।

लाल चौंक पड़ा । यह रेखा क्या पूछना चाहती है ?

“मैंने तो ऐसा ड्राइवर नहीं देखा ! तुमने देखा था क्या ?....”

“हाँ !...बड़ा अच्छा आदमी था बेचारा !...३२५७ नम्बर की टैक्सी चलाता था...”

अब लाल और चौंका । बोला—“तुम्हें उसका नम्बर तक याद है ?...”

“क्यों न याद रहे ?”—रेखा गम्भीर स्वर में बोली—“उसी टैक्सी पर तो मैं घर तक आई थी और उस बहरे से कुछ मजेदार बातें भी की थीं....”

“बहरों से बातें करने में बड़ा आनन्द आता है रेखा !”

“हाँ लाल भैया !....मगर मेरी राय में बहरे लोग दगाबाज भी कम नहीं होंते ?...”

“वह कैसे ?...”

“पिताजी कह रहे थे कि ३२५७ नम्बर की टैक्सी पर ही जमनापुर थाने से एक कैदी लड़की भगाई गई थी....और आश्चर्य तो यह है कि इस नम्बर का लाइसेंस भी चार साल पहले ही काटा जा चुका है....”

लाल के मुख से शब्द न निकले। वह चुपचाप विस्फारित नेत्रों से रेखा का मुख देख रहा था कि लड़की का जटिल स्वभाव उसे पग-पग पर परास्त करके ही रहता है।

“लाल भैया ! चुप क्यों हो रहे हो ?”—रेखा अब भी गम्भीर ही थी।

“सोच रहा हूँ मैं उस दगाबाज बहरे की बात !...” लाल ने कहा।

“सोचकर क्या करोगे ?....अब तो वह बहरा और उसकी लड़की दोनों न जाने कहाँ होंगे ?....”

“लड़की कौन ?”

“वही, जो जमनापुर थाने में कैद थी और जिसे वह बहरा मगा ले गया....वह लड़की उसकी कौन रही होगी लाल भैया ?”

“मैं क्या जानूँ ?”—लाल तेज नज़रों से रेखा की ओर देखता हुआ बोला।

“वह उसकी प्रेमिका ही रही होगी”—रेखा स्थिर भाव से कह रही थी—“तभी तो उसने जान बूझी पर रखकर उसे बचाया... लाल भैया ! बहरों की श्रवण-शक्ति शून्य हो जाती है, तो क्या उनके हृदय का स्पन्दन भी गतिहीन हो चलता है ? मैं तो इसे नहीं मानती। बहरा तो क्या, अन्ये इन्सान को भी दिल तो होता है—क्यों लाल भैया ?...”

“चुप रहो रेखा !”—लाल का स्वर तेज हो गया था—“व्यर्थ की बातें मुझसे न किया करो....”

“बिगड़ो मत लाल भैया !....मैं सिर्फ यही पूछने आई थी... अब जा रही हूँ....मगर बहरों की चर्चा इतनी बुरी क्यों लगती है तुम्हें ?....वे भी तो आखिर इन्सान ही हैं...उन्हें भी समझो तो तुम्हारा अनुभव कुछ घट नहीं जायगा....चढ़ना चाहो तो उसबहरे ड्राइवर को बुला दूँ....उसने तो मेरे यहाँ नौकरी करने का वादा भी किया था...या चाहो तो खुद बहरे बनकर कभी टैक्सी चला देखो. ३२५७ न सही तो ५८ ही सही....”

“भाग यहाँ से दुष्ट कहीं की...” चिल्ला उठा लाल ।

“लाल भैया ! रेखा को भी दो आँखें हैं, जिसमें चौबीसों घण्टे लाल की सूरत तैरती रहती है....मुझे भी दो कान हैं, जो लाल भैया की आवाज को रेकॉर्ड किये बैठे हैं । रेखा के सामने से लाल भैया छिप कर भाग नहीं सकते....कभी नहीं भाग सकते....मैं जाती हूँ । अपना यह फोटो लिये ही जाऊँ, इसे रखकर क्या करोगे तुम ? इसे कभी एकान्त में देखने लगोगे तो नाहक ही मेरा दिल तुम्हारे पास खिंच आने को मचलेगा....”

रेखा ने अपना फोटो उठाकर हाथ में ले लिया ।

“तुम्हारी आँखों में जब रेखा का कोई मूल्य नहीं तो कागज के इस टुकड़े का मूल्य लगाकर क्या करोगे लाल भैया ! बेमोल बिकने वाली चीज को तुम ठुकराओ और तुच्छ कागज को अनमोल समझो, यह मैं नहीं देख सकती....कभी तुम्हें इस फोटो को देखने की लालसा लगे तो इस रेखा को ही बुलाकर देख लेना...रेखा स्वर्ग में भी होगी, तो तुम्हारा आवाहन पाकर आँखों में आँसू बनकर उतर आयेगी लाल भैया !....इतना समय तुम्हारा बरबाद किया, इसे यदि मेरा अधिकार न समझो तो क्षमा कर देना !....”

और रेखा तेज़ी से निकल गई।

लाल पुकारता ही रहा—“रेखा !...ओ रेखा !...वह फोटो देती जा...उसे मत ले जा...”

मगर रेखा ने अपने कान बन्द कर लिये थे। वह दौड़ती आकर अपने पलंग पर गिर पड़ी और लगा फूट-फूट कर रोने, रो-रो कर तड़पने।

वह गई थी लाल को मनाने परन्तु वहाँ जाकर वह क्या बक गई, कैसे बक गई, क्यों बक गई, साँचकर वह अपना सर धुनने लगी।

क्या हो गया है उसे आजकल ?

उसका सारा चाञ्चल्य प्रबल-गाम्भीर्य का रूप क्यों धारण कर बैठा है ? वह हँसना चाहकर भी रोने क्यों लगती है ? उसे कौन-सा दैन्य है, जो अपने को वह इतना निस्सहाय पाती है ? उसकी ज़बान उसके वश में आजकल क्यों नहीं है, जो वह अपने दिज्ञ की बातें न प्रकट कर अनाप-शनाप बकने लगती है ? उसका स्वभाव इतना चिड़चिड़ा क्यों हो गया है, जो वह लाल को मनाने जाकर उससे और भी रूठ कर भाग आती है ?

नासमझ रेखा कैसे समझे इस पहेंली को ?

लाल चीनी का पुतला भी नहीं कि उसकी आँखों की नदी में पड़कर गल जाय, सरस बन जाय। वह तो फौलाद का टुकड़ा है, जिसे भीषण आग ही लाल कर सकती है, पिघला सकती है।

परन्तु रेखा ऐसी आग कहाँ से लाये ? उसके अन्तर की ज्वाला तो लाल के सामने जाकरही पानी की गम्भीरधारा बन जाती है और उसके लाख रोकते रहने पर भी ढाल की तरफ आप बह चलती है।

रेखा अत्यन्त व्यग्र हो उठी है और आँसू बहाकर मन की सारी ग्लानि धो रही है।

उधर लाल अपने कमरे में कुर्सी पर बैठा है। आँखों में आँसू

तो नहीं हैं, मगर अन्तराल अग्निमय हो रहा है। रेखा अपना फोटो क्या लेती गई, लाल का आखिरी सम्बल भी चला गया। रेखा ऐसी आग जला कर गई कि लाल के हृदय की सारी कठोरता भभक कर ज्वाला बन गई।

लाल पिघल कर बहना नहीं चाहता। वह रेखा के विषय में सोचना भी नहीं चाहता। वह चाहता है कि जिस तरह से वह नयना का स्वप्न की मूर्ति समझ कर भूल गया, उसी तरह रेखा का मानस-पटल से उतार फेंके।

मगर रेखा तो इतनी जल्दी हटनेवाली नहीं।

वह अपना फोटो छीन ले गई, मगर लाल के हृदय में उसका जो भव्य चित्र अङ्कित है उसे वह कभी नहीं ल जा सकता। रेखा दूर भाग सकती है, मगर उसकी याद लाल के कलेजे में हमेशा शोला बनकर दहकती रहेगी।

लाल दूर नहीं कर पाता रेखा की याद को। उसकी एक-एक बात उसके कानों में बज रही है इस समय। उसके चेहरे की एक एक शिकन उसकी पुनलियों में नाच रही है।

नयना और रेखा में बड़ा अन्तर है। लाल नयना का नहीं, रेखा का है। लाल के जीवन को रेखा का अभाव खल सकता है; परन्तु नयना का अभाव उसके लिये छुटकारे का वरदान है।

सोचते-सोचते शाम हो चली। लाल ने बल्ब भी नहीं जलाया। यों ही सोचता रहा।

तभी बाहर से किसी ने पुकारा—“मिस्टर लालचन्द हैं ?”

स्वर सर्वथा अपरिचित था, कुछ कर्कश भी।

लाल ने कहा—“कौन साहब हैं ?...अन्दर आइये....”

उठकर उसने बल्ब जलाया। तभी एक सूटेड साहब को उसने अन्दर आते देखा।

“आप ही मिस्टर लालचन्द हैं ?....” साहब ने अपने हाथ छोटी-सी अटैची मेज पर रखते हुए पूछा ।

“जी हाँ !...बैठिये....” लाल ने कहकर आगन्तुक की ओर देखा । लम्बा कद, चालीस के पार की अवस्था, बदन पर अँग्रेजी पोशाक, राबाना चेहरा, फ्रेञ्चकट की दाढ़ी और मूँछें, आँखों पर काले रंग की ऐनक, हाथ में मोटा-क्रॉमर्ती सिगार ।

लाल ने इस व्यक्ति को पहले कभी नहीं देखा था ।

पूछा उसने—“काई आज्ञा ?....”

आगन्तुक हँसा । बोला—“थोड़ी-सी तकलीफ़ देने आया हूँ मिस्टर लालचन्द ! मुझे माफ़ करेंगे...”

“कोई बात नहीं...कहिये...”

“मेरा खयाल है कि बात शुरू करने से पहले आप मेरा परिचय जानना पसन्द करेंगे....हँ न ?....”

“जी हाँ ! बड़ी कृपा होगी....” लाल बोला । वह एकटक आगन्तुक के काले चश्मे की ओर देखकर यह अन्दाजा लगा रहा था कि इसके भीतर कैसी आँखें होंगी—लाल, पीली या नीली ?

“माफ़ कीजिये मिस्टर लालचन्द !....मेरी दाईं आँख पत्थर की है...और इन्सान को अपनी बदसूरती छिपाने के लिये कुछ न कुछ तो करना ही पड़ता है....हाँ, तो मैं अपना परिचय दे दूँ...आपको शायद इधर होनेवाले खून तथा हत्या आदि की खबर तो होगी ही ?....”

“जी हाँ—है !...”

“सरकार इन घटनाओं से बेहद परेशान है”—आगन्तुक ने कहा—“चाहे जैसे हो, वह इन बलवाइयों को दण्ड देना चाहती है ....आप मेरा मतलब तो समझ रहे हैं ?....”

“जी हाँ !...” लाल के कान कुछ-कुछ सजग हो रहे थे ।

“मैं सरकार द्वारा राजधानी से भेजा गया एक जासूस हूँ... सरकार का मुझ पर विश्वास है...कितने ही पेचीदे मामलों में

सरकार मेरी मदद से विजयी हुई है मेरा नाम बिलफोर्ड है.... जाति का क्रिश्चियन हूँ मैं...”

“मैं समझ गया”—बोला लाल और उसने अपनी जेब में पड़ा हुआ रिवाल्वर टटोला—“आप क्या अकेले ही आये हैं मिस्टर बिलफोर्ड ?...”

“जी नहीं, मेरे साथ के जासूस एकदम तैयार आपके मकान को चारों तरफ से घेरे हुए हैं”—बिलफोर्ड बोला—“हमारा काम बहुत जिम्मेदारी का है मिस्टर लालचन्द ! इसे तो आप मानते ही होंगे...”

“जी हाँ, क्यों नहीं ?....तो मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ ?”

“शुक्रिया !...आपके विरुद्ध मेरे पास कुछ प्रमाण आये हैं मिस्टर लालचन्द !...अगर मैं आपसे कुछ सवाल पूछूँ तो मुझे उम्मीद है आप बुरा न मानेंगे....”

“जी, हरिज नहीं...आप शौक से पूछें”—लाल ने कहा ।

“आप क्या इधर कभी लखनपुर की तरफ गये थे ?...”

“जी, यह गाँव तो मेरे गाँव के रास्ते में पड़ता है...दो-तीन दिन पहले ही मैं गाँव पर से आ रहा था, तो लखनपुर के आगे ही मेरी सायकिल पञ्जर हो गई थी और मुझे पुलिस ने सन्दिग्ध समझ कर रोक लिया था....”

“आप के गाँव का क्या नाम है ?...”

“मोहनियाँ !....” बोला लाल ।

“मिस्टर लालचन्द !”—बिलफोर्ड बांला गम्भीर स्वर में—“मुझे यहाँ आये दस दिन हो चुके हैं, मगर मैंने अपना चार्ज आज ही लिया है । इस बीच गुप्त ढङ्ग से मैं पता लगा रहा था... मोहनियाँ गाँव से शहर आने के लिये सुदामापुर का रास्ता नजदीक पड़ता है । है न ?....फिर लखनपुर से होते हुए व्यर्थ में सात मील का चक्कर लगाना आपने क्यों पसन्द किया ?...”

“मैं अक्सर उसी रास्ते से आता हूँ मिस्टर बिलफोर्ड !...”

“उसका तो कोई कारण होगा ही ?....”

“जी, कोई कारण नहीं ?....”

“शायद नयना से पुरानी जान-पहचान के कारण ही....”

“कौन नयना !...”

“वही लड़की, जिसके घर जज की हत्यावाली रात को आप ठहरे थे”—बिलफोर्ड हँसा—“उस दिन भी तो आपकी मोटर सायकिल पञ्चर हाँ गई थी, भले हाँ पुलिस की गोली से हाँ, या....”

“मिस्टर बिलफोर्ड ! आपका इरादा क्या है ?...”

“मुझे माफ़ करें....सरकारी आदमी अपने कर्तव्य से मजबूर होता है...”—बिलफोर्ड बोला । वह एकटक लाल के पैर की ओर देख रहा था, जिस पर पाजामा उठा रहने के कारण एक छोटा-सा घाव दिखलाई पड़ रहा था ।

बिलफोर्ड को पैर की तरफ देखता पाकर लाल ने पाजामा झट से नीचे गिरा दिया ।

बिलफोर्ड फिर हँसा ।

“मिस्टर लालचन्द....आपके पैर में वह घाव कब लगा ?....”

“बहुत दिन हुए...”

“मुझे मालूम हुआ है कि जज के हत्यारे को पुलिस की एक गोली लगी थी, क्योंकि सड़क पर खून के कुछ धब्बे दिखाई पड़े थे....आपका यह घाव भी तो अभी ठीक से सूख नहीं पाया है....”

“आप व्यर्थ की शक्का कर रहे हैं मिस्टर बिलफोर्ड !...”

“अच्छा, मैं दूसरी बात पूछता हूँ....क्या आपने कभी ३२५७ नम्बर की टैक्सी चलाई थी, या उस पर सवार हुए थे....”

“नहीं !...?”

“आप शायद उस भिखारी को जानते हों, जो अक्सर भीख माँगने आपके पास आया करता है ?...”

लाल समझ गया कि मामला संगीन हो चला है और यदि उसने तनिक भी आश्रय प्रकट किया तो परिणाम बुरा हो सकता है।

उसने सहज भाव में उत्तर दिया—“उसे जानने की कोशिश नहीं की मैंने। भिखारी समझ कर पैसे दे दिया करता था...”

“तो अब समझ लें कि वह बलवाइयों का सरदार था और इस समय हमारी कैद में है...”

अब लाल चौंके बिना न रह सका।

चिल्ला कर बोला—“नहीं, यह कभी नहीं हो सकता...तुम लोग उसे कभी नहीं पकड़ सकते बिलफोर्ड !”

और तुरन्त ही उसका हाथ जेब में रखा रिवाल्वर लिये बाहर निकलने लगा।

“खबरदार ! जेब की चीज जेब में ही पड़ी रहने दो मिस्टर लालचन्द ! हाथ बाहर निकाला तो ठीक न होगा...”

हताश लाल ने देखा कि बिलफोर्ड का रिवाल्वर उसके मस्तक पर सध चुका है। वह लम्बी साँसें लेने लगा। बिलफोर्ड उसे महान् शक्तिशाली पका जासूस लगा।

अब बिलफोर्ड की दृष्टि उस बड़े-से शीशे की ओर थी, उसके पीछे लाल की सारी क्रान्ति बन्द थी।

“यह शीशा तो बड़ा अच्छा है मिस्टर लालचन्द ! कहाँ से खरीदा था इसे ?...”

“कलकत्ते से मेरा एक दोस्त लाया था...”

“कौन दोस्त ?....वही भिखारी तो नहीं ?....” हँसा बिलफोर्ड “क्या मैं उसे वहाँ से उतार कर देख सकता हूँ ?”

“जैसी आपकी इच्छा !...” लाल ने कह दिया। इस समय उसका मस्तिष्क तेजी से चक्कर काट रहा था। वह जानता था कि इस समय पूरी तौर से बिलफोर्ड के पंजे में आ गया है, फिर भी

बिलफोर्ड उस शीशे के पीछे रखी हुई उसकी डायरी जब तक न पा जाय तब तक उसके विरुद्ध उसके पास कोई प्रमाण नहीं।

जैसे ही बिलफोर्ड उस शीशे की ओर घूमा कि लाल ने उसके रिवाल्वर वाले हाथ में अपने पैरों से जारों का एक बार किया। बिलफोर्ड भी असावधान नहीं था। चोट खाकर भी उसके हाथ से रिवाल्वर नहीं छूटा और उसने घूमकर लाल की कनपटी पर बाँयें हाथ से ऐसा घूँसा जमाया कि लाल लड़खड़ा कर गिर पड़ा।

बिलफोर्ड क्रोध से बोला—“कल के छोकरे मेरे मुँह लगते हो ?...”

लाल उठ खड़ा हुआ। हाँफ रहा था वह। अब कोई उपाय न था। बिलफोर्ड का रिवाल्वर सीधे उसके मस्तक की ओर तना था। वह हर तरह से असहाय पा रहा था अपने को।

“बस सारा बल खतम हो गया ?”—बिलफोर्ड ने कहा—  
“इसी बूते पर सरकार से लोहा लेने चले थे ?”

लाल चुप रहा। उसने तज्जर ऊपर भी न उठाई।

“लाल ! इधर देखो !...” बिलफोर्ड ने कहा।

इस बार का परिवर्तित स्वर सुनकर लाल एकदम चौंक पड़ा। उसे अपने कानों पर विश्वास ही न हुआ ! उसने तेजी से आँखें उठाकर बिलफोर्ड की ओर देखा।

तभी बिलफोर्ड ने एक उँगली से अपना मस्तक खुजलाया।

और लाल दौड़कर उसके पैरों पर गिर पड़ा—“सरदार ! यह कौन-सी परीक्षा ले रहे थे आप ?...”

बिलफोर्ड हँसा और लाल को उठाकर अपने कलेजे से लगा लिया। लाल अब तक हाँफ रहा था।

“मेरे बच्चे ! डर गये थे तुम ?”

“मेरी तो जान ! ही निकल गई थी सरदार ! आप का कैद होना सुन कर....”

“मुझे भला ये सरकारी बुलडॉग कभी पा सकते हैं ?”—सरदार ने कहा—“इसकी कोई चिन्ता न करो लाल ! मैं हमेशा स्वतन्त्र हूँ....इस वेश में एक जरूरी काम से गया था । लौटने पर तुमसे मिलना भी जरूरी था....सोचा, कुछ नाटक ही करता चढ़ूँ....!”

“बेशक सरदार ! रूप और आवाज बदलने में आपको कमाल हासिल है....मुझे तो स्वप्न में भी विश्वास नहीं था कि इस वेश के भीतर आप होंगे....”

दोनों कुर्सी पर बैठ गये ।

सरदार बोला—“लाल ! आज तुम कुछ चिन्तित थे क्या ?...”

“नहीं तो....”

“तुम जरूर कोई गहरी चिन्ता ले बैठे हो, तभी अँधेरा हो जाने पर भी बल्ब नहीं जलाया था....क्या बात है बेटा ! मुझसे कहो...कहना ही पड़ेगा....” सरदार का अन्तिम वाक्य लाल के लिये हुक्म था ।

“रेखा की बात सोच रहा था सरदार !....”

“क्यों ?....रेखा के लिये तुम्हारे दिल में क्या है ?....”

{ “बहन का प्रेम, माता की भक्ति, पत्नी की प्रेरणा...मैं आपको समझा नहीं सकता सरदार ! आप अनुभवी हैं, खुद समझ सकते हैं....” }

“मैं समझ चुका हूँ लाल ! यह तुम्हारी अवस्था का दोष है, जो तुम एक नारी का साहचर्य चाहते हो...क्रान्तिमार्ग में नारी बाधक होती है, इसे भूलो मत....”

“मुझे याद है सरदार !....और तभी तो रेखा को देखकर भी नहीं देखना चाहता, उसे चाहकर भी नहीं चाहता....इसलिये तो मैं उसे पाकर भी खो देना चाहता हूँ सरदार !....”

“लाल !” सरदार तेज स्वर में बोला—“अपनी आवाज समझालो....तुम्हारा इतना भरपाया गला कभी मेरे कानों के सामने

नहीं खुला था...मैं आज ही तुम्हें यहाँ से ले चलोंगा...मैं लाल के लिये रेखा को मरते देख सकता हूँ, परन्तु रेखा के लिये लाल को ज़रा भी व्यग्र होते नहीं देखना चाहता...इतनी दूर आगे बढ़कर भी अब तुम पीछे लौटना चाहते हो ?...”

“नहीं सरदार ! मैं आगे बढ़ूँगा, पीछे मुड़कर रेखा को देखूँगा भी नहीं....आप विश्वास रखें...मगर क्या पुरुष नारी को साथ लेकर अग्रसर नहीं हो सकता सरदार ?...”

“फूलों की सेज पर नारी-पुरुष साथ-साथ चल सकते हैं लाल ! मगर कटीले मार्ग को तय करने के लिये केवल पुरुष का ही कलेजा चाहिये ।”

“रेखा नारी ढाँकर भी पुरुष का साहस रखती है सरदार !”

“तुम्हें विश्वास है ?....”

“विश्वास करना पड़ा है....”

“कैसे” ?

“रेखा मेरे सभी भेद जान चुकी है”—लाल ने कहा—“मेरी डायरी, मेरा रिवाज़, शीशा, सब कुछ देख चुकी है । वह जानती है कि मैंने ही नयना को जमनापुर थाने से भगाया, मैं ही क्रान्तिकारियों के सरदार का दाहिना हाथ हूँ....”

“मुझे भी जानती है वह ?....” आश्चर्य भरे स्वर में पूछा सरदार ने ।

“शायद नहीं...” लाल बोला—“मगर वह बहुत कुछ जानती है सरदार !....”

“इतना जानकर भी वह चुप है ?....”

“जी हाँ !....”

“अजीब लड़की है”—सरदार बोला—“वह अपने बाप को क्रान्तिकारियों की खोज में दर-दर भटकते देख सकती है, मगर

तुम्हारी ओर इशारा करके वह उनका बौझ हल्का करना नहीं चाहती ? . ”

“ऐसा वह कभी नहीं करेगी सरदार !...मैं रेखा को पहचान चुका हूँ । उसके दिल में पिता का प्रेम है, परन्तु उनके पेशे को वह घृणित समझती है । उसके हृदय में भी कम देश-प्रेम, कम क्रांति नहीं....एक दिन कहती थी कि कभी-कभी उसके पिता भी उसकी दृष्टि में निशाचर जैसे दिखते हैं....”

“ऐसा कहती थी वह ?”—सरदार विस्मय से भर उठा था ।

“जी हाँ ! वह भी आगे बढ़ना चाहती है । उसे भी रिवाल्वर चलाने का, खून करने की इच्छा होती है...वह मेरा सहारा चाहती है सरदार !...मुझसे बहुत बार रो-गा चुकी है....आप तक उसकी पहुँच नहीं, नहीं तो आपसे ही वह प्रार्थना करता....उसे क्या अपने साथ ले लेना ठीक नहीं होगा सरदार ?....”

सरदार चुप हो गया । दो मिनट तक कुछ सोचता रहा ।

फिर दृढ़ स्वर में बोला—“मैं उस लड़की की इज्जत करता हूँ लाल !....अभी तो नहीं, आगे चलकर मैं उसे अपने साथ लेने के विषय में सोचूँगा...तब तक तुम उससे दूर ही रहने की चेष्टा करना...अपना भेद भी उससे छिपाये रखने की कोशिश करना....”

“मैं सजग रहूँगा !...”

“तुम्हारे लिये एक जरूरी काम है...”

“कहिये...”

“रेखा के पिता मिस्टर शर्मा की आलमारी में एक पीली फाइल में कुछ कागजात रखे हैं । उन्हें तुम्हें आज रात को ला देना होगा, चाहे जिस तरह से हो...”

“मुझे ही यह काम करना होगा ?”

“हाँ तुम्हें ही—और आज ही रात को...मिस्टर शर्मा की कोठी से बाहर आते ही तुम अपने को सुरक्षित पाओगे....मुझे

उस फाइल की सख्त जरूरत है....कल सुबह आकर मैं उस फाइल को ले जाऊँगा....”

“वहाँ रेखा है सरदार !....वह मेरी आवाज जरूर पहचान जायगी...अभी उस दिन उसने मुझे टैक्सीवाले के वेश में पहचान लिया था...”

“मुझे अफसोस है कि अभी तुम आवाज बदलने में पूरे चतुर नहीं हो सके, फिर भी तुम्हें यह काम करना ही होगा। मेरे पास इस समय कोई आदर्मी खाली नहीं...रेखा तुम्हें पहचान कर भी अपनी ज़बान नहीं खोलेंगी, इसका तो तुम्हें विश्वास होगा ही ?...”

“जी हाँ !....”

“तो ठीक है....खूब सावधानी से रहना। आलमारी की ताली मिस्टर शर्मा के तकिये के नीचे रहती है....अब मैं वेश बदल कर यहाँ से तुरन्त चला जाना चाहता हूँ....”

सरदार ने अपनी अटैची खोली। एक नकाब और काली पोशाक लाल को देकर बोला-“यह रहा तुम्हारी आज की पोशाक, अब तुम ज़रा दूसरे कमरे में चले जाओ, तो मैं वेश बदल लूँ....”

लाल चला गया। सरदार ने अन्दर से दरवाजा बन्द कर लिया। इसके बाद वह अपना वेश बदलने लगा। पाँच ही मिनट में बिलफोर्ड के स्थान पर बूढ़ा भिखारी बैठा नज़र आया। उसने दरवाजा खोलकर लाल को भीतर बुला लिया।

“कुछ देते हो बच्चा कि भिखारी निराश होकर चला जाय ?”— उसने हँसकर कहा।

“भिखारी के लिये लाल की जान हाज़िर है....” बोला लाल।

“शाबास !....”

भिखारी ने लाल की पीठ ठोकी और बाहर हो गया।

लाल कुर्सी पर बैठा तो एकाएक उसके हृदय में भिखारी के

प्रति कुछ शंका उत्पन्न हो आई। शंका का समुचित कारण लाल के पास नहीं था, फिर भी उसे लगा, जैसे इस सरदार के पीछे अवश्य ही कोई विकट रहस्य है, अन्यथा वह अपने-आपको कभी गुप्त न रखता।

कौन है यह सरदार ?

आज लाल का हृदय उसे जानने के लिये तीव्र रूप से लालायित हो उठा।

वह तेजी से उठा। जेब में पड़े हुए रिवाल्वर को उसने हाथ से टटोला, बाहर आकर ताला बन्द किया और उस ओर को लपका, जिधर वह भिखारी गया था।

आज लाल भिखारी का पीछा करेगा। आज वह जानकर ही रहेगा कि वह कौन है, कहाँ रहता है, क्या करता है ?

काफी दूर आने पर लाल ने भिखारी को देखा। वह बिना किसी से भिक्षा माँगे धीरे-धीरे चला जा रहा था। कभी-कभी हाथ उठाकर संकेत करने लगता था कि लोग उसे पागल समझें।

लाल सोचने लगा, इस सरदार का भी अभिनय खूब होता है। कोई उसे पास से भी देखकर शंक्ति नहीं हो सकता। रूप और बोली के साथ वह अपने हाव-भाव एवं चलने का ढंग भी कितना बदल लेता है। यह भी एक कला है और लाल को यह कला नहीं मालूम। बहुत कोशिश करने पर भी वह केवल अपनी आवाज बदलना ही जान पाया है, फिर भी सरदार जैसा पटु वह नहीं हो सका। अगर वह काफ़ी पटु होता, तो उस दिन रेखा कभी उसको पहचान न पाती।

अब लाल भिखारी के कुछ ही पीछे रह गया था। भिखारी को गुमान भी न था कि उसका कोई पीछा कर रहा है।

शहर की घनी बस्ती खतम हो रही थी और सिविल लाइन्स

का सिलसिला शुरू हो गया था। इधर ही बड़े-बड़े अफसरों के बँगले थे।

भिखारी कलेक्टर साहब की कोठी के सामने पहुँचकर रुका। रात ठंडी और सूनी हो रही थी। भिखारी ने एक बार सतर्क दृष्टि से अपने चारों ओर देखा फिर बँगले के दरवाजे पर जा खड़ा हुआ।

दूर खड़ा लाल सब कुछ देख रहा था।

“कौन है तू ?...” दरबान ने भिखारी को डाँटा।

“भिखारी हूँ बच्चा !...कलेक्टर साहब हैं या नहीं ?...बड़े धर्मात्मा हैं बेचारे...उन्हें खबर कर दो बेटा ! बड़ा नाम सुनकर आया हूँ...”

“जा भाग, सूअर कहीं का !”—दरबान ने गाली दी—“बड़ा आया है भिखारी का बच्चा बनकर !...जाता है यादूँ दो-चार हाथ...”

“बूढ़े पर हाथ उठाओगे बेटा !...धर्मात्मा के दरवाजे पर खड़े होकर जुल्म करोगे...चलाओ हाथ, देखूँ तुम्हारा भी....ज्यादा बक-बक करोगे तो मैं यहीं से साहब को पुकारने लगूँगा....”

“तू तो नाहक भगड़ा करता है बूढ़े ! भला रात में भी कहीं भीख मिलती है ?...जा, कल दिन में आना....”

“हाँ, अब तुम ठीक से बोलें हो....दरबान क्या बन गये लाट साहबी मिल गई ! साधू-सन्तों का ज़रा भी आदर नहीं....साहब को जाकर मेरा कागज़ दे दो....”

भिखारी ने एक विजिटिंग कार्ड निकाल कर दरबान को दे दिया। दरबान भिखारी को विस्मय की दृष्टि से देखता हुआ भीतर चला गया।

साहब अपने कमरे में बैठे हुए शाम का अखबार देख रहे थे।

“हुजूर !...” चपरासी ने कार्ड आगे बढ़ा दिया।

साहब ने लेकर देखा, फिर बोले—“उन्हें अन्दर क्यों नहीं आने दिया ?....”

“वह तो भिखारी है हजूर ! कुछ-कुछ सनकी जैसा है !”

“ओह ! अच्छा मैं खुद चलता हूँ !”

साहब बाहर आये तो भिखारी ने सलाम किया । साहब बोले—  
“आइये महात्मा ! बहुत दिनों पर दर्शन मिला....अन्दर आइये...!”

भिखारी साहब के साथ अन्दर जाने लगा, तो दरबान के सर पर जोरो की चपत जड़ता हुआ बोला—“देखा, तेरे बाप मेरी कितनी इज्जत करते हैं...और तू है कि कुत्ते का कुत्ता ही रहा....”

बेचाग दरबान सिटपटा कर रह गया । आश्चर्य भी उसे कम नहीं हुआ, साहब को उस भिखारी की इज्जत करते देख कर ।

“वैठिये !...” अन्दर आकर कलेक्टर साहब ने भिखारी को आदर के साथ बिठाया ।

“पहचानते तो हैं न मुझे ?” बैठकर भिखारी ने पूछा ।

“सिर्फ विजिटिङ्ग कार्ड से ही पहचान पाया हूँ”—साहब ने कहा—“लेकिन आवाज और शकल अभी तक मेरे लिये अपरिचित ही हैं....”

“अब तो पहचान गये ?—” भिखारी अपनी आवाज बदल कर बोला ।

“बेशक अब कोई शक नहीं रही....आपको इस रूप में देख कर मुझे आश्चर्य होता है....”

“आजकल जो न हो जाय, वह थोड़ा...” भिखारी हँस कर बोला—“आप तो मुझे इस वेश में पहले ही पहल देख रहे हैं, मगर मैं अक्सर ऐसा ही बनकर निकलता हूँ आजकल !...”

“अच्छा !”—साहब ने आश्चर्य प्रदर्शित किया—“इसका कोई वास वजह है क्या ?”

“तभी तो !”—बोला भिखारी—“नाम के कारे जासूसों से कुछ होगा नहीं और पुलिसवाले तो अपने आलस्य के लिये मशरूर हैं ही...लाचार होकर मुझे ही मैदानेजङ्ग में कूदना पड़ा....”

“तो आप क्रान्तिकारियों को पकड़ने निकले हैं इस रूप में ?”

“क्या करता !...मजबूरी जो न करा डाले....अगर कभी क्रान्तिकारियों का एक बच्चा भी पकड़ पाया, तो जानूँगा कि यह रूप सफल हुआ...”

“ईश्वर आपकी मदद करें...मेरी भी कभी जरूरत पड़े, तो याद करेंगे...”

“जरूर ! आपका ही तो सहारा है...अब मुझे जाना है...आप मेरे इस वेश और आवाज को ठिकाने से देख-सुन लें, ताकि अगर कभी शङ्का में पकड़ा जाऊँ, तो मुझे अपना भेद खोलने की जरूरत न पड़े, केवल आपके शिनाख्त पर छोड़ दिया जाऊँ...इसीलिये आपको आज अपनी यह सूरत दिखाई है...”

“आप निश्चिन्त रहें”—साहब ने कहा ।

“मेरा भेद केवल आप तक रहे, इसका ध्यान रखें—” कहकर भिखारी उठ खड़ा हुआ ।

“मुझे ध्यान है...”

“आप बैठिये अब....” इस बार भिखारी की आवाज एकदम बदल गई थी ।

कलेक्टर साहब ने हाथ मिलाया । भिखारी बाहर निकल कर चल पड़ा ।

लाल बँगले से कुछ दूर पर खड़ा-खड़ा ऊब रहा था । नाना प्रकार की विचारधारायें उसके मस्तिष्क में उठ रही थीं । यह भिखारी, क्रान्तिकारियों का यह सरदार, उत्तरोत्तर उसके लिये दुर्भेद्य बनता जा रहा था ।

वह कलेक्टर के बँगले में क्यों गया है, उसका वहाँ क्या काम है ?—सांचते-सांचते लाल का दिमाग भन्ना उठा था । कभी-कभी वह सरदार को भी तीव्र शङ्का की दृष्टि से देखने लगता था ।

कैसा भेद है यह ?

तभी भिखारी को बँगले से बाहर आते देखकर लाल को अंतोष हुआ ।

भिखारी उसी तरफ आ रहा था । लाल झपटकर एक पेड़ के पीछे छिप गया । भिखारी चला आ रहा था मन्द गति से । लाल का मस्तिष्क चक्कर काट रहा था—

यह भिखारी कलेक्टर के बँगले पर क्यों गया था ? क्या सच-मुच वास्तविक सरदार गिरफ्तार हो चुका है और उसका रूप फटके हुए यह कोई सरकारी जासूस है ?

भिखारी पास आ गया था । लाल विचार-सागर में गोते लगा रहा था ।

एकाएक कोई दृढ़-संकल्प करके उसने अपना रिवाल्वर निकाल लिया । भिखारी पेड़ के पास से गुजर रहा था । लाल ने अपना रिवाल्वर वाला हाथ ऊँचा किया ।

तभी—

“जबर्दार लाल ! मैंने तुम्हें देख लिया है । चुपचाप मेरे पीछे-पीछे आओ”—भिखारी इस तरह से कहता हुआ चला गया, जैसे कोई पागल हवा को डाँट रहा हो ।

लाल से कुछ करते न बना । उसने रिवाल्वर जेब में रख ली और चुपचाप भिखारी के पीछे थोड़ी दूर पर चलने लगा । भिखारी बढ़ा जा रहा था । एक जगह एक अधरे कोने में आकर रुक गया वह । लाल भी पास आ गया ।

भिखारी ने उसका हाथ पकड़ लिया । लाल को लगा, जैसे उसकी कलाई लोहे की दथकड़ियों में जा पड़ी हो ।

“तुम्हें आज मुझ पर शक़ा हुई है लाल ?...ऐसा क्यों हुआ ?... जो मुझे पहचान लो...” कहकर भिखारी एक उँगली से अपना मस्तक खोजलाने लगा ।

“मैं शरमिन्दा हूँ सरदार !”...

“मैं जानता हूँ...” सरदार ने लाल का हाथ छोड़ दिया—  
 “कि तुम क्यों मेरा पीछा करने पर मजबूर हो गये ? तुम मुझे जानना चाहते हो । तुम्हारी यही लालसा बलवती होकर शङ्का का रूप ले बैठी...हैं न लाल ?”

“जी हाँ !....”

“मुझ पर शंका मत करो लाल !...मेरा परिचय वक्त आने पर ही तुम जानोगे । उसी समय तुम मेरी असली सूरत देखोगे और असली आवाज भी सुनोगे...उसके पहले कभी नहीं....मैं आज तुम्हें सावधान करता हूँ....फिर कभी ऐसी गलती मत करना...याद रखा, मेरे शरीर के रोम-रोम में आखें हैं....”

“मुझे चमा करे सरदार !...”

“तुम इस समय सीधे अपने घर जाओ”—सरदार ने कहा—  
 “ठीक १२ बजे तुम्हें मिस्टर शर्मा के घर में घुसना है । मैं भी इस समय मिस्टर शर्मा से ही मेट करूँगा और कोई नया सुराग मिला तो तुम्हें सूचित कर दूँगा....”

सर मुका कर लाल चला गया ।



इधर कई दिनों तक लगातार रात-दिन दौड़ते रहने पर आज मिस्टर शर्मा को थोड़ा आराम मिला था । दिन भर कठोर परिश्रम के बाद यदि रात में थोड़ा-सा विश्राम मिलता है, तो नींद भी भर-पूर आती है । शरीर को विश्राम देने के लिये जितना आवश्यक सोना है, उतना ही नींद लाने के लिये परिश्रम करना भी जरूरी है ।

मिस्टर शर्मा आज सो रहे हैं। कई रात के जगे-पिमे थे, सो आज ऐसी नींद आई है कि जवानी में भी वे उस तरह से क्या सोये रहे होंगे ?

रात अपनी काली चादर फैलाये है। कमरे का बल्ब बुझा हुआ है। मिस्टर शर्मा बेखबर हैं। बगल में ही रेखा का कमरा है। रेखा के कमरे के पास सीढ़ियाँ हैं।

रेखा जाग रही है ! अँधेरे में लिहाफ से लिपटी पड़ी है, परन्तु लाल से अलग रहकर, सोना चाहने पर भी, वह सो नहीं पाती। कितनी विवश है रेखा !

मगर सदियों से पिसती आती हुई नारी की विवशता कौन देखे ? नारी अगर जवान खालकर कहे भी, ता कौन सुने ?

कुछ खटका हुआ।

रेखा ने लिहाफ के अन्दर से अपना सर बाहर कर लिया।

सुनने लगी।

लगा, जैसे कोई आदमी धीरे-धीरे सीढ़ी उतर रहा है।

रेखा चौंक पड़ी। धीरे से उठकर पलंग पर बैठ गई। कानों का सजग किया।

अवश्य कोई आदमी सीढ़ी पर था। चाहे जो हो, चोर भी हो सकता है, क्रान्तिकारी भी, डाकू भी।

रेखा उतर कर खड़ी हो गई। दरवाजे के पास आई। बन्द किवाड़ थोड़ा-सा खोलकर देखने लगी। तभी कोई काली छाया उधर से दबे पाँव आकर उसके पिता के कमरे की ओर बढ़ गई।

रेखा का हृदय न तो धड़का और न उसे आश्चर्य ही हुआ। वह चुपचाप वहीं खड़ी रही। उसके कान अपने पिता के कमरे की ओर लगे हुए थे।

वह काली छाया मिस्टर शर्मा के दरवाजे पर आकर खड़ी हो गई थी। छाया ने इधर-उधर देखा, कुछ आइट ली और जब उसे

विश्वास हो गया कि वह निरापद ढङ्ग से वहाँ आ गई है, तो धीरे से बन्द दरवाजे को पीछे की ओर ढकेला उसने।

दरवाजा भीतर से खुला था, अब पूरा खुल गया। छाया दबे पाँव भीतर घुसी।

घोर अन्धकार था। अँधेरे के बीच किसी सोये हुए आदमी की नाक बज रही थी। वे थे मिस्टर शर्मा, बेखबरी में बेहोश।

छाया ने नाक की आवाज से यह अन्दाजा लगा लिया कि मिस्टर शर्मा की पलँग कहाँ, किस ओर, कितनी दूर पर है और उनका सिरहाना किधर है, क्योंकि उनकी तकिया के नीचे से ही तो उसे उस आलमारी की चाभी लेनी थी, जिसमें वह पीली फाइल रखा थी।

धीरे-धीरे छाया आगे बढ़ी। छाया के पैर बड़े पटु थे। वे ज़मीन का ज़रा-जरा टटोल कर आगे बढ़ रहे थे कि कोई खटका न हो और मिस्टर शर्मा की नींद न खुले, और वह चुपचाप पीली फाइल लेकर चल दे।

अब वह काली छाया मिस्टर शर्मा के सिहराने थी। उसके हाथ में सजग रिवाल्वर था।

छाया आधे मिनट तक चुपचाप खड़ी रही, फिर उसका बाँया हाथ धीरे-धीरे तकिया की ओर बढ़ा और दाहिने हाथ का रिवाल्वर झुककर मिस्टर शर्मा के मस्तक से एक इञ्च ऊपर तक आ गया।

छाया पूर्ण सावधान थी। यदि चुपचाप ताली उसके हाथ आ गई तो ठीक है और यदि मिस्टर शर्मा जागकर चिल्लाये, तो उनके मस्तक के ठीक एक इञ्च ऊपर रिवाल्वर तैयार बैठा है।

छाया के हाथ तकिया तक पहुँच गये। ताली का ठण्डा स्पर्श उसने महसूस किया। ताली उसकी मुठ्ठी में थी।

मगर पुलिस का आदमी कितना भी नींद में क्यों न हो, खतरे का आभास उसे मिल ही जाता है।

काली छाया ने ज्यों ही अपना बाँया हाथ तकिये के नीचे से खींचना चाहा, त्योंही मिस्टर शर्मा की नींद खुल गई। खतरे की सूचना उन्हें नींद में ही मिल चुकी थी।

वे चिल्ला पड़े—“कौन है ?....रेखा ! तू है क्या ?....”

उन्होंने उठना चाहा तभी छाया का रिवाल्वर एक इञ्च और नीचे उतर कर उनके मस्तक पर आ बैठा और गम्भीर स्वर सुनाई पड़ा—“तुम चुप रहो मिस्टर शर्मा ! चिल्लाने से मौत नजदीक आ जायगी....तुम धीरे से उठ बैठो पलङ्ग पर....”

मिस्टर शर्मा अब अपने पूरे हाश में थे। रिवाल्वर के आगे वे विवश थे।

छाया धीरे-धीरे अपना रिवाल्वर ऊपर उठानी गई और मिस्टर शर्मा भी उसी गति से ऊपर उठते गये।

अब वे पलंग पर बैठ चुके थे। छाया का रिवाल्वर उनके मस्तक से हटकर सर के पिछले भाग पर आ लगा था।

“क्या चाहते हो तुम ?....”

“वह फाइल !....” छाया बोली।

“पीली फाइल ?....” मिस्टर शर्मा चौंक पड़े—“पीली फाइल मैंने कलेक्टर साहब के पाम भेज दी है....मेरे पास वह फाइल नहीं....”

“तुम भूठ बोलते हो...” छाया का रिवाल्वर हिला—“वह फाइल तुम्हारी आलमारी में है...लो ताली और उसे निकाल कर मुझे दे दो...”

“तुम खुद क्यों नहीं निकाल लेते ?....”

“तुम मुझे बेवकूफ बनाने की कांशिश मत करो....मैं जानता हूँ कि तुम्हें मेरी ज़रा-सी भी असावधानी शाक्तशाली बना देगी.... उठो, देर न करो....किसी से सहायता पाने की आशा छोड़ो। इस समय मेरे दोनों हाथों में रिवाल्वर हैं, एक तुम्हारे लिये, दूसरा दौड़कर आने वाले तुम्हारे सहायकों के लिये....”

लाचार मिस्टर शर्मा उठे। ताली उठाकर एक आलमारी की ओर बढ़े। छाया उनके ठीक पीछे थी और उसका रिवाल्वर अब भी उनकी खोपड़ी के पीछे चल रहा था।

“इधर नहीं... इस आलमारी में तो तुम्हारी रिवाल्वर रखी है.... मैं जानता हूँ.... पीली फाइल उस आलमारी में है.... जल्दी करो... उसे खोलो....”

मिस्टर शर्मा हैरान थे क्रान्तिकारियों की प्रबल जासूसी पर, जो उनके घर की एक-एक चीज का पता रखते हैं।

वे दूसरी आलमारी की ओर बढ़े।

तभी बिजली की बटन खटकी और भक्क से उजाला हो गया। रेखा की आवाज आई—“आपने मुझे बुलाया पिताजी ?”

“खबरदार लड़की !.... हाथ ऊपर कर...”

रेखा ने सर उठाकर अपने पिता की ओर देखा, फिर उनके पीछे खड़े हुए नकाबपोश को, फिर उसके हाथ के दोनों रिवाल्वरों को, जिनमें से एक मिस्टर शर्मा की खोपड़ी पर था और दूसरा स्वयं उसके मस्तक की ओर।

उसने चुपचाप हाथ ऊपर उठा दिये।

रेखा नकाबपोश को देख रही थी और नकाबपोश रेखा को, मिस्टर शर्मा ने इस लक्ष्य किया। एक क्षण की अभावधाना: उनके लिये पर्याप्त थी।

उन्होंने घूमकर अपने सर के पीछे वाला नकाबपोश का हाथ मजबूती से पकड़ लिया। नकाबपोश तुरन्त ही चैतन्य हुआ, मगर मिस्टर शर्मा से अपना रिवाल्वरवाला हाथ छुड़ा लेना उसके लिये सहज नहीं जान पड़ा।

नकाबपोश अजीब पशोपेश में पड़ गया। अगर वह रेखा की ओर से अपना दूसरा रिवाल्वर हटाता है, तो हो सकता है रेखा

ही कोई उत्पात करे—इधर अगर अधिक देर हां जाती है तो खतरे की सम्भावना है।

“मिस्टर शर्मा ! मेरा हाथ छाड़ दा....छाड़....दो....कइता हूँ छाड़ दो, नहीं तो मैं तुम्हारी लइकी का गाली मार दूँगा...गाली मार दूँगा...गाली...”

धौंय !

नकाबपोश का रिवाल्वर गरजा। रेखा चीख कर गिर पड़ी। मिस्टर शर्मा ने उसका हाथ छाड़ दिया और रेखा की आर दाड़े।

नकाबपोश ने उन्हें बीच ही में रोक लिया—“पहले बड़ पाजी फाइल मुझे दे दा...”

“निर्दयी, इत्यारे, खूना !....ले फाइल !....बेटा हां न रही, तां फाइल, नौकरी, कुछ भा नही....” मिस्टर शर्मा ने फाइल निकाल कर नकाबपोश के मुख पर फेंक दी।

नकाबपोश उसे उठाकर भाग चला। मिस्टर शर्मा जमान पर पड़ी हुई रेखा की आर दाड़े।

“बच्ची !....मेरी बेटी !...मेरी रेखा !....” वे चिल्लाये।

“पिताजी !...” रेखा उठ बैठा—“मैं ता बिल्कुल ठीक हूँ।”

“अरे !....तू बिल्कुल ठीक है ?” वे रेखा का शरार देखने लगे—“कहीं चांट तो नहीं आई तुम्हें ?”

“जरा भी नहीं पिताजी ! उसकी गाली छूटने के पहले ही मैं चांखकर गिर पड़ी थी...”

“तू बड़ी पाजी है रेखा ! अगर तू चीखकर गिरी न होती, तां मैं कभी न बौखलाता और उस कम्बख्त का हाथ भी न छाड़ता.... उफ्, बड़े जरूरी कागजान ले भागा शैतान !....”

“अगर मैं खड़ी रह जाती, तां उसकी गाली सीधे मेरे कलेजे में आ लगती...तब आपके कागज बच जाते, भले ही रेखा चल बसती....”

“अच्छा, जो हुआ उसका गम मत कर...”

तभी दाई भी आ पहुँची। सब हाल सुनकर हाय-हाय करने लगी। रेखा को उसने गोद में लेकर दुलारा, चूमा, जैसे आज नई रेखा ने जन्म लिया हो।

मिस्टर शर्मा कलेंक्टर का फोन करने चले गये।

लौट रहे थे, तो किसी ने दरवाजा भड़भड़ाया। खोलकर देखा तो लाल था।

“क्या है बाबूजी !....गोली छूटने की आवाज कैसी थी ?” पूछा उसने।

“बड़ी भयानक घटना घट गई बेटा !...घर में एक डाकू घुस आया था। मेरे कुछ कागजात ले भागा...जाते समय उसने गोली भी चलाई। खैर हुई कि रेखा बाल-बाल बच गई !”

“रेखा को कहीं चोट तो नहीं आई ?”

“जरा भी नहीं...वह शैतान गोली छूटने के पहले ही दर से चीखकर गिर पड़ी थी और जब तक वह डाकू बाहर न निकल गया, तब तक उसने साँस भी न ली....पुलिस कप्तान की बेटा इतनी डरपोक ?....” कहकर मिस्टर शर्मा हँसने लगे।

लाल लौट चला। उसे सन्तोष था कि उसकी गोली ने इतनी शराफत तो दिखलाई कि रेखा को न लगकर ऊपर ही ऊपर उड़ गई।

वह सड़क पर बढ़ चला। अपने घर नहीं गया वह। इस समय ठंडक में कुछ चहलकदमी करके वह अपने अन्तर की गर्मी मिटाना चाहता था।

वह सचमुच आज बेचैन हो उठा था।

उसने रेखा पर गोली चला दी।

अगर कहीं वह मर जाती तो ?

न जाने कैसे लाल के रिवाज़र ने गोली उगल दिया ? शायद कर्त्तव्य की प्रेरणा ने उसे बाध्य कर दिया हो, गोली चलाने के लिये ।

रेखा, जो लाल के इतने समीप है, अब तक गोली खाकर बहुत दूर जा चुकी होती, इतनी दूर कि लाल उसे छू न सकता, पकड़ न सकता, देख भी न सकता ।

रेखा की मधुर वाणी उसे कभी सुनाई न देती । वह जन्म-जन्म तक, युग-युग तक अपनी उस हत्या के लिये पश्चात्ताप करता रहता । उस कहीं चैन न मिलता, वह कहीं विश्राम की छाया न देख न पाता ।

मर कर रेखा उसे ऐसी चाँट देती, जिसका घाव दिखाई न देता, मगर हृदय के भीतर ही भीतर सड़ता चला जाता । लाल बरबाद हो जाता । उसकी क्रान्ति नष्ट हो जाती । उसके हाथ शिथिल हो उठते । उसके पैर डगमगा जाते । उसकी आँखें देख न पातीं । उसके कान सुन न सकते । वह पंगु हो जाता । उसके अंग-अंग बंकार हो जाते ।

तब आज का लाल, जीवित लाल-कल को मृतक बन जाता ।

रेखा उसकी जीवन-रेखा जाँ थी ।

लाल बढ़ता ही जा रहा था, चलता ही जा रहा था ।

हवा कुछ तेज़ हो चली । लाल ने बदन की चादर कसकर लपेट ली ।

उसके अन्तर की गर्मी दूर हो चुकी थी और आँखों से पश्चात्ताप के आँसू बह निकले थे । उसने हाथ उठाकर अपनी आँखें छुईं तो चौंक पड़ा ।

प्रबल ज्वाला की गोद में यह पानी का स्नान कहीं से आया ?

क्रान्ति की दुनिया में यह आँसू क्यों चमके ?

लाल की कठोरता आज पिघल कैसे गई ?

उसने मुट्ठी बाँधकर अपनी आँखें जारों से मीची ।

नहीं, वह रोये क्यों, वह आँसू क्यों बहाये ?

वह तो फौलाद का बना है, अगर फौलाद का टुकड़ा ज़रा-सी चोट खाकर मुड़ जाय तो उसका मूल्य ही क्या ? अगर पत्थर की मूर्ति की आँखों से आँसू ढलने लगे तो वह जड़ नहीं, चेतन है।

क्रान्ति-दूत को जड़ होना चाहिये, मुख-दुःख की अनुभूति से परे। चेतना हो तो केवल इतनी कि आँखों को केवल एक मार्ग दिखाई दे, क्रान्तिमार्ग, लपटों से घिरा, ज्वालाओं से प्रज्वलित, कंटकित भयानक !

लाल ने अपने दिल को सम्हाल लिया।

फौलाद फौलाद बन गया। पिघलने नहीं दिया उसने अपने हृदय को।

उसने अपनी आँखों को सजग किया। देखा, काफी दूर आ चुका है वह।

वह लौट पड़ा। तेज़ी के साथ अपने घर की ओर चला। शायद सरदार इसी समय पीली फाइल लेने आये हों। वह भी कितना लापरवाह है कि ठण्डी रात में बिना किसी कार्य के इतनी दूर तक चला आया।

काफ़ी तेज़ी से चलता हुआ वह अपने दरवाजे पर पहुँच गया।

ताला खोला और भीतर प्रविष्ट हुआ।

तभी उसे लगा, जैसे उस कमरे में और भी कोई हो। उसने बहुत हल्का पदचाप सुना और किसी के पैरों से लगकर कमरे की कोई चीज़ ज़रा-सी खड़की।

“कौन है ?...” लाल बोला और एक क्षण में ही उसकी जेब का रिवाल्वर हाथ में था।

कोई आवाज़ नहीं आई।

लाल ने तुरन्त स्विच दबाकर बल्ब जलाया।

देखा—कोई न था।

“म्याऊँ !...” कोई बोला।

और लाल का रिवाल्वर तुरन्त उस ओर घूम गया ।

एक काली-सी बिल्ली 'भ्याऊँ' कहती हुई दूसरे कमरे में भाग गई ।

लाल हँस पड़ा । यह रेखा की दाई की पालतू बिल्ली थी, जो चूहों की खोज में कभी-कभी लाल के घर भी तशरीफ लाती थी । लाल को अपनी आशङ्का पर बड़ी लज्जा आई ।

उसने रिवाल्वर जेब में रखा, फिर वह उम बड़े शीशे के सामने आ खड़ा हुआ ।

शीशा हटाकर उसने गुप्त आलमारी से वह पीली फाइल उठाई और कुर्सी पर आ बैठा ।

वह देखना चाहता था कि उस फाइल में कैसे कागज हैं, जिन्हें लाने के लिए सरदार ने उसी को चुना । अवश्य ही ये कागज बड़े काम के होंगे ।

यदि सरदार ने उसे वह फाइल देखने को मना कर दिया होता, तो वह कभी उसे देखने की चेष्टा न करता । परन्तु सरदार ने उसे ऐसी कोई आज्ञा नहीं दी थी, अतः वह उसे देखने का लोभ संवरण न कर सका ।

कुर्सी पर आराम से बैठकर उसने फाइल खोली और देखने लगा ।

आज रात उसे नींद भी शायद नहीं ही आती, उद्वेग एवं मानसिक सन्तुलन खराब हो जाने के कारण । अतः समय काटने का अच्छा एवं मनोरञ्जक साधन उसके हाथ लग गया था ।

ज्यों-ज्यों वह उस फाइल के कागज देखता गया, त्यों-त्यों उसका आश्चर्य बढ़ता गया ।

सरकार के हाथ में मण्डल की एक शाखा का पूरा भेद आ गया था । सदस्यों की नामावली भी थी और हर एक का पूरा पता भी साथ था ।

सोचने लगा लाल—ये कागजात अभी सरकार के हाथ शायद आज ही लगे हैं, नहीं तो अब तक आफत आ चुकी होती ।

यदि यह फाइल इस समय लाल के पास न आ गई होती, तो यह निश्चित था कि फल सबेरे ही मण्डल की उस शाखा के सभी सदस्य जेल के अन्दर दिखाई पड़ते।

आश्चर्य में डूबा हुआ लाल पूर्णतया बेखबर था।

उसकी कुर्सी की पीठ उस बड़ी-सी आलमारी के सामने थी, जिसमें वह अपने कपड़े तथा अन्य सामान रखा करता था।

लाल जब बाहर में आया था तो उसे कमरे में किसी आदमी के होने की शङ्का उठी थी; परन्तु बिल्ली को देखकर उसने अपना शङ्का का निवारण कर लिया था।

यदि वह उस समय जरा-सी और सावधानी दिखाता, तो उसे तुरन्त ही एक आश्चर्यजनक घटना का पता लग जाता, परन्तु वह जानता ही क्या था ?

कपड़ेवाली बड़ी आलमारी के पीछे कोई चीज हिली और एक काले सर ने जरा-सा बाहर हाँकर लाल की ओर देखा।

लाल उसे नहीं देख सका, क्योंकि उसकी आँखें फाइल पर गड़ी थीं और पीठ आलमारी की ओर थी।

वह काला सर जरा-सा ओर बाहर निकला।

नक्राव में दो छेद थे, जिसमें से दो आँखें चमक रही थीं। उन आँखों ने देख लिया कि लाल पूरा बेखबर है।

अब उस काले सर का काला शरीर भी धीरे-धीरे बाहर आने लगा।

आलमारी के पीछे से निकलकर वह लाल के ठीक पीछे आ खड़ा हुआ। एक नक्रावपोश था, ऊपर से नीचे तक काले कपड़ों से ढँका। हाथ में एक रिवाल्वर भी दिखलाई पड़ रहा था।

नक्रावपोश थोड़ी देर तक लाल के पीछे चुपचाप खड़ा रहा।

जरा भी आहट नहीं हुई थी, अन्यथा लाल तुरन्त सावधान हो जाता।

इस समय वह फाइल का आखिरी कागज देख रहा था।

नकाबपोश का रिवाल्वर वाला हाथ ऊपर उठा उसने रिवाल्वर को उल्टा पकड़ लिया और उसकी मूठ आगे कर दी। पूर्ण सावधान था वह।

जैसे ही लाल ने फाइल बन्द की,  
तैसे ही,  
धप्प !

नकाबपोश के रिवाल्वर की मूठ भरपूर जोर से लाल के सर पर पड़ी।

लाल का सर चकरा गया। उसने उठना चाहा। उसका हाथ तेजी के साथ जेब में गया रिवाल्वर निकालने के लिये—

मगर—

धप्प ! धप्प ! धप्प !...

नकाबपोश के रिवाल्वर का मूठ तेजी के साथ उसके सर पर पड़ती गई।

और लाल को असह्य चोट से बेहोश हो जाना पड़ा।

उसका सर कुर्सी पर बैठे-बैठे ही लटक गया।

अब नकाबपोश उसके सामने आ गया। उसने वह पीली फाइल उठा ली और उलट-पुलट कर देखा उसे। जब उसे निश्चय हो गया कि यह वही फाइल है, जिसकी खांज में वह यहाँ तक आया था, तो उसने उसे अपने लबादे के भीतर यत्नपूर्वक रख लिया और लाल की ओर एक नज़र डालकर तेजी के साथ बाहर निकल गया।

लाल ने इतना बड़ा धोखा कभी न खाया था।

वह भयानक पीली फाइल उसके हाथ में आकर भी चली गई थी।

वह बेहोश पड़ा था कुर्सी पर। रिवाल्वर की मूठ ने उसके

मस्तक में एक जगह गहरा घाव कर दिया था, जिससे लगातार खून निकल रहा था।

लाल के सफेद कुरते पर लाल-लाल धब्बे पड़ते जा रहे थे खून के।

दस मिनट तक लाल बेहोश रहा। धीरे-धीरे उसकी चेतना लौटने लगी। थोड़ी ही देर में उसका मस्तिष्क ठीक हो गया।

तब उसे अपने मस्तक में पीड़ा की अनुभूति हुई। उसने हाथ से मस्तक छुआ, तो हथेली में लाल मेंहदी लग गई। वह चौंक पड़ा। धीरे-धीरे उसे सारी बातें याद आने लगीं।

उसने चारों तरफ नज़र दौड़ाई।

पीली फाइल गायब थी।

उसने अपनी छाती पीट ली ! कौन ले गया उसे ? किसने उसे घायल किया ? उसकी समझ में कुछ भी नहीं आया। वह तेजी से उठा। इधर-उधर खोजा, मगर न तो पीली फाइल ही मिली और न तो आक्रमणकारी की कोई शिनाख्त ही।

अब क्या करे लाल ? सरदार को वह क्या जवाब देगा ? पीली फाइल की जगह वह उन्हें अपना पीला चेहरा कैसे दिखायेगा ? सरदार उसे क्या कहेंगे ? नाराज़ तो होंगे ही वे, मगर लाल की विवशता पर भी तो ध्यान देंगे।

लाल के मस्तक में तेज़ पीड़ा हो रही थी।

उसने बाँरिक काटन निकाल कर घाव पोंछा, फिर थोड़ी-सी टिञ्चर आयां डिन लगा कर पट्टी बाँध दी। बैठे रहना उसके लिए अब कठिन था। खून निकल जाने के कारण उसका शरीर शिथिल पड़ चुका था।

अपना कुर्ता बदल कर वह चारपाई पर जा लेटा। कमबल ऊपर डाल लिया। बल्ब जलता ही रहा।

पड़े-पड़े लाल को नींद कहाँ ? विचार की शृंखलाएँ आती रहीं

और उसके घायल मस्तक को और भी पीड़ा देती रहीं। चोट लगने के कारण उसका मस्तिष्क ठीक से काम नहीं दे रहा था।

सुबह होने को आई, तब लाल को पलकें बोझिल हुईं। सोया भी तो चैन की नींद नहीं। अनेक दुश्चिन्तायें स्वप्न की छाया बन कर मानस-पटल पर नृत्य करती रहीं।

आठ बज गये; परन्तु लाल की निद्रालस आँखें नहीं खुलीं।

किसी ने उसका दरवाजा बाहर से ठेला। भीतर से खुले दरवाजे और भी खुल गये।

“लाल भैया !” रेखा का स्वर था, विनम्र किन्तु गम्भीर।

लाल जागा नहीं।

रेखा आगे बढ़ गई। लाल की चारपाई के पास आ खड़ी हुई।

“आज तो बहुत सो रहे हो लाल भैया ?”—बोली वह।

तभी लाल की नींद खुल गई। धीरे से उठ बैठा वह। रेखा को देखकर आश्चर्य हुआ उस। कैसी लड़की है कि इसकी नाराजी और खुशो का कभी पता हो नहीं चलता।

मगर रेखा का गम्भीर मुख कह रहा था कि वह लाल के पास अपनी खुशी से नहीं आई थी, वरन् उसके हृदय की पीड़ा ने उसे वहाँ आने पर विवश कर दिया था।

रेखा की दृष्टि लाल के सर पर बँधी हुई पट्टी की ओर गई।

वह चीख पड़ी—“यह पट्टी कैसी बाँध रखी है लाल भैया ?”

“चोट लग गई थी रेखा !”—बोला लाल।

रेखा तड़प उठी। दौड़कर लाल के पीछे चारपाई पर बैठ गई। लाल के सर की पट्टी छूकर देखने लगी वह। उसका मस्तक सहलाने लगी।

लाल को वह स्पर्श मरहम जैसा लगा, जैसे घाव की पीड़ा कम होते-होते रेखा के उस कल्याणकारी स्पर्श में समा गई हो।

लाल का सर पीछे की ओर झुक कर, रेखा के चेहरे के बगल से होता हुआ, उसके कंधे पर आ टिका।

“लाल भैया ! चोट बहुत ज्यादा लगी है क्या ?”

“नहीं तो ! बहुत ज़रा-सी है...यह क्या, तू रौने लगी ?... आँसू बन्द कर रेखा !....चोट तो मुझे लगी है न ?....”

“हाँ लाल भैया ! और दर्द मुझे हो रहा है...यही तो मेरी विवशता है... कैसे चोट लग गई तुम्हें ?....”

“यूँ ही....ठाँकर खाकर गिर पड़ा था...”

“तुम तो बहुत समझल कर चलते हो लाल भैया !....अपनी रेखा, अपनी छाया से भी सावधान रहते हो तुम...बड़ा आश्चर्य हो रहा है मुझे....सुझसे छिपाने की कोई बात हो तो मैं नहीं पूछती, तुम बताओगे भी नहीं....रेखा का कब-कब मान रेखा है तुमने ? रेखा ही रुठी है और रेखा ने ही खुद मनाया भी है....लाल भैया तो पत्थर की मूर्ति बने पूजा लेते हैं, मुँह में शायद ज़बान नहीं कि वरदान दे सकें कोई....” बोली रेखा।

“मैं तुमसे कुछ नहीं छिपा रहा हूँ रेखा। सच-मुच मुझे ठाँकर लग गई थी...”

“इसीलिये तो मेरी आँखें रो देती हैं कि तुम बताना नहीं चाहते, तो कहला देना चाहते हो....जाने दो....लाओ इस पर पट्टी बाँध दें...क्या लगाया है ?....”

“टिक्चर आयोडिन !”

“मेरे पास जम्बक है...अभी लाई...” कहकर रेखा उठी और बाहर दौड़ गई।

लाल उसे रोक भी न सका।

थोड़ी ही देर में वह जम्बक की डिबिया लेकर लौटी।

लाल के इनकार करने पर भी उसने सर की पट्टी खोली, घाव धोया और जम्बक लगाकर ही छोड़ा।

“अब तुम लेट जाओ लाल भैया ! थोड़ा आराम कर लो....”

“नहीं, मैं बैठा ही रहूँगा...तू इधर आ तो....”

रेखा लाल के सामने आकर चारपाई पर बैठ गई ।

“तू ही सो ले थोड़ा-सा”—लाल ने कहा और रेखा का सर अपनी गोद में रख लिया ।

रेखा की आँखें बन्द थीं । हाँठ काँप रहे थे ।

लाल एकटक रेखा का मुख देख रहा था । उसकी रेखा कितनी अच्छी थी ।

“लाल भैया !....” एकाएक ही रेखा के हाँठ खुले ।

“क्या है ?....तू आज बहुत गम्भीर लग रही है रेखा !....”

“आखिरा बार मिलने आई हूँ लाल भैया !”—रेखा का स्वर अत्यन्त करुण हो गया था—“आज के बाद शायद तुम रेखा को कभी देख न सका...जो कहना हो, कह डालो....रेखा से जो कुछ पाना चाहो, माँग लो...आज ही अभी...”

“तैरा जी अच्छा नहीं है क्या ?....तू ऐसी बातें क्यों कर रही है ?....”

“आजकल जिन्दगी का कोई ठिकाना नहीं लाल भैया !.... पुलिस अफसर की बेटी हूँ । बाप के दुश्मन हजार, तो बेटी कब तक बची रह सकती है ? मेहँ के साथ घुन भी तो पीसा ही जाता है और तभी शापद....”

“तुझे क्या खतरा है रेखा ?”

“क्या बताऊँ ?....खतरा कभी कहकर नहीं आता भैया !.... खतरा तो भविष्य की गोद में छिपा रहता है और भविष्य की गोद इतनी अन्धकारमयी है कि ज्योतिषियों की आँखें भी पग-पग पर धोखा खाती हैं...”

“बड़ी गोल-मोल बात करती है तू रेखा !...पहले तो तू एक-दम आइने जैसी बातें करती थी....”

भिखारी बाबा आ गये। एक दिन तुमने भीख क्या दे दी, यह बूढ़ा परच गया....देखो, उसमें ज्यादा देर बाँते मत करना....यह भिखारी मुझे अच्छा नहीं लगना। हमेशा तुम्हें देखकर अपना सर खुजलाने लगता है लाल भैया !....”

रेखा का अन्तिम वाक्य सुनकर लाल चौंका, मगर रेखा जा चुकी थी।

बाहर आकर रेखा ने देखा उसी बूढ़े भिखारी को। बोली—  
“गुडमार्निङ्ग भिखारी साहब !....लाल भैया खुजली को दवा लेकर बैठे हैं, अन्दर जाओ....”

कहकर रेखा ने उँगली से अपना मस्तक खुजलाया और हँसकर निकल गई।

भिखारी का बूढ़ा चेहरा नम्रतमा आया।

उसने इधर-उधर देखा, फिर तेजी के साथ लाल के कमरे में घुस गया।

“लाल !....” भिखारी की एक उँगली उसके मस्तक पर थी।

“आइये सरदार !...”

“मैं पूछता हूँ, यह क्या बात है ?....”

“कौन-सी बात ?”

“ठीक में बोलो लाल !”—भिखारी का स्वर अत्यन्त कठोर था।

लाल ने देखा, सरदार के हाथ की रिवाल्वर उसके खांपड़े पर तन चुकी है।

“आपका प्रश्न मेरी समझ में नहीं आया सरदार !....” बोला लाल।

“रेखा ने मुझे देखकर अपना मस्तक क्यों खुजलाया ?.... इसमें क्या भेद है ?....तुमने उसने मेरे विषय में क्या कहा है ?”

“आप शान्त हों सरदार ! मैंने उससे कुछ नहीं बतलाया है। वह अजीब लड़की है ! पता नहीं कैसे शक कर लेती है....”

“शक कर लेती है या तुम्हारी ज़बान उससे कह देती है ?”

“मेरी ज़बान पर अविश्वास हो तो काट लें उसे आप....  
आपका सन्देह मिट जाय...”

“लाओ पीली फाइल कहाँ है...”

“फाइल ?...पीली....सरदार !....”

“क्या बात है ? ठीक-ठीक बोलो....”

“फाइल कोई मेरे यहाँ से उठा ले गया सरदार !...”

“उठा ले गया ?....” सरदार आगे बढ़ आया—“या तुमने  
रेखा के कारण उसे वहीं छोड़ दिया...”

“उफ् ?....” लाल का सर चकरा गया ।

धम्म से वह कुर्सी पर गिर पड़ा ।

सरदार थोड़ी देर तक लाल के सर में बँधी हुई पट्टी को  
देखता रहा ।

फिर पूछा—“सर में यह पट्टी कैसी....”

“किसी ने मुझे घायल करके बेहोश कर दिया था और वह  
पीली फाइल उठा ले गया....”

“पट्टी खोलो !”—सरदार ने आज्ञा दी ।

लाल ने पट्टी खोली । सरदार ने घाव देखा ।

बोला—“बाँध लो इसे अब...”

लाल ने पट्टी बाँध ली । सरदार एक कुर्सी पर बैठ गया ।

“कौन था वह ?”

“मैंने देखा नहीं सरदार !....मुझे वह दिखाई ही न पड़ा...”

“क्यों?...वह लुप्त होकर आया था या तुम्हारी आँखें बन्द थीं...”

“उसने पीछे से वार किया था सरदार ! मैं समझ न सका कि  
बेहोश हो गया...”

“इसी कमरे में वह घटना हुई थी ?”

“जी हाँ !....”

“और तुम इतने लापरवाह रहे कि अपने कमरे का भी ध्यान नहीं रहा तुम्हें ?...रात में कब की बात है यह ?”

“लगभग दो बजे की...मैं कुर्सी पर बैठा हुआ पीली फाइल देख रहा था....”

“पीली फाइल देख रहे थे तुम ?....” सरदार का स्वर वैसा ही तीव्र था।

“हाँ सरदार !...”

“क्यों ?....उसे देखने का तुम्हारा क्या प्रयोजन था ? उसे देखने की आज्ञा तुम्हें किसने दी थी ?”

“आपने मना भी तो नहीं किया था सरदार !...”

“और मैंने यही कब कहा था कि तुम उसे पढ़ना ?...तुम्हारे काम की चीज तो वह थी नहीं...तुमने उसे क्यों देखा ? अगर तुम फाइल न देखते होते, तो आक्रमणकारी को यह पता भी न चलता कि उसे तुमने कहाँ रखा है...”

“मुझसे गलती हुई सरदार ?....मैं अपना अपराध स्वीकार करता हूँ...”

“गलती तो चन्द्रनाथ से भी हुई थी, उसका परिणाम तुम सुन चुके हो....”

“मगर चन्द्रनाथ ने जान बूझकर गलती की थी सरदार ? मैं तो विवश था...”

“क्या बकते हो लाल ?...क्या तुम्हारा यह मतलब है कि उस पीली फाइल को देखने के लिये किसी ने तुम्हें विवश किया था ?”

“जी नहीं, बल्कि आक्रमणकारी मुझे बेहोश करके ही वह फाइल ले गया....” लाल ने कहा।

“लाल ?....” सरदार का स्वर कुछ नम्र हो गया—“आज मुझे तुम्हारी बातों पर विश्वास नहीं हो रहा है....मैं इस मामले

की छानबीन करूँगा....अगर तुम अपराधी प्रमाणित हुए तो मेरे हाथ से कभी बच न सकोगे, चाहे तुम जहाँ रहो....”

“अगर मेरा अपराध आप प्रमाणित कर सकेंगे तो मैं हमेशा दण्ड भोगने को प्रस्तुत रहूँगा सरदार ?”

“लाल ? तुम नहीं जानते कि वह पीली फाइल कितना महत्व रखती थी ?...”

“मैं जानता हूँ सरदार !...मैं पहले ही कह चुका हूँ कि मैंने उसे पढ़ लिया था....”

“ठीक है...पता नहीं वह फाइल किसके हाथ पड़ी ?....”

“किसी सरकारी जासूस के हाथ लगी होगी...”

“मूर्ख हो तुम लाल ?....सरकार के हाथ वह फाइल लगी होती तो अब तक तुम यहाँ न दिखाई पड़ते और मंडल की वह शाखा तो तुरन्त ध्वस्त हो गई होती....”

“बड़ी विचित्र घटना है सरदार !...कौन ले गया वह फाइल ?”

“मैं विचार कर रहा हूँ....शायद वही ले गया हो, जिसने तुमसे पहले ही जज का खून कर डाला था....”

“ओह !....” लाल विस्मय से भर उठा—“उसकी याद तो मैं बिल्कुल ही भूल गया था। वही ले गया होगा....मगर ले क्यों गया ? वह पीली फाइल उसके किस काम आयेगी ?...”

“यह तो वही जाने, जा ले गया है....मगर लाल ! इस रेखा का यहाँ आना मुझे पसन्द नहीं...”

“क्यों ?....”

“वह मुझे अच्छी नहीं लगती...”

“अजीब बात है सरदार !....” लाल ने कहा—“अभी वह भी कह रही थी कि वह भिखारी मुझे अच्छा नहीं लगता....क्या कारण है ?....मैं जब तक यहाँ रहूँगा, वह मेरे पास आयेगी ही,

वह रुठ भी जाती है और फिर मनाने भी आ जाती है...उसको कहा क्या जाय ? लड़की भी बड़ी हठी है”

“तुम्हारा अनुरोध है कि उसे अपने दल में मिला लिया जाय...?”

“ऐसा हां जाय तो बहुत उत्तम है सरदार !....”

“मगर मैंने यह निश्चय कर लिया है कि निकट भविष्य में हमारे दल को किसी भी लड़की की आवश्यकता नहीं होगी...मैं तुम्हें रेखा से दूर ले जाने की कोशिश करूँगा....” सरदार उठ खड़ा हुआ—“मैं चाहता हूँ । उस पीली फ्राइल का पता लगाने के लिये जासूसों का एक बड़ा गिरोह छाड़ूँ....जो भी ले गया होगा, बच नहीं सकेगा....अब हमें और सतर्क रहने की आवश्यकता है । मालूम होता है, कोई दूसरा गिरोह है जो सरकार का शत्रु है और हमें नीचा दिखाकर स्वयं आगे बढ़ना चाहता है....”

जाते-जाते भिखारी बोला—“तुम अपने जरूरी सामान तैयार रखो ! किसी भी समय मेरी आज्ञा मिलते ही तुम्हें यह स्थान छोड़ देना होगा...”

“बहुत अच्छा !”—लाल ने दबी आवाज से कहा ।

भिखारी बाहर निकलकर चल पड़ा ।

रेखा अपने दरवाजे पर खड़ी थी । भिखारी ने उसे देखा तो सड़क के उस पार की पटरी पकड़ ली, ताकि वह फिर कोई शैतानी न कर सके ।

मगर रेखा ने उसे देख ही लिया, जैसे वह उसी के इन्तजार में खड़ी रही हो ।

पुकार बैठी—“भिखारी !....ओ भिखारी साहब !...ओ बूढ़े बाबा !....”

भिखारी को रुकना पड़ा ।

लौटकर रेखा के सामने आ खड़ा हुआ—“क्या है बच्ची ?”

“अरे भिखारी बाबा ! इधर भी भीख देनेवाले लोग रहते हैं....उधर ही से क्यों चले जा रहे थे ?...”

“पेट भरने को मिल जाता है बेटी ! तो अधिक नहीं माँगता । सोचता हूँ जुटाकर कोई सेठ तो बनना है नहीं...”

“ठीक है भिखारी !...लाल भैया के पास आकर भी तुम्हारा पेट न भरे तो कहाँ भरेगा...कभी इधर से भी भित्ता ले लिया करो...लाल भैया तुम्हारा पेट भर सकते हैं, तो रेखा के दरवाजे से कभी भूखे नहीं जाओगे । लाल से कम रेखा की ताकत नहीं । देखना चाहो तो कभी आजमा लेना...”

“भिखारी क्या आजमायेगा बेटी ! कुछ देना हो तो ला दे, चल्, कहीं पका-खाकर पेट भरूँ....”

“देने के लिये ही तो तुम्हें बुलाया है बाबा ! और ऐसी चीज दूँगी तुम्हें कि पकाने की जरूरत ही न पड़े—पका-पकाया तैयार, सिर्फ खाने की देर !...लाल भैया की तरह तुम्हें ताँबे का पैसा नहीं दूँगी मैं, कि उसे तुम्हारे बूढ़े दाँत तोड़ ही न सकें...”

“बड़ी अच्छी हां बेटी तुम !...अच्छा अब देर न करो...”

“अभी लाती हूँ बाबा !”—रेखा ने कहा—“तुम अपनी भोली खोले रहो । लाल भैया की तरह हाथ में भीख थोड़े ही दूँगी मैं ! पूरी भोली भर दूँगी तुम्हारी....”

“भगवान कल्याण करें...”

रेखा अन्दर चली गई ।

थोड़ी ही देर बाद लौटी, तो उसके हाथ में कपड़े की एक छोटी-सी लम्बी गठरी थी ।

“लो बाबा !...यह गठरी समझालो । इसमें थोड़ी-सी रोटियाँ और कई एक पहनने के कपड़े हैं...तुम बहुत खुश होओगे भिखारी ! सावधानी से ले जाओ इन्हें । एक ही दिन में मैंने तुम्हें इतनी भीख दे दी है कि लाल भैया साल भर में भी नहीं दे सक....

भिखारी ने गठरी ले ली ।

बोला—“ईश्वर तुम्हें सुखी रखे बेटी ! चाँदनी में नहाओ और रोशनी में पलो...”

भिखारी चलने लगा ।

रेखा ने रोककर कहा—“भिखारी ! तुम्हारे माथे की खुजली दूर हो गई या नहीं ?....”

भिखारी ने मुड़कर गम्भीर स्वर में कहा—“वह तो मेरी आदत है बच्ची !....”

चला गया भिखारी । रेखा उसे बड़ी देर तक देखती रही ।

“रेखा !....ओ रेखा !....”

“आई !”

कहकर रेखा दाई के पास आई । बोली—“जरा-सी हटी नहीं कि लगती हो चिल्लाने । रेखा को ताबीज बनाकर पहन लो अपने गले में....भूँकट छूट जाय....क्या कहती हो, बालो ?...”

“उस मुँह बूढ़े को इतनी बड़ी गठरी में क्या दे आई ?”

“तुम्हारा खजाना दे दिया, और क्या ?....”

“खजाना दिया होगा अपने बाप का”—दाई ने कहा—“हमारे बाप तो मर भी गये और इतनी बड़ी गठरी की शकल भी न देख सके...ये भिखमंगे भी आजकल नाबदान के कीड़ों की तरह उतरा पड़े हैं....मेरा बस चले तो एक-एक को...”

“एक-एक को नहीं दाई ! दां-दो कीड़ों को एक साथ मुँह में रखना”—रेखा ने बीच में रोककर कहा—“तुम जो न कर डालो, वह थोड़ा । बूढ़ी हो गई, मगर बूढ़ों को देखकर जलती हो....”

“मुझसे मजाक करती है तू ?....लुटा दे सब कुछ । अब जो बोलूँ तो कहना । मेरा क्या जाता है ?....इतनी बड़ी गठरी दे आई, अब मुझसे एँठ रही है....बोल न, उसमें क्या-क्या था ?”

“थोड़ी सी रोटियाँ और कुछ कपड़े, बस यही तो !”

“बस यही तो !....जैसे इसका बस चलता तो सारा धन ही लुटा देती....कभी अपनी बिल्ली को दूध पिलाने को कहती हूँ तो इसे बुखार लग जाता है, मगर गली के कुत्तों को खिलाने से इसे जुकाम भी नहीं होता....”

“बहुत हुआ दाई ! अब मत बिगड़ो”—रेखा हँस कर बोली—  
“नहीं तो सर में तुम्हारे दर्द हो जायगा....अब कभी किसी भिखारी को कुछ नहीं दूँगी...रोज-रोज तो तुम्हीं देती थी...”

“मैं देती थी तो क्या तेरी तरह अन्धी बनकर ?....भिखारीको एक पैसा या एक चुटकी आटा काफी होता है । भीख देने का यह मतलब नहीं कि मन-दो-मन एक की ही झोली में डाल दे....जितना भीख तूने एक का दी है, उतने में सौ भिखारियों का देती तो सौ आशीर्वाद पाती और सौ का पेट भी भरता...”

“मैं आशीर्वाद की भूखी नहीं दाई !...”

“तू नहीं जानती रेखा ?”—बुढ़िया नम्र स्वर में बोली—ये भिखमंगे रोजगार करते हैं । तुझसे माँगकर दूसरों के हाथ बेच देते हैं....”

“तुम भी शायद यही रोजगार करती थी दाई ! है न ?.... अनुभव हो तो ऐसा....”

“मैं क्यों भीख माँगती ?....मेरी तरह दूसरी कौन होगी ? भरी जवानी में छोड़कर चले गये । दूसरी औरत होती तो गली-गली का कूड़ा सूँघती...मगर मैं थी कि तुम्हें देख-देखकर ही दिन बिता दिये...एक तू है कि अभी से लाल के पीछे पीली बनी घूमती है....”

“चुप रहो दाई ! बेकार की बातें तुम्हें बहुत आती हैं...लाल भैया को गली का कूड़ा बनाती हो ?....”

“लो ?....यह लड़की तो इतनी दूर उड़ जाती है कि पकड़ना मुश्किल !....तेरे लाल को गली का कूड़ा कौन कह रहा है पाजी ? वह तो हीरा है हीरा !...जैसे तू, वैसे ही वह !....है न रेखा ?...”

“है तो, मगर तुम अब कभी ऐसी बातें मत किया करो....”

“अच्छा, नहीं करूँगी बाबा ! तू खुश रह....बूढ़ी दाई मरे, चाहे जिये....अब कहाँ जा रही है ?....”

“लाल भैया के पास !....”

“अब नहीं आयेगा यहाँ ?”

“नहीं...कभी नहीं....”

“अच्छा मत आ !....मैं आज ही कप्तान साहब से एक छटाँक जहर मँगाकर खा लूँगी....”

“खा लेना दाई !....एक ही छटाँक क्यों, भरपेट खाना....ऊपर से थोड़ा पानी भी पी लेना, नहीं तो जहर का असर ठीक से न होगा...समझी ?....”

“समझ गई...” दाई ने कहा ।

रेखा लाल के घर की ओर बढ़ी ।

दरवाजे पर आई तो देखा, लाल अपना सब सामान बाँध रहा है।

“लाल भैया !....”

“आओ रेखा !...”

रेखा अन्दर आ गई । चारों ओर देखा उसने, फिर सामान बाँधते हुए लाल की ओर दृष्टि डाली । लाल सर नीचा किये हुए अपने कार्य में व्यस्त था ।

“लाल भैया !...”

“क्या है ?”

“यह सब क्या कर रहे हो ?”

“सामान बाँध रहा हूँ...”

“कहीं की तैयारी है क्या ?”

“तभी तो...”

“कहाँ की ?”

“यहाँ से बहुत दूर की....”

“यहाँ से क्यों, रेखा से बहुत दूर की कदो लाल भैया !...ऊब गये हो न मुझसे ?...तभी तो दूर भाग रहे हो !....रेखा अगर लोहे की बेड़ी होती, तो तुम्हारे पावों में पड़कर रोक लेती....फूल की माला है, तो गले पड़कर ही रोकेगी तुम्हें....” कड़कर रेखा लाल के गले से लिपट गई—“न जाओ लाल भैया ! रेखा का मन सूना करके अपने मन की मन करो....तुम यहाँ से जाकर रेखा को भूल जाओगे, मगर रेखा का हृदय जब तुम्हें खाँजेगा, तो कहीं मिल पाओगे तुम ?”

“मेरी खाँज छोड़ो रेखा !....लाल को भूल जाओ अब....”

“लोग तो स्वप्न को भी नहीं भूल पाते लाल भैया ! फिर मैं तो जागृत अवस्था में तुम्हारे साथ रही हूँ, तुम्हें मैंने चैतन्य आँखों से देखा है, तुम्हारी आवाज सुनी है, तुम्हारे गले से लगी हूँ, तुम्हें परेशान किया है....इसे भूल जाना मेरे वस की बात नहीं...”

“भूलने की कोशिश करना रेखा”

“लाल भैया !”—रेखा के नेत्र गाले हो रहे थे—“तुम्हें पाने की कोशिश की, मगर पा न सकी....अब अपने प्रयत्नों पर मुझे विश्वास नहीं रहा....तुम्हें नहीं भूल पाऊँगी लाल भैया ! तुम्हें जाना ही था तो इतने धीरे-धीरे मुझमें समाये ही क्यों थे ? दिल जब ताड़ना ही था, तो इसे जोड़ा ही क्यों था ? तुम्हारा तां खेन हुआ लाल भैया ! मगर जिसके साथ तुम खेले, वह तां मिट्टी में ही मिल के रही...”

“मेरी बात तुम जानती हो रेखा !”—बोला लाल, उसका सर सहलाता हुआ—“लाल कहीं भी रहेगा, उसका दिल रेखा के ही पास बसेगा...कहीं भी रहूँ, तुम्हें हमेशा अपने पास देखूँगा...”

“तुम ऊँचे उठ चुके हो लाल भैया ! तुम रेखा का दूर से भी देख सकते हो दिल की आँखों से...मगर रेखा तां जमीन पर पड़ी हुई एक क्षीण-असहाय रेखा है....वह तुम्हें अपने सामने देखकर सन्तोष पा सकती है ।”

“रेखा ! मैंने तुम्हें इतना कमजोर कभी नहीं देखा था...”

“तुम्हारे जाने की बात सुनकर आज रेखा कमजोर हो चली है, चले जाओगे तो रेखा मिट ही जायगी, यह निश्चित है लाल भैया !...क्या ठहर नहीं सकते तुम ?”

“विवश हूँ रेखा !....”

“मेरे लिये भी नहीं रुकांगे लाल भैया ?”

“नहीं !...मुझे जाना ही होगा ..”

“तुम्हारी इस विवशता के पीछे कौन-सी शक्ति है ?”

“शक्ति का नाम न पूछो रेखा ! रुक सकता तो कभी जाने का नाम न लेता....रुक नहीं सकता, तो रेखा का नाम लेकर ही चला जाऊँगा...”

“मगर केवल लाल के नाम से रेखा का दिल न बहल सकेगा लाल भैया !...”

“दिल से बढ़कर भी और बहुत-सी समस्यायें हैं रेखा ! उन्हें मत भूलो....”

“जिसे तुम याद आओगे, उसे और क्या याद रहेगा भैया ? रेखा को पंगु बनाकर जा रहे हो । यहाँ रहते, तो मुझे भी समस्याओं का सुलभाने का अवसर मिलता...”

“मुझे रोकें मत रेखा !....तुम रोकोगी तो शायद जा न सकूँगा मैं...”

“तुम जाना चाहोगे, तो मैं तुम्हें रोकूँगी भी नहीं लाल भैया !... तुम रेखा के दिल से भी बड़ी समस्यायें सुलभाने जा रहो हो, तो रेखा भी अपनी समस्या किसी न किसी तरह सुलभा ही लेगी.... जाओ तुम !....रेखा को तुम भूल सकते हो, मगर भूलना नहीं, यही रेखा की अन्तिम साध है....इसे चाहो तो सम्हाल कर रखना, चाहो तो फेंक देना...”

लाल ने रेखा की आँखें पोछी ।

रेखा लाल के बदन से अलग हो गई। उसने उसके पैर छुए, हसरत-भरी नज़रों से उसके चेहरे की ओर देखा, फिर पलटकर बाहर हो गई।

लाल ने अपनी आँखें उस ओर से घुमा लीं।

थोड़ी देर तक वह सफेद छत की आर सूनी दृष्टि से देखता रहा, फिर एक कुर्सी पर आकर बैठ गया।

अपने-आप ही बड़बड़ाया—“रेखा ! काश अपने लाल की विवशता तुम समझ पाती ?”

वह पुनः उठा और अपना सामान ठीक करने लगा। सरदार ने उसे आज्ञा दी थी कि वह अपना सामान तैयार रखे, आज्ञा मिलते ही किसी भी समय यह स्थान उसे छोड़ देना पड़ेगा।

लाल जानता था कि सरदार को नारियों पर विश्वास नहीं है, और लाल पर भी उमे शक़ा हो आई है, इसलिए वह उसे रेखा से दूर रखना चाहता है।

लाल के हृदय में कर्त्तव्य और प्रेम का द्वन्द उठ खड़ा हुआ है।

रेखा के प्रेम से यदि वह दूर हो जाता है, तो अपने कर्त्तव्य का पालन उससे नहीं हो सकेगा।

और यदि वह रेखा के लिए रुक जाता है, तो सरदार उसे कर्त्तव्यच्युत की उपाधि दे देंगे।

क्या करे लाल ?

उसका हृदय रेखा का है, परन्तु शरीर देश का।

वह हृदय से प्रेम कर सकता है और शरीर से कर्त्तव्य का पालन।

कर्त्तव्य का पालन उसे पहले करना है और अपने हृदय की पीड़ा उसे बाद में देखनी है।

“लाल !....”

किसी ने पुकारा।

लाल ने सर उठाकर देखा, मिस्टर शर्मा खड़े थे अपनी पूरी वर्दी में।

“आइये बाबूजी !....” लाल ने कहा !

मिस्टर शर्मा अन्दर आकर गौर से चारों ओर देखने लगे।

लाल का माथा ठनका !

क्या वह पीली फाइल सरकार के हाथ पड़ गई ?

तभी तो मिस्टर शर्मा पूरी वर्दी में उसके पास आये हैं। पहले वे कभी उसके यहाँ नहीं आये थे। शायद उसे गिरफ्तार करने आये हों। उनके साथ बाहर पुलिस भी ज़रूर होगी।

“कहाँ जा रहे हो क्या लाल ?”—मिस्टर शर्मा ने पूछा।

“जी हाँ !...”

“कहाँ जा रहे हो ?....अभी मैं एक काम से जाने को तैयार था, तब तक आँखों में आँसू लिये रेखा पहुँच गई, उसी ने मुझे बताया....”

“अपने गाँव जा रहा हूँ बाबूजी !”—लाल ने कहा—“माताजी की तबियत इधर ठीक नहीं रहती। अभी कुछ दिन पहले गया था, बहुत राने लगी थीं....अब मुझे वहीं रहना पड़ेगा....”

“तुम अपनी माताजी को भी यहीं ला रखो बेटा....हमारा इतना बड़ा घर तो पड़ा है....”

“मैंने उनसे कहा था बाबूजी ! मगर वे शहर आने को तैयार नहीं हुई....”

“क्यों ?....”

“पुराने विचारों की हैं”—लाल बोला—“सोचती हैं, शहर में आकर उनका धर्म नष्ट हो जायगा....”

“यह बात है”—मिस्टर शर्मा हँसे—“अच्छा, तो गाँव जाकर हमें भूल न जाना...रेखा को कभी-कभी पत्र लिख दिया करना... मैं चलता हूँ अब....कोई तकलीफ यहाँ हुई हो बेटा, तो खयाल न करना....”

मिस्टर शर्मा चले गये ।

आध घण्टे तक लाल सामान ठीक करता रहा ।

सब सामान ठीक करके उसने हाथ-मुँह धोया और कुर्सी पर आ बैठा !

तभी बाहर से पुकार आई—“मिस्टर लालचन्द...”

“कौन है ?....अन्दर आइये !....”

आगन्तुक का देखकर लाल हँस पड़ा । वे मिस्टर बिलफोर्ड थे । अपने पूर्व-परिचित पोशाक में ।

“आइये मिस्टर बिलफोर्ड ! मिज़ाज अच्छे तो हैं ?”—लाल ने हँसकर कहा ।

“थैंक यू !”—बिलफोर्ड ने कहा और एक उँगली से अपना मस्तक खुजलाता हुआ कुर्सी पर बैठ गया वह ।

“मैं एकदम तैयार हूँ सरदार !”—लाल ने कहा ।

“मैं देख रहा हूँ”—बिलफोर्ड बोला—“मगर अब इसकी जरूरत नहीं....”

“क्यों ?....”

“तुम्हारे लिये अभी मैं कोई अच्छा स्थान निश्चित नहीं कर पाया हूँ...अभी कुछ दिनों तक तुम्हें यहीं रहना पड़ेगा...”

“मगर सरदार ! मैं रेखा और मिस्टर शर्मा आदि से विदा ले चुका हूँ....”

“तब तो अच्छा है...यहीं दो-चार दिन तक पैक रहना, फिर जाकर मिल आना”—कहकर बिलफोर्ड रूपी सरदार हँस पड़ा ।

“तो मैं अपना सब सामान खोल दूँ ?—” पूछा लाल ने ।

“जरूर ! और अपने सर की वह पट्टी भी....जख़म तो अब भर ही चुका होगा, यहाँ का रहना सुनकर....”

“आपको मुझ पर शक्का है सरदार !...”

“शक्का थी, मगर अब मिट गई....इसीलिये तुम्हें यहाँ रहने दे

रहा हूँ। मिस्टर शर्मा का पड़ोसी बनने से तुम बहुत सुरक्षित हो.... बड़ी कोशिशों के बाद मुझे वह पीली फाइल मिल गई। बड़ी परेशानी उठानी पड़ी उसके लिये....”

“फाइल मिल गई ?....कहाँ कैसे ?....कौन ले गया था उसे ?”—लाल आश्चर्यचकित था और उत्सुक भी, यह सुनने के लिये कि उसका प्रतिद्वन्द्वी कौन है ?

मगर सरदार ने कहा—“बस लाल !...इसके आगे नहीं। जिसने वह फाइल गायब की थी, वह इस समय मेरे पंजे में हैं। कभी जान जाओगे। अभी तो उसे दंड देना है ...”

“क्या जज की हत्या भी उसी ने की थी ?”

“हाँ !....बड़ा चतुर, बड़ा चालबाज है वह....बस इसके आगे नहीं....मुझे अभी बहुत काम करने हैं....गुडबाई मिस्टर लालचन्द !..” बिलफोर्ड उठा और चला गया।



रेखा का मुख उजड़ा-सा लगता है—वीरान ! सौन्दर्य फीका पड़ गया है, आँखें पीली-पीली हो रही हैं। उसने चाय पी है, खाना भी खाया है, हँसने की कोशिश भी की है—मगर उसकी हर हरकत के पीछे जैसे उसके आँसू ऊपर उठ आना चाहते हैं। लाल चला गया होगा अब तक, यही उसका ख्याल है और जानेवाले को जाते समय वह अपनी भरी-भरी आँखें नहीं दिखाना चाहती थी, इसीलिये लाल के घर की ओर देखा भी नहीं उसने।

दोपहर को उसने अपनी छांटी-सी सायकिल निकाली।

मिस्टर शर्मा कहीं चले गये थे। दाईं काम में व्यस्त थी।

अकेली रेखा सूने घर की चहारदीवारी में क्यों कैद रहें ? लाल चला गया तो वह रोये क्यों ? वह उसे भूल सकता है, तो वही क्यों उसे याद करती रहे ?

रेखा अपना दिल बहलाना चाहती थी । कहीं भी सायकिल चल पड़े, उसे गम नहीं । थोड़ी देर में घूम-फिर कर वह आ जायगी ।

“कहाँ चल पड़ी रेखा ?”—दाई ने पूछा ।

“घूमने....”

“सायकिल पर ?”

“हाँ !...” रेखा सायकिल लेकर जाने लगी ।

“देखा ठीक से चलाना सायकिल”—दाई ने हिदायत दी—  
“हाथ-पैर तुड़ाकर मत लौटना....”

“अब तो हाथ-पैर जरूर टूटेंगे....तुमने कह दिया है न, भूठ कैसे होगा....जब कहीं बाहर जाने लगती हूँ, तो इनका जवान चल पड़ती है...”

रेखा ने पैडिल पर पाँव रखकर सायकिल की सवारी कस ली । सायकिल उसे ले दौड़ी ।

बाजार में पहुँच गई रेखा । भीड़ अधिक थी, परन्तु रेखा कच्ची सवारी नहीं करती थी ।

चली जा रही थी वह ।

मुख्य बाजार छोड़कर वह एक पतली गली में घूम पड़ी । कहाँ जा रही है वह, कुछ पता न था उसे ।

तभी चौदह-पन्द्रह की एक लड़की तेजी से दौड़ती आकर रेखा की सायकिल से टकरा गई । दोष रेखा का न था, फिर भी वह लड़की तो गिरी ही, रेखा भी सायकिल लिये-दिये गिर पड़ी ।

उठकर देखा, कपड़ों में धूल लग गई थी । रेखा को क्रोध आ गया ।

वह गरीब लड़की फटे-पुराने कपड़ों में लिपटी उठकर काँप रही थी। भिखमंगी लड़की का देखकर रेखा को और भी क्रोध हो आया।

लपक कर उसने कई चाँटे जड़ दिये उस गरीब के मुख पर और पीठ पर दो-चार घूसे भी।

लड़की रोने लगी।

रेखा बिगड़ कर बोली—“सूअर कहीं की !...मुझे गिरा भी दिया अब रोती भी है ”

“मैंने जान बूझकर तो नहीं गिराया आपको....मेरे पीछे, दां-तीन लुच्चे पड़ गये थे....भागने की धुन मे मैंने देखा नहीं...” लड़की ने राते-राते कहा।

“लुच्चे !...तेरे पीछे पड़े थे ?”

“हाँ !....”

“क्यों ?...” रेखा का उस समवयस्क लड़की पर दया आई और अपने आवेश पर लज्जा भी।

“मेरा शरीर लेना चाहते थे”—बोली लड़की।

“तू कौन है ? क्या करती है ?”

“गाँव की गरीब लड़की, किस्मत के फेर में पड़कर शहर में आ भीख माँग रही हूँ बहन ! मगर भीख भी कोई बेदाम नहीं देना चाहता मुझे....”

“तेरे माता-पिता कोई हैं ?....”

“कोई नहीं.. घर-बार भी नहीं रहा....अकेली बच रही हूँ... शरीर देना चाहूँ, तो शरण भी मिल जाय, मगर दिल से मजबूर हूँ...”

“इस उम्र में सभी का दिल मजबूर ही रहता है....” रेखा कुछ हँसी—“तेरा दिल क्यों कर मजबूर हुआ, बताएगी मुझे ?”

“एक परदेसी ने लूट लिया बहन, और खुद चलता बना...”

“तेरा नाम ?....”

“नयना !...”

“नाम तो बड़ा अच्छा है, सूरत भी अच्छी है, मगर कपड़े.... नयना ! तू मेरे यहाँ चलेगी ?...”

“मुझे मारना मत बहन ! चलने को तैयार हूँ—पग-पग पर लुटने वाली अगर किसी बड़े घर का छाँह पा जाय, तो क्या कहना ?....”

“तेरा बात करने का ढंग तो बड़ा अच्छा है....कुछ पढ़ी भी है तू नयना ?....”

“नहीं जी !...तुम पढ़ा देना मुझे...”

“पढ़ा दूँगी....”

“चार दिन की नौकरी देकर फिर अलग तो न कर दोगी ?”

“नहीं रे पागल !...तुझे नौकरी कौन दे रहा है ?....तू तो मेरी सहेली बनकर रहेगी....पिताजी तुझे देखकर बहुत खुश होंगे नयना, और दाई....दाई की बातों का कुछ खयाल मत करना तुम...”

“अच्छा जी, मैं जरा भी खयाल नहीं करूँगी....तुम्हारा घर तो बहुत बड़ा है न ?....”

“हाँ ! थोड़ा-थोड़ा छोटा ही समझो, मगर तुम्हारे रहने के लिये जगह काफी है....तू रहेगी तो मेरा अकेलापन भाँ दूर हो जायगा !”

“मगर मुझे विश्वास नहीं होता...”

“किस बात का ?”

“यही कि तुम मुझे रखोगी अपने यहाँ”—नयना ने कहा—  
“अभी सायकिल से टक्कर दे दी कि मेरा घुटना ही फूट गया....”

“घुटना ?...देखूँ तो...”

नयना ने अपना लहंगा उठाकर खून से भरभराया दाहिना घुटना दिखाया।

रेखा बोली—“तुझे तो चांट लग गई है...अब तक तू चुप

क्यों थी रे उल्लू ! घाव सेप्टिक हो जायगा, तो पैर ही काट देना पड़ेगा....”

“ऐसी-ऐसी चोटें तो हम गाँव वाले हँसकर अच्छा कर लेते हैं बहन !...”

“और दिल की चोट जब तुम गाँववालों से सम्हाले नहीं सम्हालती, तो परदेसी की खोज में शहर आकर भीख माँगना शुरू कर देती हो, है न ?”—कहकर रेखा हँसने लगी ।

“दिल के चोट की बात दूसरी है जी !”—नयना ने अजीब अन्दाज से मुस्कराकर कहा ।

रेखा को वह अकृत्रिम मुस्कराहट बड़ी ही भली लगी, जिसकी समानता शहर में खाज पाना दुर्लभ है ।

“चल, आ पीछे बैठ जा....” बोली वह नयना से ।

“कहाँ....!”

“इसी सायकिल पर, और कहाँ ?”

“हटोजी, मैं इस मशीन पर कभी बैठी नहीं—” नयना ने भोलेपन से कहा—“कहीं गिरा दो, तो दूसरा भी घुटना मेरा फूट जाय....”

“फूटने दे न...हँस-हँसकर उसे भी अच्छा कर लेना...आ, अब देर न कर....बैठ जा...”

“तुम्हीं बिठा लो बहन ! मुझे बैठना नहीं आता....” नयना ने कहा ।

“अच्छा आ”—रेखा ने नयना को बगल में दबाकर कैरियर पर बिठा दिया ।

फिर स्वयं सीट पर बैठकर सायकिल चलाने लगी ।

“तुम्हारा शरीर ता बड़ा कोमल है जी ?”—नयना ने कहा—“फिर यह मशीन तुम कैसे चला लेती हो ?....इसे तो मर्द ही चलाया करते हैं...”

“आजकल की लड़कियाँ मर्द से कम थोड़े ही हैं....”

“तो क्या तुम लोग मर्द का सारा काम स्वयं कर लेती हो ?”

“चुप शैतान कहीं की !...हिल मत, नहीं तो गिर जायगी....”

“बहन ! दो पैर का इन्सान जब नहीं गिर सकता, तो दो पहियों की मशीन क्यों गिर जाती ?...मेरी समझ में यह बात नहीं आती. .”

“दो पैर का इन्सान ईश्वर बनाता है और दो पहियों की मशीन इन्सान की कारीगरी से बनती है, यही अन्तर है दोनों में....समझ में आया ?”—रेखा ने कहा ।

“थोड़ा-बहुत !...तुम्हारे साथ रहूँगी तो बड़ी जल्दी सीख जाऊँगी....”

“क्या सीख जायगी ?”

“यह मशीन चलाना”—नयना बोली—“यही क्यों, मर्द के सारे काम सीख लूँगी...”

“इतना हिल क्यों रही है ?”

“नहीं....ठीक से तो बैठी हूँ जी ! मगर इतना ही देर में बदन अकड़ गया....तुम्हारा अकड़ा कि नहीं ?....तुम तो और भी अधिक मिहनत कर रही हो....”

“तेरी तरह लजारो-लता नहीं हूँ मैं, कि इतना जल्दी पस्त हो जाऊँ....”

“रहने दो जी !...एक दिन खेत में काम करना पड़े, तो नाक का पसीना आँख से बोल दे....”

तब तक रेखा का घर आ गया था ।

रेखा उतर पड़ी और नयना को भी उतारा उसने ।

बोली—“देख नयना !...मैं यहीं रुक जाती हूँ । तू निडर होकर भीतर घुस जा...दाई को खूब छकाऊँगी....तुम्हें बिगड़े तो

खयाल मत करना । कह देना, मैं रेखा की सहेली हूँ....तब मैं पहुँच जाऊँगी...डरोगी तो नहीं ?...”

“नहीं जी ! मैं क्यों डरूँगी ?...दाई बूढ़ी ही तो होंगी, दाँत तो होंगे नहीं कि काट खायेंगी...”

“अच्छा, तो घुस जा घर में एकदम....सीधी चली जा ।”

“अच्छा जी, तुम देखती रहो, एकदम नाक को सीध में जाऊँगी...”

कहकर नयना घर के अन्दर प्रविष्ट हुई ।

सामने से ही बूढ़ी दाई कोई सामान लिये चली आ रही थी । नयना के भिखारी वेश पर उसकी दृष्टि गई तो आग की तरह जल उठी—“कहाँ घुसी आ रही है रे ?...”

“यहीं तो....” नयना ने निडर भाव से कहा ।

“तेरे बाप का घर है क्या ?”

“नहीं जी, रेखा के बाप का है न ? वह तो मेरी सहेली है ।”

“चलहट सहेली की बच्ची ?”—बुढ़िया बिगड़ी—“अभी बाहर निकल, नहीं तो ठीक कर दूँगी....”

“अजी रहने भी दो, किसी दूसरे वक्त ठीक कर लेना....मेहमान पर इतना बिगड़ती क्यों हो ?”

“देख लड़की, भीख माँगना हो तो बाहर से आवाज दे...चोरी करने का इरादा हो तो बोल जल्दी...सीधे मानेगी या नहीं ?...”

“मान जाऊँगी दाई ?...रेखा नहीं है क्या ?”

“रेखा सोई है....इस वक्त कुछ नहीं देगी...जा भाग ?”

“भागती हूँ घबड़ाई क्यों जाती हो ?....इतनी दूर गाँव से चलकर आई, और तुम दुत्कार रही हो....लो चली जाती हूँ ।”

“गाँव से ?....गाँव से आई है तू ?”—बूढ़ी भी गाँव की ही थी और हमेशा अपने गाँव की याद करती थी—“किस गाँव से आई है तू ?....”

“क्या नाम है...क्या कहते हैं....”

“हरिपालपुर से तो नहीं ?...” हरिपालपुर बूढ़ी के गाँव का नाम था ।

“हाँ-हाँ....वहीं से आ रही हूँ....”

“किसकी लड़की हैं ?”

“क्या कहते हैं...क्या नाम...”

“शिवराम की लड़की है क्या तू ?...वह तो मर गया....उसकी बहू भी बड़ी लक्ष्मी थी...”

“हाँ-हाँ, मैं शिवराम की ही लड़की हूँ दाई !...”

“अरे मुझे तूने अब तक बताया क्या नहीं....मेरा भाई लगता था शिवराम...बेचारा मर गया । बहुत दिन हुए सुना था । तू अभी तक बची ही है ?....”

“हाँ दाई !”

“अच्छा हुआ तू आ गई....गाँव के सब लोग तो अच्छे हैं ?”

“हाँ ! एकदम अच्छे...”

“रेखा को तू कैसे जानती है ?...” दाई ने पूछा ।

“गाँव पर ही सुना था कि तुम रेखा के यहाँ काम करती हो.... पता लगाते-लगाते थक गई दाई !....तुमको पहचानती भी तो नहीं थी....”

“अब पहचान ले...यहीं रहेगी न !...”

“और कहाँ जाऊँगी ?....”

“अच्छा चल बैठ !...रेखा आयेगी तो कह देना, बुआ के पास आई हैं....कुछ बिगड़े तो बुरा न मानना । बड़ी शैतान लड़की है....”

“अच्छा बुआ ! तुम कहोगी तो मैं उसे ठीक कर दूँगी कभी ।”

“चुप रे लड़की !...कहीं सुन ले तो लगे उछलने-कूदने ।”

रेखा बाहर खड़ी हुई सब सुन रही थी । उसे सन्तोष हुआ कि

नयना ने बातचीत के सिलसिले में दाई से अपनी रिश्तेदारी कायम कर ली और उसे कोई कैफियत देने की अब जरूरत नहीं रही।

उसने सोचा, चलो बला टली, नहीं तो दो-चार दिन तक दाई के ताने-बाने तो जरूर ही सुनने पड़ते।

तभी उसकी दृष्टि लाल के घर की ओर अनायास ही जा पड़ी। कमरे में रोशनी हो रही थी।

देखकर रेखा को बड़ा विस्मय हुआ।

लाल भैया अभी तक गये नहीं या उनके घर में कोई दूसरा आ बसा ?

घर तो उसी का है। उसके पिता ने किसी नये किरायेदार के आने की बात भी तो नहीं बताई।

रेखा अपनी सायकिल लिये-दिये लाल के दरवाजे पर आ गई। उसने घण्टी दो-तीन बार जोर से बजाई।

“कौन है ?....”

स्वर तो लाल का ही है।

रेखा ने सायकिल बेतहाशा पटक दी और दौड़कर लाल के कमरे में घुस आई।

लाल कुर्सी पर बैठकर कोई पुस्तक पढ़ रहा था।

“लाल भैया !....”

“आओ रेखा ! बैठो...” लाल ने कहा।

रेखा बैठ गई। बोली—“तुम गये नहीं अभी ?”

“जाने का इरादा बदल दिया रेखा !”

“अब नहीं जाओगे कभी ?”

“कभी की बात छोड़ो, फिलहाल तो नहीं जा रहा हूँ”—लाल ने कहा।

“तुम बड़े बुरे हो लाल भैया !”—बोली रेखा—“मुझे खबर तक न दी। मैंने दिन भर तक कुछ खाया नहीं....मनमारे बैठी ही रही....”

“रहने दे भूठी कहीं की !”—लाल ने कहा—“अभी दाई से पूछकर आ रहा हूँ। तूने चाय भी पी, खाना भी खाया, हँसी-कूदी भी और सायकिल लेकर घूमने भी गई थी....क्या मुझे मालूम नहीं ?...”

“पत्थर मालूम है तुम्हें लाल भैया ! तुम्हारे लिए कितनी बार रोई इसे न तां दाई ही जान सकती है और न तुम्हीं....गये क्यों नहीं तुम ?”

“मेरी इच्छा ! मेरा यहाँ रह जाना तुम्हें बुरा लगा क्या ?”

“नहीं तो !...मगर तुम मेरे लिये तो रुके नहीं होगे लाल भैया !....जरूर उस भिखारी ने तुम्हें रोका होगा, नहीं तो उसे भीख कौन देना ?”

“तू नहीं देती क्या ?”

“कल तू दी थी लाल भैया ! पेट भर गया होगा बेचार का, इसी लिये शायद आज आया नहीं”—

“क्या दिया था उसे ?”

“खाना और क्या ?....दो-एक पुराने कपड़े भी दिये थे....पाकर बहुत-बहुत आशीर्वाद देने लगा...उसी के आशीर्वाद का फल है कि तुम अपने-आप रुक गये, नहीं तो रेखा की इतनी कदर तुम्हारे दिल में कहाँ लाल भैया ?...”

“कहाँ गई थी सायकिल पर !”

“शिकार करने”—रेखा ने हँसकर कहा ।

“शहर में शिकार खेलती है तू ? और सायकिल पर ?”

“सायकिल इतनी बुरी तो नहीं लाल भैया ? सवारी का भी काम दे और शिकार को घायल करने के लिये हथियार का भी....”

“बाह ! क्या कहने हैं ! किसका शिकार कर लाई तू रेखा ?”

“एक देहाती लड़की ही तो है, मेरे इतनी बड़ी...चंचल, शोख !...मेरे सामने आ पड़ी, तो मैंने उसका ही शिकार कर डाला । बेचारी का घुटना फूट गया था....अभी ही तो लौट कर आ रही हूँ उसे लेकर....”

“उसे भी लाई है अपने साथ ?”

“तब क्या !...”

“कहाँ रखेगी उसे ?”

“अपने साथ....अपनी सहेली बनाकर...”

“दाई तो तेरी जान खा लेगी रेखा ! उसे कैसे समझायेगी ?”

“यह मंजिल भी तय हो चुकी है लाल भैया !”—रेखा ने कहा—“घर आकर मैंने उसे पहले ही अन्दर भेज दिया....शैतान इतनी कि अन्दर जाकर दाई की बुआ बन बैठी....”

“दाई की बुआ ?....”

“अरे नहीं, दाई की भतीजी समझो....दाई ने उसे खुद ही रख लिया...पिताजी भी जब सुनेंगे कि दाई की भतीजी है, तो बड़े खुश होंगे....मैं तो अभी बाहर से ही तुम्हारे पास चली आई हूँ...”

“अभी तक तो एक तू ही थी मेरा सर खाने को, अब एक तेरी सहेली भी आ गई....”

“वह तो मुझसे भी अधिक चंचल है लाल भैया ! तुम्हारा सर पूरा खा डालेगी...कल लाऊंगी उसे तुम्हारे पास ।”

“काँई जरूरत नहीं, उसे अपने पास रख....यहाँ लायेगी तो मैं निकाल बाहर करूँगा उसे....”

“रहने दो लाल भैया !...तुम्हारे निकालने से भी वह टलेगी नहीं....अच्छा चलो, उसकी भी खबर ले लें...”

“रेखा ! आज बड़ी अच्छी टाफी लाया हूँ...खायेगी एक ?”

“एक नहीं दो खाऊँगी लाल भैया ! डाल दो मुँह में...”

कहकर रेखा ने अपना मुँह खोल दिया ।

“दो ही क्यों, चार ले”—

लाल ने जेब से टाफी निकाल कर रेखा का मुँह भर दिया ।

बाहर आकर रेखा ने अपनी सायकिल उठाई और घर आ गई ।

बारामदे में दाई नयना के पास बैठी हुई खूब बातें कर रही थी ।

रेखा को आती देखकर बोली—“बेटी ! ठीक से बैठ, रेखा आ रही है....अरे, तूने अपने कपड़े भी नहीं बदले ? देखकर क्या कहेगी रेखा !”

“दाई !”—रेखा आ गई—“यह लड़की कौन है ?”

नयना इस तरह सिटपिटा गई, जैसे रेखा को उसने कभी देखा ही न हो ।

दाई बोली—“यह लड़की....यह लड़की....मैं इसकी बुआ हूँ रेखा ! अभी थोड़ी देर हुई, गाँव पर से आई है....बड़ी सीधी लड़की है यह ! एकदम मेरी पुस्सी की तरह....”

“यह यहाँ क्यों आई है दाई ?”

“भेंट करने बेटी !....छोटी-सी थी तभी इसे देखा था....बेचारी के माँ-बाप सभी मर गये हैं...तुम चलो कपड़े बदल लो...”

“चलती हूँ....मगर दाई यह लड़की यहाँ से जायेगी कब ?”

“यह !...यह तो....यह तो अब हमारे ही पास रहेगी रेखा ! बूढ़ी हो गई हूँ, तेरी देख-भाल ठीक से नहीं कर पाती । यह रहेगी तो अच्छा रहेगा...”

“नहीं दाई ! इसे अभी निकाल बाहर करो...इसके कपड़े भी ठीक नहीं....”

“कपड़े मैं अभी बदलाये देती हूँ बेटी ! बुरा न मान !”

“अच्छा नहीं मानूँगी”—रेखा ने कहा—“मगर इससे कह दो, ठीक से रहेगी, नहीं तो ठीक नहीं होगा....”

कहती हुई रेखा अपने कमरे में चली गई ।

वहीं से पुकारा उसने—“दाई ! उसे यहाँ भेज दो, कपड़े दे दूँ....?”

दाई और नयना दोनों ही आई ।

रेखा ने अपने कुछ कपड़े उसे दे दिये—“ले, इन्हें अभी पहन ले....”

दाई खुश हो गई, रेखा की सहृदयता पर। नयना ने स्नान करके कपड़े बदले। नये कपड़ों में वह काफी सुन्दर दिखने लगी।

दाई चली गई, तो नयना ने रेखा की ओर देखकर हँस दिया। बोली रेखा—“बड़ी चालबाज है तू! बूढ़ी को फाँस ही लिया...”

“मेरी बुआ को कुछ मत कहना जी”—नयना ने मधुर हँसी हँसकर कहा—“कितनी अच्छी हैं बुआ?”

“बुआ की बच्ची! मैं आज बहुत खुश हूँ...”

“मुझे पाकर?”

“नहीं रे, लाल भैया नहीं गये...वे मुझे छाँड़कर चले जाने वाले थे...”

“क्यों?...कहाँ?” नयना ने पूछा। वह जानती भी नहीं थी कि यह लाल कौन है?

“बड़े विचित्र आदमी हैं नयना!”—बोली रेखा—“मेरे लाल भैया अच्छे तो हैं, मगर उनके दिल पर किसी का मोह असर नहीं करता....चिकने घड़े पर जितनी ही आँखों का पानी डालो, वह चमकता चला जाता है...वह क्या न उस बगलवाले मकान में रहते हैं....मुझे बहुत चाहते हैं....”

“बहुत-बहुत?”

“हाँ!....”

“थोड़ा-बहुत कम ही चाहते होंगे रेखा, नहीं तो तुम्हें छोड़कर कभी नहीं जाते...”

“वह जा ही कहाँ सके?...सब समान ठीक करके भी रुकना पड़ा उन्हें—”

“मुझे भी अपने लाल को दिखाओ कभी!”

“कल ही ले चलींगी तुम्हें उनके पास...देख लेना, कितने अच्छे हैं”—बोली रेखा।

“कितने अच्छे तो क्या होंगे जी....मेरे परदेसी से थोड़ा कम ही होंगे....फिर भी देखूँगी तो जरूर...तुम्हारे पिताजी कहाँ हैं ?...”

“अभी आते ही होंगे”—बोली रेखा—“पुलिस के आदमी ठहरे बहुत व्यस्त रहते हैं....”

“पुलिस के आदमी ?”—नयना चौंककर बोली, वह पुलिस-वालों का दुराचार भूली न थी—“तुम्हारे पिताजी पुलिस के आदमी हैं रेखा ?...”

“हाँ ! पुलिस के अफसर हैं....कप्तान ! तुम्हे देखकर बहुत खुश होंगे....”

“अच्छा, मैं जाकर बुआ के काम में हाथ तो बटा लूँ....” नयना दाई के पास चली गई ।

रात में मिस्टर शर्मा लौटे थके-माँदे ।

रेखा और वे साथ खाने बैठे । नयना खाना लाई ।

“आज दाई कहाँ गई रेखा !...” मिस्टर शर्मा ने पूछा—“फिर बीमार पड़ी क्या ?...और यह लड़की कौन है ?”

“यह दाई की भतीजी है । अभी आज ही उसके गाँव से आई है”—रेखा ने कहा ।

“अच्छा !...तब तो इसे भी यहीं रोक ले रेखा ! दाई की मदद कर दिया करेगी...लड़की भी अच्छी मालूम देती है....”

नयना खड़ी थी मिस्टर शर्मा की ओर देखते हुए । उसे वे बड़े दयालु लगे ।

तब तक दाई भी आ गई—“अरे मुई ! बाबूजी के पैर तो क्यू....”

नयना ने मिस्टर शर्मा के पैर छुए । उन्होंने आशीर्वाद दिया ।

“यह तुम्हारी भतीजी है दाई ?”

“हाँ !....अब तो आपकी ही शरण में आई है बेचारी !” दाई ने कहा ।

“इसे अपनी शरण में रख लो दाई !....मेरी शरण में रहेगी तो दिनरात जासूसी करते-करते परेशान हो जायेगी”—कहकर मिस्टर शर्मा हँसने लगे ।

“अब तो रेखा ही इसे शरण देगी”—दाई बोली ।

“मैंने तो इसे अपनी सहेली बना लिया है पिताजी !”

“चलो, तब तो एक की जगह दो बेटियाँ हो गई....अच्छा ही हुआ....”

“अब एक बेटा भी खोज लें पिताजी !”—इस बार नयना बोली ।

“लाल तो है ही”—मिस्टर शर्मा बोले, तो रेखा गम्भीर हो गई ।

“इसका नाम क्या है दाई ?” मिस्टर शर्मा ने पूछा ।

“बचपन में तो हम लोग बचिया ही कहते थे—यह कहती है, नयना नाम अच्छा रहेगा”—दाई ने कहा ।

“ठीक है”—मिस्टर शर्मा बोले—“नयना बेटा ! तू भी आ, साथ ही खा ले...”

“इसे अभी से सर न चढ़ाइये....गरीब की लड़की प्यार पाकर बिगड़ जायगी ।”

“इसे गरीब की लड़की मत कहो दाई ! यह तो मेरी लड़की है....रेखा की बहन !...क्यों रेखा, यह लड़की पसन्द तो है तुम्हें ?”

“बहुत पिताजी !....नयना बात-चीत बहुत अच्छे ढंग से कारती है....” रेखा ने कहा ।

“रेखा जीजी ने ही मुझे सिखाया है पिताजी !”—नयना बोली—“जो कुछ बाकी है, वह भी सीख लूँगी बहुत जल्द...”

“लाल ने इसे देखा कि नहीं अभी ?”

“अभी नहीं पिताजी ! कल इसे ले जाऊँगी उनके पास”—रेखा ने कहा ।

“वह भी देखकर बहुत खुश होगा”—मिस्टर शर्मा ने कहा ।

“जी हाँ !....”

सभी लोग खाने लगे । दाई परोसने लगी ।



“देख, यह लाल भैया का घर है”

दूसरे ही दिन नयना के साथ रेखा खड़ी थी लाल के दरवाजे पर ।

“यही घर है ?...इतना छोटा-सा ?....तुम्हारे लाल भैया अकेले ही हैं क्या ?...बाल-बच्चे तो कुछ दिखाई नहीं पड़ते ?”—नयना ने पूछा ।

“लाल भैया तो अभी खुद बच्चे हैं”—बोली रेखा, फिर पुकारा—“लाल भैया !....ओ लाल भैया !....आऊँ अन्दर ?”

“आती क्यों नहीं”—भीतर से लाल ने ज़ोर से कहा—“या बाहर से ही बाँग देती रहेगी ?...”

“देखा !”—रेखा नयना से बोली—“अभी बाहर ही हूँ, कि लगे काट खाने....पहरा दिलवाना हो तो लाल भैया को पाल ले.... है न नयना ?!..”

नयना कुछ बोली नहीं ।

उसने अन्दर से आई हुई लाल की आवाज सुनी थी और उसके कान सतर्क हो गये थे ।

यह चिरपरिचित स्वर रेखा के लाल भैया का है या नयना के कानों के परदों का सन्देह ?

“आ नयना, भीतर चलें”—

रेखा ने नयना का हाथ पकड़ लिया और लाल के कमरे में आ रही ।

लाल मेज पर बैठा हुआ कुछ लिख रहा था । रेखा को आया जानकर भी उसने सर नहीं उठाया । लिखता ही रहा । नयना और रेखा मेज की बगल में आ गईं । नयना की दृष्टि लाल के चेहरे पर पड़ी ।

“उधर कुर्सी पर बैठ जाओ”—लिखते-लिखते ही लाल ने कहा ।

नयना एकटक लाल का चेहरा देखन लगी थी । उसके दिल की धड़कन तेज हो गई । उसका बाबू, उसका परदेसी उसके सामने ही तो था ।

“लाल भैया देखो न, यह कौन आया है ?....” बोली रेखा ।

“सीधे से बैठ जा रेखा, मैं अभी पाँच मिनट में खाली हुआ जाता हूँ....”

मगर रेखा ने लाल को लिखने न दिया । उसने उसकी फाउण्टेनपेन छीन ली ।

“शैतान कहीं की !”—कहकर लाल ने सर उठाया ।

रेखा हँस रही थी । नयना सागर-सी गम्भीर थी ।

लाल के नेत्र नयना के नयन से मिले ।

चौक पड़ा लाल, मगर उसने अपने को सम्हाला । नयना तो बहुत पहले ही सम्हाल चुकी थी । वह निश्चल खड़ी रही । भर-भर आती हुई आँखों को उसने दूसरी ओर कर लिया ।

“यह कौन है रेखा ?”

“वही लड़की...कल तो बता चुकी हूँ...”

“ओह !”—लाल ने कहा—“तू तो कहती थी कि यह बड़ी चञ्चल है....पत्थर को भी क्या चञ्चल कह सकते हैं रेखा ?”

“बड़ी चंचल थी लाल भैया !....सच कहती हूँ....तुम्हें देखकर

न जाने क्यों गुम हो गई है ?....बैठ नयना ! इस कुर्सी पर बैठ जा । लाल भैया से शर्माती है क्या ?....”

“नहीं जीजी !...” कहकर नयना कुर्सी पर बैठ गई ।

रेखा उछलकर लाल की कुर्सी के आर्म पर आ बैठी और उसके गले में हाथ डालकर बोली—“लड़की कैसी है यह लाल भैया ?....”

“अच्छी नहीं है रेखा !...” लाल ने कहा ।

“तुम्हीं अच्छे नहीं होगे”—रेखा ने बात उलट दी ।

नयना ने एक बार लाल की ओर देखा, फिर रेखा की ओर, और फिर लाल के गले में माला बनी हुई उसकी सुकुमार बाहों की ओर—

नयना का सर चकरा गया ।

उसका परदेसी आज दूसरे का था । उसकी निधि लुटेरा-लूट रहा था ।

नयना तड़प उठी । गाँव की भोली लड़की लाल और रेखा को क्या जाने, क्या समझे ?

“नयना ! तू भी कुछ बाल !”

“क्या बोल्दू ?”—नयना ने अपना स्वर सम्हाल कर कहा ।

“मेरे लाल भैया कैसे हैं ?....”

“बहुत अच्छे...बहुत-बहुत....”

“तेरे परदेसी तो थोड़ा कम ही होंगे...क्यों नयना ?”—रेखा ने व्यंग किया ।

“धत् !...” नयना चुप हो रही ।

“लाल भैया ! इस लड़की को मासूस मत समझना”—बोली रेखा—“बेचारी एक परदेसी को अपना दिल दिये बैठी है । उसी की खोज में आई थी शहर....”

लाल कुछ बोल न सका । वह अजीब पशोपेश में पड़ गया था ।

“रेखा जीजी !....ऐसी बातें न किया करो...मैं चली जाऊँगी...”  
नयना ने कहा ।

“लाल भैया से तू अपने परदेसी की हुलिया बता दे, कर्मा खाजकर ला देंगे नयना !....”

“रेखा ! तू बड़ी जिद्दी लड़की है....बेचारी का नाटक तकलीफ दे रही है...” लाल ने कहा ।

“मैतो परेशान हूँ लाल भैया !....अभी यहाँ से पहले यह तुम्हें देखने को बड़ी उत्सुक थी...तुम्हें देखकर अब यह गम्भीर हो रही है...”

“मैं देख चुकी रेखा जीजी ! अब जाती हूँ....तुम आना”—  
कहकर नयना उठ खड़ी हुई और बिना रुके चली गई ।

“अजीब लड़की है ?”—रेखा ने कहा ।

“हूँ !....” लाल केवल इतना ही बोला ।

“तुम्हें भी कुछ हो गया है क्या लाल भैया ?”

“नहीं तो !...”

“तुम भी बड़े गम्भीर हो चले हो...बात क्या है ?...”

“कुछ नहीं रेखा !...इस लड़की का नाम क्या है ?”

“नयना !....नाम क्यों पूछ रहे हो तुम ?”

“मुख नहीं तो !”—लाल बिगड़ पड़ा—“नाम भी पूछना कोई अपराध है क्या ?...”

“अपराध तो नहीं है लाल भैया !....मगर उसके सामने तुमने नाम क्यों नहीं पूछा ? शर्म तो आती नहीं होगी तुम्हें, पुरुष जो ठहरे...”

“लड़की बड़ी अच्छी है रेखा !....”

“सुन्दर कहो लाल भैया ! दिज की बात टेढ़े-मेढ़े ढङ्ग से ज़बान पर मत लाओ...उसे भी तुम कम अच्छे नहीं लगे हो, तभी तो इतनी जल्दी उठकर भाग गई....”

“एक बात तुमसे कहनी थी रेखा !...मगर अभी नहीं कहूँगा....”

“तब कब कहोगे ?”

“बहुत जल्द !....”

“शायद यही कहोगे कि नयना तुम्हें बेहद पसन्द आई है.... इतनी पसन्द कि एक और एक मिलकर एक होना चाहते हो...है न यही बात लाल भैया ?....”

“चुप रह तू !....बेवक्त की सहनाई बजाने लगती है....चल, उतर कर दूसरी कुर्सी पर बैठ” —

“नहीं बैठती, चाहो तो ढकेल दो....मन की बात छूगई, तो उबल पड़े....अभी दाई से कह दूँ, तो अपनी भतीजी को तुम्हारे गले बाँध दे...”

“रखे रह अपने दाई की भतीजी को अपने ही पास....मैं दूसरी बात कहना चाहता था....” बाला लाल ।

“तुम्हारी बातों का कुछ भी ठिकाना है लाल भैया ?...इधर भिखारो बाबा नहीं आये कभी ?”

“तूने भीख तो काफी दे दी थी न । जब सब खतम हो जायगा, तब आयगा...”

“मगर उसे अपने मस्तक की खुजली की दवा लेने तो आना ही था तुम्हारे पास....लाल भैया ! वह शीशा...तुम्हारा वह बड़ा-सा आईना क्या हुआ ।”

“उसे हटा दिया....”

“क्यों हटा दिया ?....मेरे डर से न ?...मैं तो केवल एक दिन ही उसके पास गई थी...तुम नाराज हो गये लाल भैया ?”

“नहीं....”

“तो शीशा क्यों हटाया ?....उसके पीछे की आलमारी....रिवाल्वर....डायरी....”

“सब गायब !...तू आज पृष्ठ के ही रहेगी। मानेगी नहीं ?... उस दिन मेरे कमरे से एक चोर कुछ कागज उठा ले गया था....”

“शायद मज्जाक करता रहा होगा....”

“मज्जाक समझती है तू ?...मेरे सर में उसने घाव कर दिया था रिवाल्वर की मूठ से....” बोला लाल।

“तो यों कहां न कि उस दिन की ठोकर की चांट लगी नहीं थी, लगाई गई थी....तभी तों मैं हैरान थी कि ठोकर पैर में लगती है और लाल भैया सर के बल तो चलते नहीं कि माथा चुटीला हो जाय....इतना झूठ क्यों बोल गये थे उस दिन लाल भैया ?...”

अब लाल को अपनी गलती मालूम पड़ी।

रेखा से वह कब तक इस तरह से द्वारता रहेगा ? इस जरा-सी लड़की का सारी बातें पाठ की तरह याद रहती हैं। एक बार लाल से वह जो चुन लेगी, झूल नहीं सकती कभी।

“लाल भैया !....”

“क्या है ?...”

“मैंने गलती पकड़ ली है न ?”

“हाँ !....”

“तुम झूठ क्यों बोले ?....”

“गलती हुई....”

“गलती क्यों हुई लाल भैया ?”

“माफ़ कर दे रेखा, नहीं तो दूँगा एक चपत ! शैतान सवाल पर सवाल उगलती जा रही है...”

“तुम्हारे सर की चोट कैसी है अब ?”

“अच्छी है...” बोला लाल।

“दुखती नहीं कभी ?”

“नहीं !”

“बड़े संगदिल हो गये लाल भैया तुम !...चोट खाकर भी

पीड़ा नहीं होती तुम्हें, और मैं बिना चोट खाये ही पीड़ित हो जाती हूँ....”

“कैसे ?”

“तुम्हारे माथे पर चोट लगी और अच्छी भी हां गई...उस दिन तुम्हारी गोली मुझे लगी भी नहीं और पीड़ा मुझे आज तक है...यही तो अन्तर है लाल भैया !...”

“कैसा अन्तर ?...”

“नारी और पुरुष में...अवलम्बन और अवलम्बित में...लाल और रेखा में...”

लाल क्या है और रेखा क्या है ?

“लाल है आस्मान पर चमकता हुआ चाँद और रेखा है चाँद की राशनी से चमकती हुई जमीन पर शीशे की एक पतली लकीर !...समझ गये ?....”

“गलत !...” लाल बोला ।

“तो तुम्हीं व्यक्त करो...”

“रेखा है जीवन की प्रेरणा और लाल है जीवन की गति... प्रेरणा के बिना गति का कोई महत्व नहीं रेखा !...”

“यह तो तुम्हारी अपनी व्याख्या हुई लाल भैया !...हर कोई अपनी अलग-अलग राय रख सकता है...रखता ही है ।”

“अच्छा अब तो व्याख्या हो चुकी....अब यह बता रेखा कि तू जायगी कब यहाँ से ?”

“तुम कहो तो अभी चली जाऊँ लाल भैया ! मगर तुम कहोगे नहीं ऐसा कभी, मुझे विश्वास है....”

“तू अब जा रेखा !....”

“मैं अपने विश्वास को तोड़कर यहाँ से नहीं जा सकती....चली जाऊँगी थोड़ी देर में, अभी तो तुम भी फुरसत में ही हो....”

“मैं बहुत जरूरी बात लिख रहा था, तू ने आकर विघ्न डाल दिया”—

“मैं न रहा कहीं तभी अपना सारा जरूरी काम कर रखा करो लाल भैया !....थोड़ी देर के लिए कभी-कभी आती भी हूँ, तो तुम्हारे लिये वजनी हो जाती हूँ...”

“वजनी तो तू यों भी कम नहीं है....”

“होगे तुम्हीं ! मुझे क्या कहते हो !....लो मैं जानती हूँ.... भिखारी आवे तो मेरा राम-राम कह देना....कभी रात में कोई चोर घुसे तुम्हारे घर में, तो मुझे पुकार लेना...यों चुपचाप अकेले-अकेले मस्तक में चोट मत खाना लाल भैया !....मुझे भी तो अपने दुखदर्द में शामिल कर लो....कर लोगे किसी दिन तो रेखा भी धन्य मानेगी अपने को....”

कहकर रेखा चल पड़ी ।

नयना रेखा के कमरे में आकर पड़ गई थी पलंग पर ।

आँखें रो रही थीं । दिल का तूफान वेग पर था । नयना लुट गई थी ।

कितने अरमान थे, कितनी इसरतें थीं—मगर आते-आते सब कुछ मिट्टी में मिल गया । नयना की पीड़ा आज बह रही है आँसू बनकर । नयना का दिल आज तपड़ रहा है, मछली बनकर । नयना की आँखें आज बरस रही हैं सावन-भादों की धार होकर, मूसलाधार !

उसका परदेसी रेखा का है और रेखा है नयना की संरक्षिका ।

रेखा के ही बल पर उसने अपने परदेसी को पाया है, अन्यथा वह गली-गली लुटती फिरती और उसे कभी खोज न पाती ।

नयना का रोम-रोम ऋणी है रेखा का ।

रेखा कितनी दयालु है ! रेखा का दिल कितना विशाल है ।

उसने धूल से सनी नयना को चमका कर हीरा बनाया है, अपनी बहन बनाया है—तो नयना उसके प्रति इतनी अकृतज्ञ कैसे

हो जाय ? कैसे वह अपने परदेसी को रेखा से छीने ?

उसके परदेसी ने भी तो उसे पहचाना नहीं या पहचान कर भी अन-पहचाने का भाव दिखाया ।

परदेसी के पीछे वह लुट गई, मगर लुटेरे को इसका कुछ भी ध्यान नहीं । कैसा हँस रहा था वह, रेखा के बाहों की माला पहने ? नयना को दिखा रहा था जैसे ।

जैसे नयना जानती ही नहीं कि वह डाकू है—लाल डाकू है, जिसके पीछे पुलिस ने उसका घर जना दिया, उसके बाप की जान ले ली, स्वयं वह भी अगर भागी न होनी तो न जाने क्या होता ?

वह रेखा से कह दे, तो उस डाकू की पोल खुल जाय ।

और रेखा भी सावधान हो जाय । नयना लुट चुकी है, तो रेखा न लुटने पाये । रेखा ने उपकार जो इतना किया है नयना पर ।

मगर रेखा से कैसे कहे वह यह सब ! कैसे कह सकेगी ?

सुनकर रेखा पर क्या गुजरेंगी ?

नयना ने लिहाफ में मुँह छिपा लिया और सिसकती रही ! वह बेजार थी, बेकरार थी ।

तभी रेखा आ गई । उसने नयना की हिचकी सुनी, तो हैरान होकर रह गई । इतने अगम सुख में इस भिखारिन को कौन-सा दुख आ लगा ?

“नयना !....” पुकारा उसने—“रो क्यों रही है ?....”

“नहीं तो जीजी !...” नयना ने आँसू पोंछकर सर उठाया और बैठ गई ।

“भूठ क्यों बोलती है ?....बोल क्या हुआ है तुम्हें ?...दाई ने कुछ कहा है क्या ?”

“बुआ ने कुछ भी नहीं कहा जीजी !....”

“तो....”

“परदेसी की याद आ गई थी मुझे”—नयना ने कहा ।

“पागल लड़की ! परदेसी इतना प्यारा था तो उसे जाने ही क्यों दिया था तुमने ?...जन्म भर तक पंखी पालो, मगर पिंजड़ा खुलते ही गायब । परदेसियों की भी यही हालत है । जिसे पंख होते हैं या जिसके पैरों में गति होती है, वह एक जगह की मोह-माया में नहीं बँधता नयना !....”

“जी कभी-कभी बहुत दुखने लगता है जीजी ! बहुत सम्हालती हूँ, मगर बेसहारे पैर सम्हाल नहीं पाते....”

“प्रेम के पीछे तू इतनी बेहोश हो उठी है नयना ! यह ठीक नहीं...”

“प्रेम तो तुम भी करती हो जीजी !....”

“किससे ?”

“अपने लाल भैया से !...क्या तुम्हें प्रेम का पीड़ा नहीं लगती ?....”

“लगती है नयना ! मगर तेरी जैसी पीड़ा मुझे नहीं होती” रेखा ने कहा ।

“तब कैसी होती है रेखा जीजी ?”

“शायद समझा न सकूँ मैं”—बोली रेखा—“शायद तू भी समझ न सके...तेरे और मेरे प्रेम में कुछ अन्तर है...तेरा प्रेम अपनी वृत्ति के लिये है (और मेरा प्रेम अपने उत्थान के लिये....तू परदेसी से प्रेम करती है उसे पाने के लिये और मैं लाल भैया को चाहती हूँ, उनका पथ अपनाने के लिये, उनके साथ आगे बढ़ने के लिये....तू परदेसी को पा जाय तो वृत्ति हो जाय, मैं लाल भैया को पाकर भी अवृत्ति ही हूँ....नारी तो हम दोनों ही हैं नयना !....तुम्हें पुरुष के शरीर की चाह है और मुझे पुरुष की गति की, साहचर्य की । तुम पुरुष को अपने में समा लेना चाहती हो मैं पुरुष को अपने से आगे रखकर अग्रसर होने की शक्ति देना चाहती हूँ !”

“मैं इन बातों को क्या समझूँ रेखा जीजी !...पढ़ी-लिखी होती तो समझ पाती”—नयना ने कहा ।

“समझकर क्या करेगी तू, अपने दिल को काबू में रख, खोकर साँख....पाने की लालसा छोड़ दे....नारी की महत्ता त्याग में है । देकर कुछ पाने की कामना करना नारी के लिये हेय है....”

“तुम बहुत अच्छी बातें बताती हो जीजी ! मैं सीखूँगी तुमसे....”

“नयना !....अं नयना !....”

पुकारती हुई दारि आ पहुँची ।

“क्या है बुआ ?”—नयना बोली ।

“यह देखो बुआ की भतीजी को !”—दाई बोली—“आई थी वहाँ से मेरा हाथ बँटाने....यहाँ आकर तो रेखा की भी चाची बन गई...”

“देखो बुआ ! गाली मत दो...” नयना ने कहा ।

“चाहे मार भले ही लो दो चार चपत”—रेखा ने वाक्य पूरा कर दिया ।

“तुम दोनों ने तो नाक में दम कर दिया है”—

“थोड़ा गम खा लिया करो बुआ तो दम कम हो जायगा”—नयना हँसने लगी ।

“देख रेखा !...इस छोकरी की ही-ही मुझे ज़रा भी अच्छी नहीं लगती...तू ने ही इसे अपने सर चढ़ा रखा है....”

“तुम्हारा सर तो बूढ़ा है दाई ! नयना चढ़ेगी तो गर्दन झुक जायगी तुम्हारी”—रेखा फिर हँसने लगी ।

“तुम दोनों एक से एक बढ़कर हो....जानती होती, तो उसी दिन इस कलमुँही को निकालकर बाहर करती....यहाँ पैर जम गये, तो हमी ये उड़ने लगी हरामी !...”

“माफ़ करो बुआ !....चलो, मैं चलती हूँ । क्या काम करना है ? बिल्ली को दूध पिलाना है क्या ?”

“लाकर खाना खिला दे अपनी इस बिल्ली को, जिसके साथ दूर रात म्याऊँ-म्याऊँ करती रहती है तू भी ?”—दाई ने रेखा की ओर इशारा करके कहा ।

“दाई ! मुझे बिल्ली बनाओगी तो एक दिन तुम्हारी बिल्ली की गर्दन ही तोड़ दूँगी...”

“मेरी ही गर्दन तोड़ दे किसी दिन...देखूँ यह नयना की बिल्ली कितने दिन पकाकर तुम्हें खिलाती है...कमान की चेंटी क्या हुई, दिन रात खून-खच्चर !...”

“जाने दो बुआ !”—नयना ने कहा—“रेखा जीजी थोड़ी-बहुत खराब हैं....”

“रहने दे, तू ही बड़ी थोड़ी-बहुत अच्छी है....चल सीधे से मेरे साथ...”

नयना दाई के पीछे चली गई ।

## दूसरे दिन—

नाश्ता के बाद रेखा ने कपड़े बदले, सायकिल उठाई और नयना से बोली—“मैं जरा काम से जाती हूँ...दो घंटे बाद आऊँगी...कुछ देर हो जाय तो घबड़ाना मत...खाना खा लेना....”

“अच्छा जी !....मैं खाना भी खा लूँगी और घबड़ाऊँगी भी नहीं...मगर तुम अकेली ही सैर को जाओगी क्या ?...मुझे भी ले चलो तो थोड़ा-बहुत अच्छा ही रहे.. नहीं तो अपने लाल भैया को ले लो साथ...”

“तुम्हें फिर कभी ले चलूँगी...और लाल भैया तो मेरा साथ देना ही नहीं चाहते...”

रेखा चली गई ।

नयना बड़ी देर तक चुपचाप बैठी रही, फिर उसकी तबियत ऊबने लगी ।

तभी लाल के घर की ओर उसकी दृष्टि पड़ी। उसका हृदय हाहाकार कर उठा। उफ! उस घर में बैठा हुआ परदेसी उसका नहीं हो सका, न हो सकेगा कभी।

रेखा घर से नहीं है। नयना का परदेसी तो अपने घर में होगा ही।

क्या नयना उसके पास जाय? क्या चलकर देखे वह कि परदेसी को उसकी कुछ याद है या नहीं?

नयना उठी। दरवाजे की ओर बढ़ी।

“ओ नयना !....कहाँ चल दी बेटी ?”—

“अभी आ रही हूँ बुआ !....”

“आयेगी तां, मगर जा कहाँ रही है ?”

“जरा लाल के घर जा रही हूँ”—बोली नयना !

“तुम्हें भी उस लाल-पीले की दवा लग गई ?”—दाई ने कहा—  
“कहे देती हूँ, वह अच्छा आदमी नहीं है। रेखा का ही कलेजा है, जो काजल से बचकर निकल आती है..”

“मैं ज्यादा देर नहीं करूँगी बुआ !....”

नयना लपक कर दरवाजे पर आ खड़ी हुई।

“क्या मैं अन्दर आ सकती हूँ ?...”

“आओ !...नयना तुम ?....”

“मेरा नाम याद है तुम्हें लाल बाबू ?”—नयना गम्भीर गति से भीतर आ गई—“मैंने सोचा, कल तुमने रेखा जीजी के साथ मुझे पहचाना नहीं, तो मेरा नाम भी भूल गये होंगे ?....”

“तुम्हें मैं भूला नहीं हूँ नयना !....तुमने मेरे साथ बहुत उपकार किया था....”

“उपकार की शाबाशी देकर तुम मुझे बदला नहीं सकते लाल बाबू ! कुत्ते भी उपकार का बदला पूँछ हिलाकर दे देते हैं, मगर नयना को इन्सान और कुत्ते में बहुत अन्तर दीखता है....”

“चाहे जो तुम कहो नयना ! मगर लाल के लिये तुमने कम त्याग नहीं किया, इसे तो तुम भी महसूस करती होगी....”

“मेरी क्या कहते हो लाल बाबू !....तुम्हारे लिये लुट गई, बिक गई, मगर तुम तो वही के वही रहे....मेरे उपकार की याद है तुम्हें, मगर उस उपकार का बोझ तुम अपने सर पर महसूस नहीं करते, शायद....उस उपकार का बदला तुम शायद दे नहीं सकते....”

“दे सकता, तो कभी पीछे न हटता नयना !....मैं तुम्हारे दिल की कमजोरी समझ गया हूँ....मगर विवश हूँ । इस समय मेरा शरीर बिक चुका है....”

“मैं जानती हूँ”—बोली नयना—“रेखा जीजी ने तुम्हें खरीद लिया है न !...अफसोस है मुझे, ताँ सिर्फ यह कि बिक चुकने पर भी तुम्हें मेरा दिल खरीदने का साहस कैसे हुआ...”

“तुम गलत समझ रही हो नयना !....और रेखा को तुम समझ ही न सकोगी । मैं इतने दिन तक उसके साथ रहा, मगर वह क्या है, यह न जान सका अब तक !....”

“तुमको तो जान चुकी हूँ लाल बाबू !....और रेखा की बाँह तुम्हारे गले में देखकर रेखा को भी न समझ सकूँ, इतनी भोली मैं नहीं....तुम्हारे लिये मैंने बहुत कुछ किया । तुम इतने ही बफ़ादार होते, तो मेरी खोज न लेकर रेखा की बाँहों में बँधकर न रह जाते....”

“कौन कहता है कि मैंने तुम्हारी खोज नहीं की ?”—बोला लाल—“टैक्सी लेकर जमनापुर थाने गया, तुम्हें छुड़ाकर ले भी आ रहा था कि तुम बीच से ही गायब हो गई....”

“मैं तुम्हें पुलिस जानकर कूद पड़ी थी....तो वह तुम्हीं थे ?....रास्ते में बताया भी तो नहीं ! शायद चुपचाप कहीं ले जाकर फेंक आना चाहते थे, ताकि मैं फिर तुम्हारे रास्ते में न पड़ूँ ?....”

“नयना ! तुम्हें शक हो गया है....”

“कान से सुनी बात पर शक हो सकता है लाल बाबू ! आँखों

देखी बात पर तो विश्वास किया जाता है....तुम ढाकू हो, यह मैं पुलिस के मुख से सुन चुकी थी, मगर विश्वास न था कि तुम्हारा दिल भी पत्थर होगा और तुम नयना के साथ की हुई आँख-मिचौनी को इतनी जल्दी भूल जाओगे...”

“भूलने के लिये तो मैं अपने तक को भूल गया हूँ नयना !”

“मगर रेखा की याद तो तुम्हें है न ?”

“रेखा को भी भूल जाता, अगर वह तुमसे सर्वथा भिन्न न होती”—लाल ने कहा ।

“एक नारी तो दूसरी नारी से भिन्न होती ही है लाल बाबू ! मगर एक ही पुरुष दो नारियों के लिये भिन्न-भिन्न कैसे हो सकता है...हाथी के दाँत खाने और दिखाने के अलग-अलग हो सकते हैं, परन्तु हाथी और मनुष्य में तो बहुत अन्तर है न ?”

“मैंने तुमसे पहले ही कह दिया था नयना कि अगर कभी तुम्हारे लायक बन सका, तो पीछे न हटूँगा....”

“कभी बन भी सकांगे मेरे लायक रेखा के रहते, इसका मुझे विश्वास नहीं...”

“न हाँ विश्वास तुम्हें इसकी कोई दवा मेरे पास नहीं”—लाल ने कहा—“रेखा मेरे निकट जो बन चुकी है, वह कोई नहीं बन सकता....तुम तो अभी उससे बहुत पीछे हो...तुम मुझे पाकर अपने को खो देना चाहती हो....रेखा मुझे पाकर अपने को प्रज्वलित करना चाहती है...तुम मेरे बिना असहाय हो...और रेखा मेरे बिना भी अग्रसर हो सकती हैं....इतने महान् अन्तर को तुम कैसे समझ सकती हो नयना ?...मैं कैसे तुम्हें बताऊँ कि रेखा मानवा नहीं देवी हैं....”

“पुरुष की आँखों में जो नारी जँच जाय, वही देवी बन जाती है....तुम्हारी आँखों को मैं पसन्द नहीं, तो दिल भी तुम्हारा मुझसे घृणा ही करता है....”

“तुम चुप रहो नयना !”—लाल कुछ कठोर होकर बोला—  
“व्यर्थ की बातें मुझे पसन्द नहीं....”

“लाल बाबू ! मैं तो सिर्फ एक रास्ता जानती हूँ....नारी अगर निराश हो जाती है तो उसका बदला बड़ा भयङ्कर होता है....”

“बदले का डर तुम मुझे मत दिखाओ नयना !....”

“मैं जानती हूँ कि तुम डरनेवाले नहीं”—नयना ने कहा—  
“मगर हाड़-माँस की बनी हुई तुम्हारी देह अगर चोट की जाय, तो ऐसा नहीं कि पीड़ा न पहुँचे...”

“तुम चोट करके देखो...लाल हिल नहीं सकता....”

“बही सही तुम तैयार रहना...”

“मैं अब भी तैयार ही हूँ....”

“रेखा के पिता कप्तान हैं...मेरे मुँह से तुम्हारा परिचय और लखनपुर की घटना सुनकर वे कुछ तो ज़रूर करेंगे...”

सुनकर लाल चौंक पड़ा ।

बोला—“तुम इतना आगे बढ़ सकोगी नयना ?”

“निराश नारी बड़ी बलवान होती है लाल बाबू ! इस चोट के लिये तुम तैयार रहो...”

“जिसने मेरे लिये इतना त्याग किया, क्या वह कुछ दिनों तक और धैर्य नहीं रख सकती ?....”

“धैर्य की पृष्ठभूमि आशा है....कोई आशा न रहे तो खाली धैर्य किसी काम का नहीं....”

“तो तुम्हारा यह दृढ़ निश्चय है ?”—लाल का स्वर बेहद कठोर हो गया था ।

“हाँ !...” नयना भी तनकर बोली ।

“तो तुम अभी मरने के लिये तैयार हो जाओ”—लाल का रिवाज़वर उसके हाथ में तन गया ।

नयना डर गई । सहम कर उठ खड़ी हुई ।

बोली—“तुम....तुम मेरा खून करोगे....”

“तुम्हारे खून से मेरे हाथों में धब्बा नहीं लगेगा...वासना के पीछे बेहोश नारी की कोई कीमत नहीं...प्रेम का ऐसा घृणित रूप देनेवाली नारी बेहया है....” लाल गरज कर बोला ।

तभी बाहर से रेखा की आवाज आई—“लाल भैया ! नयना इधर आई है ?”

लाल ने रिवाल्वर जेब में रख लिया । बोला—“हाँ ! यहीं तो है...आ न रेखा ! ...”

रेखा आ गई । गौर से दोनों को देखने के बाद नयना से हँसकर बोली—“क्यों रे दुष्ट ! कल लाल भैया से शर्म लगती थी...और आज अकेली हो मिलने चली आई ?...”

“रेखा ! इस लड़की का दिमाग तो ठीक है न ?”—लाल ने पूछा ।

“है तो !”—रेखा ने कहा —“कुछ कह दिया हो तो बुरा न मानना लाल भैया ! गाँव की है न, शहर की सभ्यता क्या जाने ? चल नयना ! दाई बुला रही है...”

“इसे अभी यहीं रहने दो रेखा !”

‘क्यों कुछ बात करनी है क्या लाल भैया ?’

“हाँ !...”

“कल कर लेना... बातों से पेट तो भरता नहीं, समय ही बर्बाद होता है...”

“तो तेरे लिये केवल पेट भरने में ही समय की सार्थकता है ?” लाल ने पूछा ।

“और नहीं तो क्या ?”—बोली रेखा—“आआ चलें नयना ! लाल भैया से ज्यादा बातें मत करना...ये कभी-कभी काटने भी दौड़ते हैं...”

मगर नयना अतिशय गम्भीर बनी रही ।

रेखा चली, तो चुपचाप उसके पीछे हो ली ।

लाल कुर्सी पर बैठा सोचता रहा ।

नयना कितने नीचे गिर गई !

कीचड़ में लोंट कर वह रेखा के चाँद को पकड़ना चाहती है ।

आज वह एकाएक इतनी हताश क्यों हो गई ? हताश भी हुई,  
तो उसमें प्रतिशोध की इतनी प्रबल भावना कैसे आ गई ?

यदि वह मिस्टर शर्मा से सब कुछ कह दे तो ?

कह दे कि लाल ही जज वाली हत्या की रात उसके घर टिका  
था, उसी ने जमनापुर थाने से उसे भगाया था...

कह दे सब कुछ तो क्या होगा ?

सरकार के परमभक्त मिस्टर शर्मा क्या छोड़ देंगे लाल को ?  
नहीं !...कभी नहीं !

“मिस्टर लालचन्द !...” बाहर से कोई पुकारता हुआ अन्दर  
आ गया ।

“आइये मिस्टर बिलफोर्ड !—” लाल ने सूटेड-बूटेड बिल-  
फोर्ड को देखकर कहा ।

बिलफोर्ड ने एक उँगली से अपना माथा खुजलाया, फिर कुर्सी  
पर आ डटा ।

“बहुत गम्भीर हो लाल ! क्या बात है ?”

“नयना यहाँ भी पहुँच गई सरदार !...” लाल ने कहा ।

“वह लड़की ?—मुझे मालूम है—आजकल रेखा के साथ रह  
रही है न ?”

“हाँ, वह मेरे पीछे पागल हो गई है सरदार !....”

“पागल तो वह पहले से ही थी लाल !—तुम तो ठीक  
हो न ?...”

“मैं ठीक हूँ, मगर उसका पागलपन मुझे भी ले बीतेगा...”

“कैसे ?...”

“अभी वह यहाँ आई थी”—लाल बोला ।

“क्या कहती थी वह ?”

“रेखा के साथ मेरी घनिष्ठता देखकर वह आवेश में आ गई है। कमजोर नारी का आवेश बड़ा खतरनाक होता है... कहती थी यदि मैंने उसे स्वीकार न किया, तो वह मिस्टर शर्मा से सब कुछ कह देगी...”

बिलफोर्ड चौंक पड़ा।

“मिस्टर शर्मा से कह देगी वह ? बेवकूफ लड़की !...तुमने उसे रोंका नहीं लाल ?...”

“कैसे रोंकता उसे ?...”

“तुम्हारा रिवाज तो तुम्हारे पास था न ?...”

“था, मगर तभी रेखा आ गई और उसे अपने साथ लिवा ले गई...मैं कुछ न कर सका। कहीं उसने जाकर मिस्टर शर्मा से कह न दिया हो....”

“अभी वे घर पर नहीं हैं”—बिलफोर्ड ने कहा।

“मगर वह उनसे कहेगी जरूर !....वह पागल लड़की जो न कर डाले....”

“उसे मैं देख लूँगा....तुम उधर से निश्चिन्त रहो”—बिलफोर्ड ने कहा—“लाल ! मैं आज दो बहुत ही जरूरी बातें तुम्हें सुनाने आया हूँ...”

“कौन-कौन सी ?”

“एक दुखद है और दूसरी गम्भीर !...एक स्वयं तुमसे संबंध रखती है, दूसरी मण्डल से...तुम पहले किसे सुनना चाहोगे ?...”

“मुझे अपनी परवाह नहीं सरदार ! आप पहले मण्डल की बात सुनाइये....”

“शाबाश !”—बिलफोर्ड ने कहा—“बादशाह का जन्मदिवस मनाने के लिये देश के कोने-कोने से धन की वसूली हुई है....जनता ने स्वेच्छा से दान नहीं दिया है। कहीं-कहीं तो इस वसूली के

लिये बेहद जुल्म भी किये गये हैं....देश के नेताओं ने भी इस अमानुषिक कार्य का तीव्र विरोध किया है; परन्तु गुलाम देश के नेताओं की सुनता ही कौन है ? पूज्य बापू ने इसके विरोध में जो वक्तव्य दिया था, उसके कारण आज वे जेल की दीवारों में बन्द कर दिये गये हैं....इस जुल्म की भी कोई हद है....”

“मैंने समाचार पत्रों में पढ़ा है....” बोला लाल ।

“यद्यपि बापू हमारे पूज्य हैं और उनका अहिंसात्मक आन्दोलन अनुकरणीय भी है, फिर भी किसी-किसी समय बलप्रयोग आवश्यक हो जाता है । यदि इस समय हमने बलप्रयोग न किया तो गरीब देश की पिंसी हुई जनता की कमाई शराब बनकर गोरों के पेट में उतर जायगी...बहुत सारा धन कल ३ अप से राजधानी ले जाया जायगा...तुम शायद न जानते होंगे कि आजकल मण्डल को धन की कितनी आवश्यकता है....हमें चाहे जैसे हों, इस धन पर अधिकार करना ही होगा....”

“३ अप दो बजे रात इधर से गुजरती है...हमारा खयाल है कि हमें अधिक खतरा न उठाना पड़ेगा, क्योंकि सरकार को हमारे इरादे का कोई पता नहीं लग सकेगा...मण्डल के पचास जवान तुम्हारे साथ रहेंगे । तुम उनका कमाण्ड करोगे...”

“इसके लिये धन्यवाद सरदार !...मरकर भी आपके कुछ काम आ सका तो यह शरीर धन्य हो जायगा...”

“इसे याद रखो लाल कि खजाने की रक्षा के लिये काफी पुलिस साथ रहेगी, स्वयं इन्स्पेक्टर जेनरल आफ पुलिस भी साथ आ रहे हैं...”

“मुझे परवाह नहीं सरदार !....”

“तो ठीक है...कल तुम रेलवे क्रासिङ्ग के दक्षिण ओर एक क्लार्क पर उपस्थित रहोगे....तुम्हारे साथी तुमसे वहीं आ मिलेंगे....”

“बहुत अच्छा !....”

“कोई बात हो जाय तो याद रहे लाल, तुममें से किसी का भी जीवित शरीर कोई न पा सके....”

“मैं इसपर ध्यान रखूँगा सरदार !...”

“अच्छा, अब दूसरी बात सुनो....घटना दुखद है और तुमसे संबंध रखती है...सुनकर तुम कमजोर तो नहीं हो जाओगे ?....”

“अगर आपका विश्वास न हो मुझ पर, तो वह बात मुझसे न कहें आप....” बोला लाल ।

“मुझे तुम पर विश्वास है....तुम कमजोर नहीं हो सकते लाल !....देश जननी के आँसू जिसने देखे हैं, वह अपनी जननी की मृत्यु पर आँसू नहीं बहा सकता...”

“सरदार !—”

“लाल ! तुम्हारी माता चल बसी....गाँववालों ने उन्हें अग्नि के हवाले कर दिया....बूढ़ी भी तो हो चुकी थीं बहुत...क्यों बेठा ?”

“हाँ सरदार !....”

“लाल ! अपने नेत्र पोंछ लो....आँसू बह चले हैं....”

“नहीं सरदार ! आँसू नहीं बह सकते....मैं उन्हें रोक लेता हूँ...मेरी माता मरी नहीं, अभी जीवित हैं, रो रहीं हैं गुलामी की बेड़ियों में जकड़ी हुई....मेरी माता मर नहीं सकती सरदार ! उन्हें कोई नहीं मार सकता....उन्हें कोई छू भी नहीं सकता ।”

“अपने को सम्हाल लो लाल ! कल तुम्हारी परीक्षा का दिन है...मैं चलता हूँ । कोई बात हुई तो फिर मिलूँगा, नहीं तो नियत समय पर कल तुम प्रस्थान कर देना....”

“बहुत अच्छा !...”

बिलफोर्ड उठ खड़ा हुआ और चला गया ।

लाल निश्चल बैठा रहा ।

उसकी माँ मर गई, उसकी जन्मदात्री उसको देखने के लिये

तड़पती-तड़पती चल बसी। उसने उसे पैदा किया, अपने दूध से उसे जवानी दी, मगर बेटे का सुख वह न भोग सकी।

जन्मभूमि के सुख-दुख पर मिटनेवाला युवक, मानवी माता के लिये कितना दुख उठाये ?

“लाल भैया !...”

“चली आ रेखा !...”

“माताजी चल बसीं भैया ?...अभी वह साहब क्या कह गया ?”—रेखा अन्दर आकर बोली।

“हाँ रेखा !...तू कब से बाहर खड़ी है ?”

“अभी ही तो आई हूँ, केवल माँ की खबर सुन सकी हूँ....यह साहब तो पहले ही पहल आया था भैया ! कभी इसे देखा नहीं... कौन था ?...”

“मेरा एक दोस्त !...मुझसे मिलने गाँव गया, वहीं से उसे यह खबर मिली....क्या करूँ रेखा ! माँ का मोह तो सभी को होता है....”

“लाल भैया ! देश के मोह के आगे माँ का मोह कुछ नहीं.... तुम्हें बहुत कुछ करना है....अगर शिथिल पड़ गये तो कुछ भी न कर सकोगे....”

रेखा लाल की कुर्सी के पीछे आ खड़ी हुई और उसे उठाकर चारपाई पर ला बिठाया।

लाल के धैर्य का बाँध आँसू बनकर बहने-बहने को था। रेखा की सान्त्वना पाकर वह और भी बह चला।

रेखा लाल के पास चारपाई पर बैठ गई। उसके सर को अपनी गोद में रखकर, अपनी साड़ी के छोर से उसके आँसू सुखाने लगी।

“रेखा ! माँ तो चली गई। उन्हें सुख देना तो दूर रहा, मरते समय उन्हें कुछ धैर्य भी न दे सका....अपनी सफाई भी नहीं दे सका रेखा कि माँ का बेटा इतना बेवफा नहीं, जितना समझ कर कह मरी है....उसे अब कहाँ पाऊँगा रेखा ?....”

“लाल भैया ! क्या सभी नारियों में तुम अपनी माँ को सूरत नहीं देख सकते ?”

“देख सकता हूँ रेखा ! तुम दिखाओ...मैं देखूंगा माँ को....”

“देखो लाल भैया !”—रेखा ने लाल के शरीर को अपने सीने में छिपा लिया—“मुझे देखो....मैं भी नारी हूँ...माँ समझ सकोगे मुझे ?...”

लाल एकटक रेखा का मुख देखता रहा । रेखा उसे अपने सीने से लगाये उसका सर सहलाती रही । धीरे-धीरे लाल की आँखें बंद हो चलीं ।

बड़ी देर तक लाल बेसुध पड़ा रहा ।

फिर धीरे से उसने अपनी आँखें खोली और उठ बैठा ।

“लाल भैया !....”

“मुझे शान्ति मिल गई रेखा !....मेरी रेखा ! तुम पूर्ण नारी हो । माता की ममता, पत्नी का सेवा-भाव बहन, का मातृप्रेम, बेटी की श्रद्धा....सब कुछ मिला है तुमसे....मेरे मन मन्दिर की देवी ! तुम्हें कैसे प्रणाम करूँ मैं ?....”

लाल रेखा के पैरों पर गिर पड़ा ।

“लाल भैया !...बड़े मूर्ख हो तुम !....मेरे पैर पड़ते हो, छोटी सी बच्ची के....” रेखा ने अपना पैर खींच लिया—“अपने पैरों का सहारा मुझे नहीं देना चाहते, तो तुम्हारे मस्तक का बोझ लेकर क्या करूँगी मैं....”

लाल उठ बैठा । गंभीर ही रहा । बोलना चाहकर भी कुछ बोल न सका ।

“लाल भैया ! थोड़ा हँस लो, तो ताकत आ जायगी...आँसू गिरने से तो सारी शक्ति बह निकलती है....हाँ ! नयना को तुमने कुछ कह दिया था क्या ?”

“नहीं तो !”

“अजीब लड़की है लाल भैया !...यहाँ से जाकर रोने लगी । बहुत पूछा, मगर बताया नहीं, तो तुमसे पूछने इधर आ गई !.... मुझसे कहती थी कि वह पिताजी से कुछ बातें करना चाहती है....”

“ऐसा कहती थी ?”—लाल आश्चर्य में भरकर बोला—“रेखा यह लड़की बड़ी खतरनाक है....”

“कैसे !....”

“नारी जब फिसल पड़ती है तो फिसलती ही जाती है...नयना निराश होकर चुड़ैल बन गई है...वह सर्वनाश करेगी अब !”

“लाल भैया !...कैसी बातें करते हो ?...नयना किससे निराश हुई है ? क्या तुमसे ?....”

“हाँ !”

“तुमने उसे निराश क्यों किया ?....वह क्या चाहती थी तुमसे !”

“वह मुझे पंगु बनाना चाहती थी”—लाल ने कहा—“देश के पीछे पागल लाल को वह अपने प्रेम में पागल करना चाहती थी....”

“तुम कह रहे हो ऐसा, इसलिये विश्वास कर रही हूँ, लाल भैया !....मगर नयना ऐसी लड़की नहीं । वह तुम्हें पाने की चाह रख सकती है, तुम्हारा सर्वनाश करने की नहीं....”

“वह ऐसा ही करेगी रेखा !....वह तुम्हारे पिताजी से मेरा सारा भेद कह देगी...”

“वह तुम्हारा भेद कैसे जान गई लाल भैया ?”

“यह वही लड़की है, जिसके घर मैं लखनपुर में ठहरा था ।”

“और जिसे जमनापुर थाने से भगा लाये थे ?”

“हाँ !”

“मैं समझ गई लाल भैया !”

“मैं उससे घृणा करता हूँ रेखा !...ऐसी नारी का मोह मुझे नहीं । उस समय तुम न आ पहुँची होती तो मैं उसका खून कर डालता....”

“मैं उसे रोकूँगी लाल भैया !....वह पिता जी से कुछ नहीं बता सकती....रेखा के रहते वह ऐसा कभी नहीं कर सकती...”

“तुम उसे मत समझाओ रेखा !....मैंने सब प्रबन्ध कर लिया है। यदि उसने तुम्हारे पिता के सामने जरा भी जवान खोली तो...”

“मैं उसे समझा दूँगी लाल भैया !....”

कहकर रेखा उठ खड़ी हुई।

अपने घर आई। नयना उस समय शान्त हो चुकी थी और दाई के साथ बैठी हुई उसका खाना पकाना देख रही थी।

“नयना !....जरा इधर आ !....”

कहकर रेखा अपने कमरे की ओर बढ़ी।

नयना भी पीछे-पीछे आ गई। बोली—“क्यों बुलाया जीजी ?...”

“कुछ बातें करनी हैं”—रेखा ने कहा—“तू बैठ जा...”

नयना बैठ गई। रेखा ने दरवाजा बन्द कर लिया।

“क्या कहती हो जीजी ?....”

“तू रो क्यों रही थी ?....”

“जी भर आया था जीजी !” बोली नयना।

“शायद परदेसी की याद आ गई थी ?”

“हाँ !....”

“तेरा परदेसी तुझे नहीं चाहता ?”

“नहीं !...तुम्हें किसने बताया ?”

“लाल भैया ने”—रेखा ने कहा।

“तो तुम सब जान चुकी हो रेखा जीजी ?... अब अनजान बनने से क्या फायदा ? जिसे तुम चाहती हो, वह मुझे कब चाहेगा ?....”

“भूलती है नयना तू !”—कहा रेखा ने—“लाल सभी का है। उसके लिए हर नारी बराबर है। कमजोर नारी को वह घृणा करता है, जरूर ! तू इतनी बेताब क्यों हो उठी है ?—”

“रेखा जीजी ! अपना घर लुटता हुआ देखकर कौन धीरज रख सकता है ?”

“देख नयना ! लाल फौलाद है, जिस पर कमजोर कलेजे की पीड़ा असर नहीं कर सकेगी...उसे पाना है, तू फौलाद बन !... उसका प्रेम पाना चाहती है तो त्याग करती चल आँखें मूँद कर...”

“तुम्हारे रहते कुछ भी नहीं हो सकेगा जीजी !...तुमने मेरा परदेसी मुँहसे छीन लिया है” —

“तू अपने को इतना कमजोर क्यों समझती है ?...अपने को मुँहसे आगे बढ़ाकर छीन ले तब जानूँ !...”

“तुमने अपने पिताजी से उसके भेद खोल देने का भय दिखाकर उसे अपने वश में कर लिया है जीजी !...वह कभी मेरा नहीं सुनेगा....”

“तू मुझे अपने रास्ते का काँटा समझती है नयना ? वही सही, मैं अपनी सफाई देना नहीं चाहती। लाल को हम दोनों प्रेम करती हैं। चल, अपनी किस्मत का फैसला कर लें....”

“कैसे ?”—नयना ने पूछा।

“एक कटार तू ले ले और एक मैं....जो जीती बचे, वह लाल की हो रहे...” रेखा ने कहा।

“अरे बाप रे !....” नयना डर गई।

“इसी बल पर तू लाल को पाना चाहती है ?”—बोली रेखा—

“याद रख नयना ! इस जन्म में लाल तेरा कभी नहीं हो सकता....”

“मैं इसे जान चुकी हूँ...और निराश होकर ही मैं तुम्हारे पिता की शरण लेना चाहती हूँ...”

“चुप रह नयना ! मेरी भलाई का बदला इस तरह मत दे....”

“यही एक बात मुझे रोक रही है जीजी !....मैं इस पर विचार करूँगी....”

“विचार कर ले”—कहा रेखा ने—“तेरा जो आखिरी फैसला हो वह मुझे बताकर ही पिताजी के पास जाने की सोचना...”

“बहुत अच्छा !....”

शाम को—

सब ने साथ-साथ खाया । नयना गम्भीर बनी रही । मिस्टर शर्मा सोने चले गये । रेखा भी अपने कमरे में आई । नयना बूढ़ी दाई के कमरे में सोती थी ।

दाई तो पड़ते ही अपनी बिछी की तरह गुर्गने लगी ।

मगर नयना को नींद नहीं थी । वह सोच रही थी-

करवटें भी बदल रही थी बेचैनी के साथ ।

एकाएक उठ बैठी वह ।

दाई सो रही थी । रेखा का भी कमरा शान्त एवं अंधेरा था ।

नयना दरवाजे के पास आई । खोलकर सतर्क दृष्टि से चारों ओर देखा, फिर मिस्टर शर्मा के कमरे की ओर बढ़ी ।

मिस्टर शर्मा पलंग पर लेटे हुए कुछ पढ़ रहे थे ।

नयना का देखकर उठ बैठे—“आ बेटी !...क्या बात है ?”

“मुझे कुछ कहना है पिताजी !....” नयना बहुत धीरे से बोली ।

“उस कुर्सी पर बैठ जा....रेखा की शिकायत लेकर आई है या अपने बुआ की ?”

“किसी की नहीं....मैं एक भेद की बात कहने आई हूँ...बहुत जरूरी बात !...” नयना ने कहा ।

नयना जिस दरवाजे से अन्दर आई थी, वह खुला था और उसी के बाहर छिपकर खड़ी हुई एक काली शकल अन्दर की सब बातें सुन रही थी । उसके हाथ में रिवाल्वर भी था, जो नीचे मुका हुआ पड़ा था चुपचाप ।

“कौन-सी भेद की बात है ? तू बेखौफ़ कह !”—मि० शर्मा ने कहा ।

“पिताजी ! मैं दाई की भतीजी नहीं...”

“भतीजी नहीं है तू ?....”

“नहीं, मुझे अब अपने जान की परवाह नहीं....मैं सब कुछ कह दूँगी आपसे....रेखा जीजी मुझे भिवारी जानकर यहाँ ले आई थी...”

“कौन है तू....”

“मैं लखनपुर के जियावन की बेटी हूँ....एक रात एक परदेसी मेरे यहाँ आकर ठहरा। मैं उसे अपना दिल दे बैठी !...मगर वह ढाकू निकला। उसके प्रेम में पड़कर मेरा घरबार नष्ट हो गया। बापू की जान मेरी आँखों के सामने चली गई, मगर मैं प्रेम में अन्धी होकर चुपचाप खड़ी देखती रही !....”

“मैं सुन रहा हूँ, तू कहती चल”—मिस्टर शर्मा विस्मय में भरे बैठे थे।

“उस ढाकू ने मुझे जमनापुर थाने से भगाया था, मगर मैं उसे पुलिस समझकर भाग निकली....अब मेरे प्रेम को ठोकर लग गई है। मैं निराश हो चुकी हूँ। मैं सब कुछ बता दूँगी पिताजी ! सब कुछ....चाहे मेरी भी जान क्यों न चली जाय...”

“तेरी जान का ज़िम्मा मैं लेता हूँ”—मिस्टर शर्मा ने कहा—  
“तू उस ढाकू को पहचानती है ?....”

“हाँ !....” नयना ने कहा।

दरवाजे के बाहर खड़ी हुई उस काली शकल का रिवाल्वर एकाएक नयना की ओर तन गया।

“कौन है वह ?...” मि० शर्मा ने पूछा।

“वह....वह....”

धौंय ! धौंय !

दो गोलिएँ लगातार छूटों और नयना का शरीर लड़खड़ाकर कुर्सी के नीचे आ गिरा, लहलुहान।

चीख कर नयना शान्त हो गई ।

मिस्टर शर्मा लपककर उठे, पेटी से रिवाल्वर खोलकर बाहर दौड़े ।

उधर रेखा अपने कमरे से चिल्ला रही थी—“दाई !....ओ दाई !... यह आवाज कैसी थी ?....मर गई क्या ?...”

तभी मिस्टर शर्मा दौड़े हुए उधर आये—“रेखा बेटी !....”  
उनका स्वर बदहवासी से भरा था ।

“क्या है पिताजी ?....” उनका घबड़ाया हुआ स्वर सुनकर रेखा लिहाफ फेंक दौड़ी आई—“क्या हुआ ? आप इतने घबड़ाये हुए क्यों हैं ?...”

“गोली की आवाज नहीं सुनी तूने ?...नयना को किसी बदमाश ने गोली मार दी....”

“नयना को ?”—रेखा चीख पड़ी—“मेरी नयना को किसी ने गोली मार दी ?...पिताजी ! कहाँ गया वह हत्यारा ?....”

“भाग गया...तू मेरे कमरे में चल....मैं इधर-उधर देखकर अभी आया...”

मिस्टर शर्मा दौड़ते हुए चले गये ।

रेखा रोती हुई दाई के कमरे में आई । उसे जगाया—“दाई ? नयना....गोली....” वह ठीक से कुछ न कह सकी ।

बूढ़ी उठ बैठी—“क्या हुआ नयना को ?...क्या हुआ मेरी बच्ची को ?....”

दोनों दौड़कर मिस्टर शर्मा के कमरे में आईं । नयना का शरीर ठण्ढा पड़ गया था ।

“मेरी बच्ची !....” दाई फूट-फूटकर रोने लगी—“मैं लुट गई, किस हत्यारे ने मेरी लाइली की जान ले ली ?...मैं उसकी बोटी-बोटी नोंच डालूँगी....”

“दाई !”—रेखा रोती हुई बोली—“मेरी अच्छी दाई ! रोओ मत....जो होना था, हो चुका....”

“बिटिया ! यह चाण्डालिन यहाँ मरने को ही आई थी...”

“दाई ! मैं जरा लाल भैया को बुला लाऊँ....”

रेखा लाल के घर आई । दरवाजा खटखटाने पर लाल ने नींद से उठकर खांला ।

“रेखा तू ?...”

“हाँ लाल भैया ! तुमने गोली की आवाज सुनी ?....”

“नहीं तो !...कैसी गाली ?....”

“पिताजी के कमरे में नयना को किसी ने गोली मार दी....”

“किसने मारी गोली ?”—लाल ने साश्चर्य पूछा ।

“तुम्ही ने मारी होगी....शाम को कहते थे न कि अगर नयना ने पिताजी से जरा भी जवान खोली तो....”

“चुप रह रेखा !...तू बार-बार मुझ पर ही शक करती...चल, मैं भी चलता हूँ...”

लाल और रेखा आये तो मिस्टर शर्मा सभी जगह फोन कर चुके थे । लाल का देखकर बोले—“लाल बेटा ! मैं पुलिस को फोन कर चुका हूँ । तुम जाओ नहीं तो तुम्हें भी परेशान होना पड़ेगा...”

लाल नयना को थोड़ी देर तक देखकर चला गया ।

आधे घण्टे बाद ही स्वयं कलेक्टर साहब आ पहुँचे । पुलिस की गारद भी आई । चारों ओर दौड़-धूप शुरू हो गई ।

पहलेवाले कलेक्टर की बदली हो गई थी और अब एक खूँखार अंग्रेज कलेक्टर के पद पर था । वह हर हिन्दुस्तानी को सन्देह की दृष्टि से देखता था, इसीलिये सरकार ने उसे यहाँ भेजा भी था ।

कलेक्टर ने मिस्टर शर्मा रेखा तथा दाई से अनेक प्रश्न किये । मिस्टर शर्मा उस भयङ्कर अंग्रेज की आँखों में खटकने के डर से नयना का वास्तविक भेद छिपा गये । नयना दाई की भतीजी ही

प्रमाणित हुई। खूनी क्रान्तिकारी दलवाले ही ठहराये गये। निश्चित यही हुआ कि हत्याकारी मिस्टर शर्मा की हत्या करना चाहता था, परन्तु भूल से गोली नयना को जा लगी।

अँग्रेज कलेक्टर तो यह चाहता था कि मिस्टर शर्मा के घर की तलाशी ले, मगर मिस्टर शर्मा भी तो ऊँचे अफसर थे। उनकी तलाशी लेने के पहले कलेक्टर को खूब सोच लेना था।

अन्त में उसने तलाशी लेने का विचार स्थगित कर दिया।

पिछले हफ्ते जब यह अँग्रेज कलेक्टर यहाँ आया था तो उसने सभी स्थानीय अफसरों एवं कर्मचारियों का रेकार्ड ध्यानपूर्वक देखा था। मिस्टर शर्मा बहुत दिनों से सरकारी पद पर थे और सदैव अपने उत्कृष्ट कार्य के लिए पुरस्कृत किये गये थे।

पूछताछ खतम हुई तो कलेक्टर चला गया।

दूसरे दिन नयना का दाह-संस्कार किया गया। अर्थी के साथ लाल और रेखा भी थे, मगर उन दोनों ने ही अर्थी को कन्धा न लगाया।

दोपहर को लाल नयना के दाह-संस्कार से लौटा। उसका शरीर न जाने क्यों थका-थका सा लग रहा था। उसे आज रात-अपने जीवन की सबसे महान् और महत्वपूर्ण खतरनाक परीक्षा देनी है। सफलता के विषय में लाल का विश्वास अडिग है, परन्तु प्रस्थान करने के पहले वह एक बार सरदार से मिलकर नवीन समाचार जान लेना चाहता है।

हो सकता है सरदार आये रहे हों, और उसे न पाकर लौट गये हों, लाल को वह कितना लापरवाह समझते होंगे !

फिर भी यदि कोई आवश्यक कार्य हुआ तो सरदार अवश्य आयेंगे ।

लाल तैयारी करने लगा ।

बड़ा-सा शीशा उसने हटा दिया था । और अब उसकी गुप्त एवं भयानक वस्तुयें उसके स्नानागार की दीवार के एक गुप्त आलमारी में थीं ।

लाल ने आलमारी खोलकर अपने रिवाजवर साफ़ किये और कारतूसों की पेटी दुरुस्त की ।

शाम होते-होते उसने अपनी सारी तैयारी पूरी कर ली ।

मगर सरदार नहीं आया ।

आई भी तो रेखा ।

पहले से भी गम्भीर-गहन मुख लिये ।

“क्या कर रहे थे लाल भैया ?....”

“कुछ तो नहीं....”

“तीन बार आकर लौट गई, हर बार दरवाजा भीतर से बन्द !....”

“तूने पुकारा क्यों नहीं ?”

“सोचा जरूरी काम में बाधा क्यों डालूँ.... एक बाधा को तो तुम अपने रास्ते से दूर करके चिता पर रख आये... मैं बची हूँ सो सावधान रहा करती हूँ... कौन-सी पहेली सुलझा रहे थे लाल भैया, दरवाजा बन्द करके ?”

“तेरा सर सुलझा रहा था....”

“मेरा सर तो तुम हमेशा सुलझाया करते हो लाल भैया ! अभी उस दिन मैं चीखकर गिर न पड़ी होती तो तुम्हारी गोली ने मेरा सर सुलझा ही दिया था... नयन बेचारी बेखबर थी । सुलझकर भी उलझती ही चली गई । तुम्हारा निशाना दूसरों के लिये बड़ा

पका है लाल भैया ! एक रेखा ही तुम्हारे निशाने को बेनिशान कर देती है....’

“धर आ रेखा !...” लाल ने बुलाया ।

“पास ही तो हूँ, बोलो न !”

“आकर मेरे कलेजे से लग जा....” लाल का स्वर कुछ व्यग्र हो चला था ।

“लौ लग गई, अब तो खुश”—रेखा दौड़कर लाल के शरीर से लिपट गई—“आज तुम बहुत पीले-पीले से नजर आ रहे हो लाल भैया ! बात क्या है ? नयना ने जान दे दी मगर तुम्हारा पीछा नहीं छोड़ा, क्यों ?....चुड़ैल कहते थे न उसे ?”

“माँ मर गई हैं रेखा !....आज घर जा रहा हूँ...”

“कब ?....कब जा रहे हो लाल भैया ?”

“एक घण्टे के बाद ही...”

“चल दोगे ?...यहाँ दिल नहीं लगता क्या ?....”

“लगता है रेखा !...मगर माँ के मरने पर गाँव भी तो जाना जरूरी है । वे लोग क्या कहेंगे ?”

“लौटोगे तो जल्दी ही ?”

“शायद लौटूँ, शायद न लौट सकूँ ?...दिमाग पागल हो रहा है रेखा ! माँ के मरने पर कौन बेटा स्थिर रह सकता है ?”

“मुझसे तुम छिप नहीं सकते लाल भैया !...रेखा की सावधानी अब बड़ी सजग हो चुकी है....धोखा नहीं खा सकती मैं...तुनिया चाहे माँ के मरने पर पागल हो जाय, मगर तुम जिस माँ के पीछे पागल हो, उसे रेखा जानती है, केवल देख नहीं सकती है उसे...”

लाल के शरीर से लगी-लगी रेखा आँसू बहाने लगी । सर नीचा था, सो लाल देख न सका ।

“लाल भैया ! तुम कहीं भी जाओ, रेखा के लिये अपनी जान

सुरक्षित लेकर लौटना...कहीं तुम्हारी जान की जरूरत हो तो रेखा की जान भी अपने साथ लिये चलना....”

“कैसी बातें करती हैं तू रेखा ?...मुझे पागल कर देगी तो मैं लौटूँगा भी नहीं....”

“तुम लौटो, चाहें न लौटो लाल भैया !...रेखा की जान अगर तड़प कर निकली तो सीधे वहीं आयेगी तुम्हारे पास.... रेखा को छोड़कर तुम जाने न पाओगे....चले गये तो तुम्हें पा ही लेगी कहीं न कहीं...”

“मैं जा ही कहाँ रहा हूँ पगली !...दो-चार दिन के लिये गाँव भी नहीं जाने देगी मुझे ?”

“मुझ पर तुम कब विश्वास करोगे लाल भैया !...अब भी तो कर लो....रेखा के पैर जब तुम्हारे पैरों से मिलकर चलेंगे तो देख लेना जमीन की छाती दहल जायगी....तुम गाँव जा रहे हो तो मुझे वहीं ले चलो....गाँव के लोग मुझे देखकर खुश नहीं होंगे क्या....?”

“मैं तुम्हें नहीं ले जा सकता !...जिद मत कर....”

“मैं तुम्हें नहीं जाने दूँगी...लाल भैया ! तुम रेखा को छोड़कर भाग रहे हो....नहीं जाने दूँगी....नहीं, नहीं, नहीं !...” रेखा लाल का पैर पकड़ कर लटक गई ।

लाल ने छुड़ाना चाहा, मगर पाँवों की बेड़ी न छूटी ।

लाल ने घड़ी देखी । प्रस्थान करने में केवल एक घण्टे की देर थी । वहाँ पहुँचते-चहुँचते उसे रात के दो अवश्य बज जायँगे । वह व्यग्र हो उठा ।

“रेखा ! मेरा पैर छोड़ दे...”

“नहीं छोड़ूँगी लाल भैया ! जाना चाहो तो ठुकरा कर चले जाओ....”

“छोड़ रेखा ! मुझे बहुत जरूरी काम है....देर होने से बहुत नुकसान हो जायगा....”

“मुझे न छोड़ो लाल भैया ! रेखा का मोह मत तोड़ो...”

“रेखा ! कर्त्तव्य के आगे मुझे मोह की चिन्ता नहीं”—लाल कंठार हो गया था—“नयना हो या रेखा, मेरे कर्त्तव्य-पथ पर जो भी अड़ेगी, उसे दूर कर दूँगा...छाड़ दे मेरा पैर...छाड़ दे रेखा !....”

“नहीं छाडूँगी लाल भैया !...”

“नहीं छोड़ेगी ?...”

“नहीं !...”

“तो ले, तू भी जा....”

कहकर लाल ने रेखा की छाती पर कस कर लात जमा दी ।

रेखा दूर छटक गई । मुँह से चीखी नहीं, चाँट खाकर भी उठ खड़ी हुई वह ।

बोली—“लात की एक चाँट मोह की डोरी नहीं तोड़ सकती लाल भैया !...”

“चली जा यहाँ से नहीं तो...” लाल का रिवाल्वर निकल आया था । वह पूरे आवेश में था ।

“नहीं तो गोली चला दोगे...नयना मत समझना मुझे लाल भैया !...मैं रेखा हूँ और रेखा पर तुम्हारी गोली असर नहीं करेगी...दूर करना चाहो तो दो-चार लात और जमा दो ।”

“नीच कहीं की !...”

दौड़कर लाल ने रेखा को पकड़ लिया और कसकर कई तमाचे जड़ दिये, फिर उसे घसीटता हुआ ले जाकर बाहर ढकेल आया । भीतर से दरवाजा बन्द कर लिया उसने ।

दस बजे रात लाल पूर्ण रूप से तैयार होकर बाहर निकला । उसने ग्रेट कोट पहन लिया था । कोट के नीचे चुस्त काला लबादा

था, कमर की पेटी में दो रिवाल्वर थे और कन्धों पर कारतूसों की पेटी। काली नक्काब कोट की जेब में थी।

उसे देखकर किसी का भी यह सन्देह नहीं हो सकता था कि इस ग्रेट कोट के नीचे इतनी भयंकर वस्तुयें छिपी हैं।

लाल अन्धकार में तेज़ी से पैदल ही बढ़ चला। कई मील का रास्ता उसे तय करना था और ठीक दस बजे रात उसे अपनी मंजिल पर पहुँच जाना था !

बढ़ा जा रहा था लाल।

उसे खबर न थी कि उसके पीछे-पीछे कुछ दूर पर एक काली शक्ति भी उसका पीछा कर रही है।

X

X

X

ऑग्रेज कलकटर का बँगला।

रात के दस बजे हैं। जब से यह कलकटर ब्राउन आया है, तब से बँगले के चारों ओर कड़ा पहरा पड़ने लगा है।

ब्राउन के कमरे में इस समय कई बड़े-बड़े अफसर मौजूद हैं। गुप्त मंत्रणा हो रही है।

“मिस्टर शर्मा अभी तक नहीं आये?...पता नहीं क्या करने लगे ?” ब्राउन ने कहा।

“घर पर ही तो थे”—एक अफसर बोला—“फ़ोन पर बोले कि अभी आता हूँ....”

“आज वे दाह-संस्कार में फँसे थे....थक गये होंगे...आ ही रहे होंगे...” दूसरे अफसर ने कहा।

“इतनी देर मैं बरदाश्त नहीं कर सकता”—ब्राउन ने कहा—“मैं स्वयं फोन करता हूँ....”

लपक कर ब्राउन दूसरे कमरे में चला गया।

तब तक मिस्टर शर्मा ने पूरी वर्दी में प्रवेश किया।

“आ गये आप...डी० एम० साहब अभी आपको याद करने फोन पर गये हैं”—कई अफसरों ने एक साथ कहा।

“भाऊ करें...मुझे देर हाँ गई....”

तभी तमतमाया चेहरा लेकर ब्राउन लौटा। मिस्टर शर्मा का देखकर उबल पड़ा—“कहाँ रह गये थे आप?...आपने क्या बिल्लियाँ भी पाल रखी हैं, जहाँ फान रिसीव करतो हैं। फान किया तो आवाज आई ‘म्याऊँ’ बात क्या है?”

“भाऊ करें साहब !”—मिस्टर शर्मा ने कड़ा—“दाई उस लड़की की मौत से पागल हो गई है और सुबह से ही बिल्लियों की बोली बोल रही है....रेखा भी नहीं रही हाँगी शायद....”

ब्राउन बैठ गया। मिस्टर शर्मा भी बैठे।

“अब काम की बातें हों” ब्राउन ने कहा—“मिस्टर शर्मा! आज ३ अप मे सरकारी खजाना कैपिटल जा रहा है....याद है आपको?...”

“जी हाँ !...”

“मैं इतने अफसरों से राय कर चुका हूँ...समय बहुत कम है....आपको थोड़े में सभी बातें बताता हूँ...हमारे जासूस खबर लाये हैं कि बागी लोग वह खजाना लूट लेना चाहते हैं। मुझे यह खबर दोपहर को ही मिल चुकी थी। मैंने फोन से सब इन्तजाम कर लिया है। ३ अप मेन-लाइन से न जाकर अब लूप-लाइन से कैपिटल पहुँचेगी। ट्रेन पर पहरों का इन्तजाम बहुत बढ़ा दिया गया है। वह खतरे से बाहर है....बागी ठीक समय पर वहाँ पहुँचेंगे, जहाँ ट्रेन गुजरनेवाली थी। हम उन पर धावा बोलना चाहते हैं। समय बहुत कम है। इसे हाथ से न जाने देना चाहिये।”

मिस्टर शर्मा समझ गये कि ब्राउन को उन पर सन्देह हुआ है, तभी उसने बागियों के इस इरादे की खबर पहले उन्हें नहीं बताई।

“मैं तैयार हूँ साहब ! आप हुक्म दें....” वे बोले।

“आप पुलिस की पूरी ताकत साथ लें और धावे के लिये अभी तैयार हो जाँय...मैं भी चलूँगा साथ में....” ब्राउन ने कहा ।

अब मिस्टर शर्मा को ब्राउन के सन्देश का पक्का विश्वास हो गया ।  
पर वे कर ही क्या सकते थे ?

वफादार सरकारी नौकर अपनी मानहानि नहीं देखता, अपने कर्तव्य का पालन करता है । वे बोले—“मैं अभी फोन से सारा प्रबन्ध कर देता हूँ । मैं भी पूरा तैयार होकर ही चला हूँ ।”

×                      ×                      ×                      ×

रेल की सामनान्तर रेखायें दूर तक चली गई हैं ।

क्रासिंग के एक फर्लाङ्ग दूर घनी-घनी भाड़ियों के बीच पचास नकाबपोशों का गिरोह खड़ा है, चुपचाप गतिहीन ।

लाल सबसे आगे है । उस गिरोह का सरदार है वह । उसी की आज्ञा पर इतने बहादुरों का कार्य आधारित है ।

“नम्बर ३५ !—” लाल ने पुकारा ।

एक नकाबपोश आगे बढ़कर बोला—“जी !...”

लाल ने अपनी घड़ी देखी । कहा उसने—“पन्द्रह मिनट और हैं । सबको होशियार कर दो....तुम तीन चार आदमियों के साथ पटरियों के बोल्ड निकाल डालो और लाइन अलग कर दो....”

“बहुत अच्छा !....”

धीरे-धीरे चार नकाबपोश रिंच तथा अन्य औजार लेकर रेलवे लाइन की ओर बढ़े ।

तेज हाथों ने अपना काम प्रारम्भ कर दिया ।

तभी—धाँय ! दुम्म ! धाँय !

नीरव वातावरण को चीरता हुआ कई रायफलों का स्वर गरज उठा । रेलवे लाइन उखाड़ने वाले नकाबपोश वहीं लोट पड़े ।

“खतरा !...” लाल चिल्लाया—“सब लोग छिप जाओ.... सावधान रहो....”

पलक मारते भर में सभी नकाबपोश तितर-बितर होकर पास की भाड़ियों में छिप गये। लाल भी एक भाड़ी की ओट में आ गया।

रेलवे लाइन के उस पार से फिर आवाज आई—धौंय ! दुम्म ! धौंय !

नकाबपोशों में से कई एक चीख पड़े।

लाल चिल्लाया—“डटे रहो....फायर !....३ अप आती ही होगी....हाथ से निकल न जाय...”

नकाबपोशों की तरफ से भी गोलियों की बौछार दगी।

प्रति द्वन्द्वियों ने भी उत्तर दिया।

दोनों ओर से चीख-चिल्लाहट मच गई। गोलियाँ बराबर चलती रही। घमासान युद्ध प्रारम्भ हो गया। दोनों ओर से गोली-बाज अपने रिवाल्वर और रायफलों की कला दिखाने लगे।

लाल हैरान था, अपने ऊपर किये गये इस अचानक आक्रमण से, आक्रमणकारी पुलिस ही होंगी। उन्हें कैसे पता चला इस ईरादे का ?

गोलियाँ बराबर चल रही थीं।

लाल ने घड़ी देखी। ट्रेन आने में केवल दो मिनट रह गये थे। वह बेचैन हो उठा। यदि लड़ाई इसी प्रकार जारी रही, तो वह सरकारी खजाने पर कैसे अधिकार कर सकेगा ?

बेचारे लाल को क्या मालूम कि ट्रेन ने रास्ता बदल दिया है और नकाबपोशों से चौगुनी संख्या में सशस्त्र-पुलिस मिस्टर शर्मा और ब्राउन के साथ मोर्चे पर डटी है।

लाल के रिवाल्वर उसके दोनों हाथों में तैयार थे।

दो मिनट भी बीत चले। ट्रेन नहीं आई। लाल हैरान हो उठा।

तभी लाल के कंधे पर किसी ने धीरे से हाथ रख दिया। लाल चौंक पड़ा। घूमकर देखा, तो अपने ही दल का एक नकाबपोश।

“क्या है ?....” लाल ने पूछा।

“कुछ तो नहीं”—नकाबपोश ने कहा ।

स्वर मुनकर लाल आस्मान से गिरा । यह किसका स्वर सुन रहा है वह ?

“क्या करने आये हो ?”—लाल ने फिर पूछा ।

“तुम्हारा साथ देने....” बाला नकाबपोश ।

गोनियाँ तेजी के साथ चल रही थीं । अन्धकार का शान्त वातावरण भयानक आवाजों से प्रकम्पित हो रहा था ।

लाल ने आवाज पहचान ली । लपककर उसने उस नकाबपोश को सीने से लगा लिया, बाला—“मेरी रेखा ! तुम यहाँ कैसे?...”

“लात मारकर भाग आये थे लाल भैया ! तुम्हारे पीछे-पीछे पैर सहलाने आ गई ! चाँट तो लगी ही हाँगी तुम्हें....”

“रेखा !...तुम भागो यहाँ से....मेरी रेखा !...तुम भाग जाओ...हम पुलिस के फन्दे में आ पड़े हैं....तुम्हारा यहाँ रहना ठीक नहीं....”

“रेखा अब टल नहीं सकती लाल भैया !...बहुत दिनों तक ठुकराते आये थे....आज नहीं ठुकरा सकोगे....अब तो रेखा के पैर तुम्हारे साथ मिलकर ही आगे बढ़ेंगे...बहुत भागते थे, अब भाग कर नहीं जा सकोगे....रेखा ने अपना मार्ग खुद बनाया है....”

“रेखा ! हमारे आदमी अब शिथिल पड़ रहे हैं....” लाल ने रेखा को छाँड़ते हुए कहा ।

“मैं देख रही हूँ लाल भैया !....”

“तुम भागो यहाँ से...रेखा ! मेरे लिये तुम भागो...”

“तुम्हारे ही लिये तो इतनी दूर से भाग कर आई हूँ....अब कहाँ भाग रहे हो लाल भैया !...”

घाँय !

एक पुलिस कुछ नजदीक आ गया था, जिसे रेखा ने धरा-शायी कर दिया ।

“रेखा !...तुम्हारे पास रिवाल्वर भी है ?”—लाल चकित था।

“हाँ ! लाल भैया ! एक खिलौना समझो !...”

“तुम्हारा निशाना सध चुका है ?...”

“तुमसे कुछ ज्यादा ही...तुम्हारा निशाना कभी-कभी चूक भी जाता है लाल भैया !...मगर रेखा का सच्चा निशाना तो तुम कई बार देख चुके हो...”

“कई बार ?....आज ही तो देखा है...”

“भूट न बालो लाल भैया ! ....जज माहव की खांपड़ी पर मेरा निशाना कितना अच्छा बैठा था !”

“तुम्हीं थी वह ?”—लाल हैरत था !

“तुम्हारा काम मैंने पूरा कर दिया था न ?....और नयना तो दो ही गोली खाकर ऐसी हो गई कि साँस भी न ले सकी।”

“नयना को तुमने....तुमने रेखा....”

“हाँ लाल भैया ! वह चुड़ैल ही थी...तुम ठीक कहते थे.... और अपने मस्तक की चाँट तो तुम भूले ही जा रहे हो....मैंने ही वह पीली फाइल ले जाकर तुम्हारे सरदार को भिक्षा के रूप में दी थी....”

“रेखा !...क्या हो तुम ?...”

“अब भी नहीं समझे तुम लाल भैया ! इतनी परीक्षा देकर भी रेखा तुम्हारे इम्तहान में फेल ही रही ?...”

“मेरी रेखा !....मेरी बच्ची ! तू रणचण्डी है....”

“इस उपाधि से मैं बहुत खुश हूँ लाल भैया !...तुमने मुझे अपने योग्य समझा, यह दुनियाँ में मेरे लिये सबसे बड़ा वरदान है।

तभी पीछे से भी रायफ़्लें गरज उठी।

लाल चौंककर बोला—“पुलिस हमें घेरकर आगे बढ़ रही है...रेखा ! हम जल्द ही पुलिस के पंजे में घिर जायेंगे...हमारा दाँव उल्टा पड़ा है...तुम चली जाओ यहाँ से...”

“यह अधिकार अब मत छीनो लाल भैया !....तुम्हारी शरण में आ गई हूँ, तो लौट न सकूँगी अब...भाग भी चली, तो पुलिस घेर लेगी...”

रायफले अब अगले-अगले से भी चलने लगी थीं ।

क्रान्तिकारी चारों ओर से घिर गये थे । पुलिस का दल घेरा बनाकर धीरे-धीरे पास आता जा रहा था ।

नकाबपोश भी प्राणपण से युद्ध में संलग्न थे, परन्तु उनका वेग क्रमशः कम होता जा रहा था । पुलिस की रायफलों के आगे नकाबपोशों के रिवाल्वर कमजोर पड़ते जा रहे थे ।

“उक रेखा ! तुमने यह क्या किया ?”—लाल व्यग्र स्वर में बोला—“तुम यहाँ क्यों आई ?....अब मरने या पुलिस के हाथों पड़ने के सिवा और कोई चारा नहीं—”

“रेखा इतनी कमजोर नहीं लाल भैया कि तुम्हारे साथ मर भी न सके...”

उसी समय पुलिस के दल पर लाल की दृष्टि पड़ी ।

“रेखा ! रिवाल्वर तैयार कर रखो...वे लोग पास आते जा रहे हैं...”

“मैं तैयार हूँ लाल भैया !....”

धौंय ! धौंय !

लाल और रेखा के रिवाल्वर गरज उठे । किसी का भी निशाना खाली न गया ।

“रेखा ! उन लोगों को तुम रोको...मैं दूसरी तरफ....”

धौंय ! धौंय ! धौंय !....

उस भाड़ी से गोलियों की बौछार छूटने लगी । उस ओर बढ़ता हुआ पुलिस का दल रुक गया । उन्होंने भी उसी भाड़ी को लक्ष्य करके रायफले दागनी शुरू कर दी ।

“रेखा तुम मेरे पीछे हो जाओ...”

“रेखा तो लाल भैया के आगे ही रहेगी....” रेखा ने कहा ।

“शैतान लड़की ! मैं इस दल का सरदार हूँ....आज्ञा मान, नहीं तो उड़ा दूँगा गोली से...हाँ, अब ठीक है....मेरे ठीक पीछे रह.... छिपकर रह....मेरे घर के ऊपर से अपना रिवाल्वर चला...

धॉय ! धॉय !

दुम्म ! धॉय !

जान हथेली पर लेकर खड़े हुए लाल-रेखा की मार से पुलिस भी घबड़ा उठी । पुलिस के जवान एक के बाद एक गिरते जा रहे थे । उनका निशाना इतना अच्छूक बैठता था कि पुलिस वाले हाहाकार कर उठते थे ।

पुलिस का नया दल मोर्चे पर आ डटा ।

दुम्म !

रायफलों का नई बाढ़ दर्गा पूरे वेग के साथ ।

क्रान्तिकारियों का दल क्षीण हो चला था । कहीं-कहीं से रिवाल्वर की आवाज गरज उठती थी ।

पुलिससमझ गई कि अब शत्रुओं का संख्या क्षीण हो चली है ।

ब्राउन और मिस्टर शर्मा भी लाल-रेखा के मोर्चे पर डटे थे ।

पुलिस की लगभग सारी शक्ति उसके विरुद्ध एकत्र हो चुकी थी ।

फिर लाल और रेखा की फायर इतने तीव्र थे कि पुलिस को कुछ दूर पीछे हटकर पत्थरों की ओट शरण लेनी पड़ी ।

“रेखा !....”

“लाल भैया !....”

“हमारे दल वालों के रिवाल्वर सुनाई नहीं पड़ते....सभी काम आये....केवल हम दो ही बच रहे हैं”—

“हाँ लाल भैया !...”

रेखा लाल के शरीर की ओट में थी । फायर के साथ-साथ बातें भी हो रही थीं ।

तभी एक गोली लाल के हाथ में आ घुसी। वह कुछ लड़-  
खड़ाया, फिर सम्हल गया।

धौंय !....धौंय !

दुम्म !....दुम्म !

“रेखा....”

“लाल भैया...”

“अब कोई उम्मीद नहीं. मरने के लिए तू तैयार है न !...”

“हाँ लाल भैया !....” रेखा की आवाज टूट थी।

“हमारे शरीर पुलिस के हाथ जीवित न पड़ें....राक दे अपना हाथ...आ मिल ले आगिरी बार !...”

रेखा निकट आ गई। दोनों गले मिले। लाल ने रेखा का मस्तक चूमा।

“लाल भैया तुम्हारी आवाज रो रही है....यह भी क्या राने का वक्त है ?”

“नहीं रेखा !...मगर तू रणचंडा है, कालिका है...तुझे समझ नहीं सका था अब तक...मुझे क्षमा कर दे रेखा ? ..”

“लाल भैया ! इस जन्म में तुम्हारा बहुत थोड़ा-सा साथ दे सकी...अगले जन्म में तुम्हारी सगी बहन होकर आऊँ, तब समझूँगी कि मेरा त्याग सफल हुआ....”

दोनों फिर एकबार गले मिले।

इनके रिवाल्वरों की बौछार बन्द होते ही, पुलिस ने दो-चार बाढ़ और दागे, फिर ब्राउन और मिस्टर शर्मा ने आगे बढ़ने की आज्ञा दी—“दौड़कर पकड़ो...भाग न सकें...”

“एक बात कहनी है लाल भैया !....कान में कहूँगी...”

रेखा ने लाल के कानों में कुछ कहा। लाल चौंक पड़ा—“मुझे स्वप्न में भी विश्वास नहीं था कि....रेखा ! सावधान ! पुलिस पास

आ गई....अपना रिवाल्वर मेरी ओर करो...तुम मुझे गोली मारोगी और मैं तुम्हें....निशाना न चूके....”

“तुम अपने निशाने का खयाल रखना लाल भैया !....अच्छा विदा !....”

“विदा रेखा !....मेरी जीवन-रेखा ! विदा ?....”

पुलिस का दल पास आ गया था । उन लोगों ने इन दोनों को देख लिया था । वे पूरी तेज़ी के साथ दौड़े आ रहे थे ।

लाल और रेखा एक दूसरे से दो कदम का दूरी पर खड़े हो गये । दोनों के रिवाल्वर एक दूसरे के निशाने पर तैयार हुए ।

“रेखा ! फायर !...”

धॉय ! धॉय !

रेखा की गोली सटीक बैठी । लाल कटी डाल-सा जमान पर गिर पड़ा ।

भगर लाल की गोली ?....

रेखा ज्यों की त्यों खड़ी रह गई थी ।

वह चिल्लाई—“लाल भैया !...मुझे गोली नहीं लगी...निशाना चूक गया तुम्हारा...मुझसे दगा न करो लाल भैया ! मुझे अपने हाथों से मारो....रेखा पर तुम्हारा निशाना ठीक न लगा....”

लाल के काँपते हाथ हिले । रेखा ने रिवाल्वर पकड़ा दी, परन्तु लाल चिर-निन्द्रा में लीन हो चुका था ।

“दगाबाज निकले तुम लाल भैया !...”

रेखा ने अपना रिवाल्वर अपने सीने पर रखा—

तभी किसी ने उसका हाथ मजबूती के साथ पकड़ लिया ।

ये मिस्टर शर्मा थे । रेखा आत्महत्या न कर सकी ।

मिस्टर ब्राउन की टार्च की रोशनी में मिस्टर शर्मा ने रेखा का मुख देखा । उसकी नकाब पीछे को उल्टी हुई थी ।

रेखा का देखकर मिस्टर शर्मा का शरीर काँपा, दूसरे ही क्षण उन्होंने आज्ञा दी—“इसे कैद करो...”

रेखा कैद कर ली गई।

“यह लड़की कौन है ?....” ब्राउन बोला।

“मेरी है सर !...” मिस्टर शर्मा दौत पोसकर बोले—“मेरे नाम पर कलंक लगानेवाली, बागियों का साथ देनेवाली यह दगा-बाज लड़की मेरी है...इसे अभी उड़ा दो गोली से...”

ब्राउन मिस्टर शर्मा का साहस देखकर दंग रह गया।

वह बोला—“ठहरो !....इसे कैद में रखा जाय...इससे बहुत कुछ पता लगेगा....मिस्टर शर्मा ! मुझे बहुत अफसोस है कि आपकी लड़की को कैद किया जा रहा है....मगर हम मजबूर हैं...”

“मैं खुद शर्मिन्दा हूँ सर ! इस तालायक लड़की ने मेरे कई पुश्तों की वफादारी पर पानी फेर दिया....इसे कैद में रखें....मैं स्वयं इसे तड़पा-तड़पाकर इसकी ज़बान खुलवाऊँगा....इसे अपने हाथ से गोली मारूँगा....तभी मुझे आराम मिलेगा।”

“आम शान्त हों मिस्टर शर्मा !....” ब्राउन ने कहा—“आपके घर की तलाशी लेने पर मैं मजबूर हूँ। आप बुरा न मानें...हम लोग चारों तरफ से कानून की बन्दिश में हैं....”

“आप तलाशी ले सकते हैं....अभी चलकर....”

मिस्टर शर्मा हाथ मल रहे थे !

और रेखा चुपचाप खड़ी थी, सर नीचा किये हुए।

रेखा जेल भेज दी गई। लाल की लाश पुलिस उठा ले गई।

और ब्राउन ने उसी रात कुछ अफसरों के साथ मिस्टर शर्मा के घर की तलाशी ली। कुछ हाथ न लगा।

चलते-चलते ब्राउन बोला—“मिस्टर शर्मा, हमें आपकी वफादारी पर तनिक भी सन्देह नहीं, मगर कानून की पाबन्दी तो जरूरी है....आप कल सबेरे आठ बजे मुझसे जेल पर मिलें...”

“बहुत अच्छा !....”

जेल की एक सुनसान कोठरी में रेखा बन्द थी। बाहर काफ़ी पहरा था।

रेखा की आँखें बह रही थीं, अपनी दुर्दशा पर नहीं लाल की बेवफ़ाई पर।

कह रही थी वह धीरे-धीरे—“लाल भैया ! तुम बड़े बेवफ़ा निकले। खुद निकल भागे, रेखा को अकेली छोड़कर...तुम सच ही कहते थे कि मैं तुम्हारा साथ कभी नहीं दे सकता....मेरे निशाने की तुम तारीफ़ करते थे...मेरी गाली ने तुम्हारी जान ले ली....तुम पुराने निशानेवाज थे, मगर तुम्हारी गाली ने मेरा बदन भा न छुआ....रेखा के लिये तुम्हारा हर निशाना असफल हुआ लाल भैया !...रेखा को तुम मरते दम तक भी न मार सके...रेखा के प्रति इतना प्यार, इतना ममत्व क्यों था तुम्हारे हृदय में ?....”

कोठरी का फाटक खुला।

रेखा ने ब्राउन को देखा। और उसके पीछे अपने पिता को देखकर उसने सर झुका लिया।

वार्डरों ने कुर्सियाँ ला दी। ब्राउन और मिस्टर शर्मा बैठे।

रेखा ने लक्ष्य किया—सरकार के परम भक्त उसके पिता का मुख ज्यों का त्यों है। रेखा के लिये उस मुख पर अफसोस की छाया तक नहीं।

“इसके हाथ पैर बाँध दो”—मिस्टर शर्मा ने ही आज्ञा दी।

वार्डरों ने आज्ञा पालन किया।

“देख लड़की !”—मिस्टर शर्मा बोले—“तू बागियों के बारे में जो कुछ जानती है, बता दे वर्ना नतीजा अभी देख लेगी...”

रेखा चुप रही।

“इसे छत से उल्टा टाँगकर हण्टर मारो....” मिस्टर शर्मा थे, स्वर बेहद कड़ा था।

हण्टर बरसने लगे । उल्टी टँगी हुई रेखा की जवान तक न हिली । जहाँ-जहाँ हण्टर पड़ा, वहाँ की खाल से खून भाँकने लगा ।

“और जोर से !” मिस्टर शर्मा तड़पकर बोले ।

हण्टरों का वेग बढ़ चला ।

रेखा का सर लटक गया । बेहोश हो गई थी वह ।

“बस करो”—इस बार ब्राउन बोला—“इसे उतारकर पानी के छींटे दो...”

छींटों से रेखा थोड़ी देर बाद हाश में आई ।

मिस्टर शर्मा फिर तड़पे—“नालायक लड़की ! कुछ बोलेंगी या नहीं ?....”

रेखा चुप ! जवान बन्द !

“इसके नाखून में कीलें ठोक दो...” उड़लकर बोले मिस्टर शर्मा !

वार्डर दौड़ पड़े । पतली-पतली कीलें एक के बाद एक रेखा के सभी नाखूनों में चुभो दी गई । हाथ-पैरों में कीलों की पीड़ा दाबे रेखा तनिक भी विचलित न हुई ।

“इसके सर में रस्सी बाँध कर ऐंठो !....”

रस्सी की ऐंठन से रेखा का मस्तक शून्य होता गया । हठी लड़की फिर भी चुप ही बनी रही । फिर बेहोश हो गई ।

“रस्सी खोल दो....पानी के छींटे दो....” ब्राउन का स्वर था ।

रेखा हाश में लाई गई ।

“पागल लड़की !”—मिस्टर शर्मा बोले—“अब भी बता दे.... मुँह से बोल दे कुछ....नहीं बोलती ?....वार्डर ! थोड़ी-सी आग और दो सलाखें लाओ....इस कमीनी का अन्धी करके छोड़ूँगा...”

आग आई और सलाखें भी ।

मिस्टर शर्मा अपने हाथ से सलाखें गर्म करने लगे ।

ब्राउन मिस्टर शर्मा की वफादारी पर आश्चर्यचकित था ।

अंग्रेजी सरकार के इतिहास में वह आज पहले वफादार हिन्दुस्तानी का देख रहा था, जिसे अपने कर्तव्य के लिये बेटी का मांह छूतक नहीं गया था।

बोला ब्राउन रेखा से—“हठ न कर लड़की ! बना दे, तो छांड़ दी जायगी....”

इस बार रेखा की ज़बान हिली—“तुम चुप रहो मिस्टर ब्राउन ! अपने कर्मचारी की वफादारी देखते चला...”

मुनकर मिस्टर शर्मा का चेहरा क्रोध से लाल हा उठा।

वें उठे। उनके दोनों हाथों में सलाखें थीं, लाल !

वे बढ़े रेखा की ओर।

“कुछ बताती है या नहीं ?....”

रेखा ने सर उठाकर पिता की ओर देखा। देखनी रही। गर्म सलाखें धीरे-धीरे बढ़ी आ रही थीं।

“बोलती है या नहीं...”

रेखा एकटक देख रही थी अपने पिता को।

मिस्टर शर्मा के हाथ हिले, सलाखें आगे बढ़ीं, रेखा के नयन-कोटरों से धुँआ निकला, फिर रक्त की धार बह चली।

सलाखें अपना कार्य करके वापस लौट गईं।

रेखा की खुली आँखें बन्द हो गईं, मगर बन्द ज़बान खुली नहीं।

“मिस्टर शर्मा !”—ब्राउन हताश स्वर में बोला—“यह लड़की कुछ नहीं बतायेगी। माथा-पच्ची बेकार है। इसे दौरा सुपुर्द किया जाय...”

“जो हुक्म !....”

रेखा पर मुकदमा चला। जुर्म साबित था। उसे गोली मार देने की सजा हुई।

मिस्टर शर्मा ने अर्जी दी कि बागी लड़की को गोली मारने की आज्ञा उन्हें दी जाय। अर्जी मंजूर हो गई, साथ ही सरकार

उनकी वफ़ादारी पर इतनी खुश हुई कि उन्हें 'सर' की उपाधि के लिये चुना गया।

X

X

X

जेल व मैदान में अफसरों की भीड़ लगी थी। एक बेंकस बागी लड़की को अपने पिता की गोली से मारा जाना देखने के लिये सभी उत्प्रेक थे।

कुछ दूर पर काठ की एक टिकठी खड़ी की गई थी।

समय हुआ तो रेखा पहरे के अन्दर लाई गई और उस टिकठी से उसके हाथ पैर बाँध दिये गये।

मिस्टर शर्मा हाथ में रिवाल्वर लेकर पचास कदम की दूरी पर जा खड़े हुए।

उनका चेहरा शान्त था ! पूर्ववत् एवं निश्चल।

अन्तिम समय में रेखा ने अपने पिता से मिलने की लालसा प्रकट की। दरखास्त मंजूर कर ली गई।

मिस्टर शर्मा रेखा के सामने था खड़े हुए।

चारों ओर एकान्त था। अफसर दूर पर बैठे हुए थे।

पैरों की आहट सुनकर रेखा ने कहा—“कौन ?...पिताजी....”

“हाँ !....” गम्भीर स्वर में बोले मिस्टर शर्मा।

“आखिरी समय तो बेटी कहकर पुकार लीजिये पिता जी। रेखा नालायक ही सही, मगर आपकी बेटी तो है....मिस्टर शर्मा की दृष्टि में रेखा बागी हो सकती है, मगर भिखारी की दृष्टि में तो रेखा देश-सेविका है महान !....आँखें होनी तो आपको भर आँख देख कर ही जाती पिताजी !...अन्धी हो गई हूँ आपके हाथों तो आपका मस्तक खुजलाना भी नहीं देख सकती....कितनी मजबूरी है...”

“रेखा !...”

“पिता जी आपका मस्तक अब नहीं खुजलाता क्या ?...लाल

भैया के सामने तो भित्तारी वेश में आप हमेशा अपना मस्तक खुल्लाया करते थे ?....बागियों के सरदार ! रेखा से छिप नहीं सकते तुम ! रेखा का विद्रोह अपनी गोली से भले ही शान्त कर दो तुम, मगर अपने अन्तर की विद्रोह भावना कभी शान्त न कर सकोगे....”

“रेखा !...मेरी बच्ची !”—एक क्षण के लिये मिस्टर शर्मा का स्वः लड़खड़ाया—“तूने मुझे कब पहचाना ?”

“शंका थी पिताजी, परन्तु निश्चय तब हुआ जब आपने मिस्टर ब्राउन से नटना का वास्तविक परिचय छिपाकर उसे दाई की भतीजी ही बताया...मिस्टर शर्मा जैसा स्वामिभक्त नौकर वैसा नहीं का सकता था, कभी नहीं....वह बागियों के सरदार का ही काम था और मैंने आपको पहचान लिया।”

“मैं तेरी तरफ से सावधान था रेखा !...तेरे अन्तर का विद्रोह मैं जानता था...लाल ने भी कई बार सिफागिश की तुझे अपने साथ लेने के लिये, मगर मैं मजबूर था...सरकारी नौकरों की आड़ में मैं जो महान कार्य कर रहा हूँ, उसमें लिये मुझे सतर्क रहना आवश्यक था....मगर तू मानी नहीं, आखिर कूद ही पड़ी...अफसरों को संदेह न हो इसलिये मुझे हृदय पर वज्र रखकर सब कुछ करना पड़ा.... मेरी बेटी ! हमारे देश के लिये तुम्हें जैसी हजारों बेटियों के बलिदान की आवश्यकता है....तुम्हें आज अपने हाथों बलिबेदी पर चढ़ा रहा हूँ, यह मेरे लिये गर्व की बात है...”

“आप जैसे त्यागी पुरुष के हाथों मर रही हूँ पिताजी !... ईश्वर करे देश की हर लड़की की मृत्यु ऐसी ही हो...अन्तिम समय लाल भैया से भी मैंने यह कह दिया था...”

तभी समय के समाप्त होने की सूचना प्राप्त हुई।

“जामो बेटी खुश रहो....देश में अगर ऐसी ही बेटियाँ पैदा हों तो देश कभी गुलाम नहीं रह सकता...”

“आपने मेरी आँखें लें लीं पिता जी ! अन्तिम समय में दर्शन

भी नहीं कर सकती....प्रणाम पिताजी ! दूसरे जन्म में लाल जैसा भाई और आप जैसा पिता मुझे फिर मिले ...”

मिस्टर शर्मा हाथ में रिवाल्वर लेकर पुनः अपने स्थान पर आ खड़े हुए ।

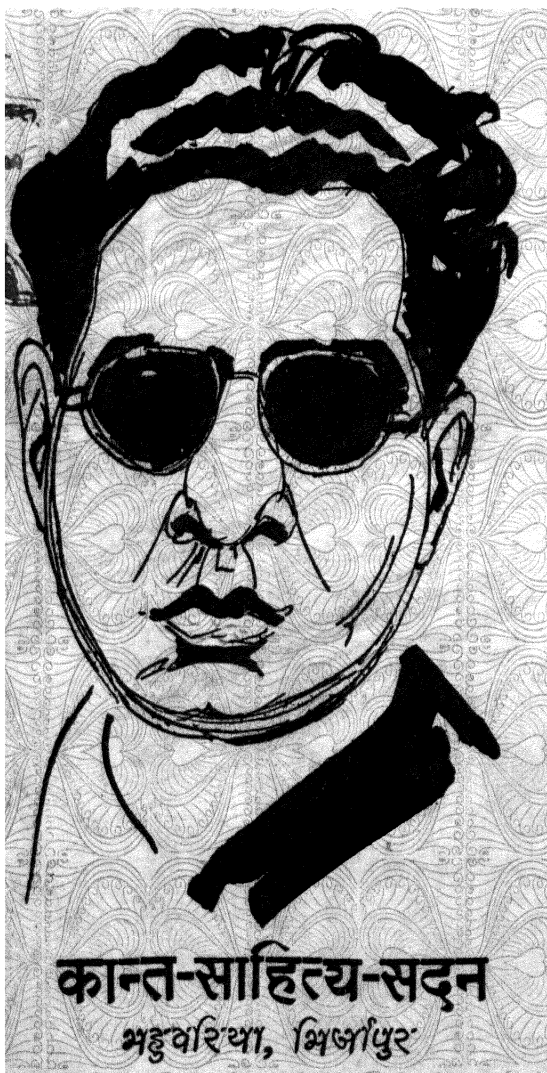
समय हो चुका था ।

ब्राउन खड़ा हुआ—“एक !...दो !...तीन !...”

धाँय ! धाँय !

—बस—





कान्त-साहित्य-सदन

भट्टवरिथा, भिर्जापुर













